ISSN : 2394-3580 Swadeshi Research Foundation Vol. – 6, No. - 7 May 2019
A Monthly Journal of Multidisciplinary
International Peer Refereed, Review, Indexing & Impact factor-4.2 Research Journal

योग द्वारा मानसिक विकार निवृति

डॉ. मनोज कुमार शर्मा
योग विभाग, रवीनद्रनाथ टैगोर वि.वि., जिला रायसेन (म.प्र.)
राहुल पचौरी
पी.एच.डी. स्कॉलर, रवीनद्रनाथ टैगोर वि.वि., जिला रायसेन (म.प्र.)

मन मानव शरीर की एकादश इन्द्रिय है जिसे हम आन्तरिक इन्द्रिय के नाम से भी जानते है। यह अन्तःकरण का एक भाग है यह आत्म तत्व व शरीर के मध्य सेतु का कार्य करता है। दोनों का संतुलन या असंतुलन बनाना ही मुख्य कार्य है। जीव पूर्व जन्म के परिणामों को भोगने के लिये जन्म लेता है। माँ के गर्भ से बाहर आते ही वह कामना करने लगता है वस यही पर विधा तथा अविधा युक्त कामना का उदय होता है। मन एक शक्तिशाली इन्द्रिय होने के साथ ही इसे इन्द्रियों का प्रतिनिधि भी माना गया है। मन ज्ञानेन्द्रियों के माध्यम से ही कर्मेन्द्रियों से भी कार्य संपादित कराता है। इसका मुख्य गुण संकल्प विकल्प अर्थात विमर्श है। शरीर में मन का मुख्य स्थान भ्रू मध्य अर्थात आज्ञाचक्र है। यह इन्द्रियों व अन्तःकरण को जोड़ता है। मानव के चित्त में व्याप्त वासनाऐं है वह मन की प्रेरक हैं चित्त अपने समस्त कार्य मन के द्वारा ही संपादित कराता है। मन गति की माप नहीं है। यह वायु तथा प्रकाश से भी उच्च गति वाला है। मन का स्वभाव हठी, जिद्दी तथा शर्मीला होता है। यह सम्पूर्ण शरीर में व्याप्त रहता है।मन तीन स्तंभो वाला होता है। इसका प्रथम स्तंभ इच्छा व द्वितीय स्तंभ विचारशक्ति है तथा तीसरा स्तंभ अहिंकार है। मन तीनों गुणों से युक्त रहता है लेकिन परिस्थिति अनुसार जिस गुण की प्रधानता होती है उसी के अनुसार भौतिक गुण प्रदर्शित होते है। यथा सतो गुण के उदय काल में शांति, सुख, सदभाव, परोपकार, सतसंग, धर्म, प्रभुनाम स्मर्ण आदि वही यदि तमो गुण का उदय है। तब मोह, अज्ञान, असत्य आचरण, अधर्म, कुमार्ग गमन, दुर्बुद्धि, आलस्य आदि लक्षण शरीर में उत्पन्न हो जाते है। इसी प्रकार रजोगुण के उदय होने पर सभी कार्य राग, द्वैष, स्वार्थ, क्रोध, कामना, आदि अकर्मण्यता दायक है। श्रीकृष्ण ने योग ग्रंथ गीता में 'मन का प्रेरक काम को बताया है और काम की पूर्ति न होने पर क्रोध की उत्पत्ति होती है। काम के अनेक रूप है यथा राग, आशक्ति, तृष्णा, ममता, द्रोह, प्रतिशोध, इनकी उत्पत्ति पर मन इन्ही के सानिध्य में कर्म कराता है। जब कि मन की स्वतंत्र सत्ता नहीं है। यह बुद्धि के अधीन रहता है। इसलिये यह सत्य है कि मानसिक विकारों की जननी प्रज्ञापराध है। कभी–कभी यह मन बुद्धि में मार्ग में काम और क्रोध से बुद्धि के सम्मोह पैदा करता है। जिससे विवेक का नाश हो जाता है। वह स्वभाव से स्वार्थी, चंचल व हठी है। इसलिये मनो विकारों की उत्पत्ति के पहिले ही योग दर्शन मतानुसार इसे ऊँ कार का जप व उसका स्वरूप ध्यान कराया जाय साथ ही बुद्धि को मन का दृष्टा बना दिया जाय तब सफलता मिलेगी क्योंकि मस्तिष्क रूपी कम्प्यूटर का स्विच मन है श्रेष्ठ संस्कारों के संपादन के लिये मन रूपी स्विच को खोल कर आनन्दानुभूति की जानी चाहिए क्योंकि अपनी यात्रा अर्थात स्वाध्याय करने की इच्छा से सप्रभुता प्राप्त होती है । और इसकी जाग्रति पर कुछ भी संभव नहीं रहता क्योंकि प्रभुता ज्ञान और क्रिया की संधि में पाई जाती है। यह प्रभुता जाग्रत चेतना में होती है। पूर्ण चेतना का अभिप्राय ही अनंत ज्ञान और अनंत कृपा है। यह पृथक–पृथक न होकर एक पूर्ण सत्ता है। मन में अशांति का कारण नाशवान वस्तुओं का सहारा लेने से है यथा धन, वैभव, नारी, पुत्र, कीर्ति आदि की प्राप्ति इच्छा से क्लेशों का उदय होता है। जबकि विकारों की इच्छा न रखने वाले मानव को शास्त्र सम्मत ऋतु अनुसार शरीर के दोष, धात, मल की सम अवस्था रखने के लिये शाकाहारी होना चाहिये। अपनी पाचन क्रिया या शारीरिक क्षमतानुसार प्रातः ब्रम्हमुहूर्त में निद्रा को त्यागकर प्रभु स्मरण करते हुये संस्कार विधानुसार जीवन चर्या को प्रारंभ करना चाहिये। साथ ही आश्रम के अनुसार आयु और कर्म को ध्यान में रखते हुये आचरण करना चाहिये श्रेष्ठ आचरण से मन व इन्द्रियों की स्थिति प्रशन्न रहेगी। जीवन में रजोगुण व तमोगुण को कदापि स्थान नहीं देना चाहिये । ये दोनों ही मन स्थिति में दोष उत्पन्न करते है। मन की प्रशन्नता के लिये सांसारिक वस्तुओं के प्रति राग और द्वैष का उदय न हो। तथा प्राणीमात्र के लिये हृदय में दया का भाव स्थिर हो। हमेशा परोपकार की इच्छा क्षमा का भाव, उदारता का गुण रखते हुये यह भाव हृदय में धारण करें कि चेतन

सत्ता ही समस्त विश्व का कारण है। इस चेतन सत्ता को उपनिषद ब्रम्ह कहता है सांख्य पुरूष कहता है कबीर ने राम कहा है इस तत्व के एश्वर्य के कारण इसे ईश्वर कहा गया सभी आत्माओं का श्रोत होने से परमात्मा कहा गया, शैवो ने शिव कहा है। सत्ता उसी की है इसलिये मानसिक विकारों की निवृति के लिये योग को आत्मसात करिये मन में संकल्प साधना की दृणता कर अहिंसा, सत्य, अस्तेय, ब्रम्हचर्य, अपरिग्रह, पवित्रता तन व मन की, संतोष, तप, स्वाध्याय, ईश्वर प्रणिधान, क्योंकि बिना संतोष के कामनाओं का नाश संभव नहीं ओर कामना क्षय के बिना सुख की प्राप्ति नहीं होगी। मन का गहरा संबंध आहार से अर्थात अन्न से है। जिस प्रकार का अन्न ग्रहण किया जायेगा उसी प्रकार के भाव मन में उदय होंगे साथ ही मन का प्राण से गहरा संबंध है। मन प्राण के अनुसार ही संचरण करता है। प्राण के शांत होने पर मन शांत हो जाता है। शास्त्र में मन की तीन अवस्थाएं है चेतन, अर्द्धचेतन, अचेतन, जीवन के सम्पूर्ण कार्य इन अवस्थाओं के अनुसार घटित होते है। चेतन मन का संबंध बाह्यजगत की वास्तविकताओं के साथ सीधा होता है। क्योंकि यह व्यक्तिगत नैतिक, सामाजिक तथा सांस्कृतिक आदर्शों की निधि है। वही अर्धचेतन से अभिप्राय मन की उस अवस्था से है जो न तो चेतन है और न ही अचेतन है। इसमें ऐसे विचार या भाव होते है जो हमारे वर्तमान चेतन या अनुभव में नहीं होते परन्तु अल्प प्रयास से वे हमारे चेतन मन में आ जाते है। इस अवस्था का दूसरा नाम अवचेतन भी है। यह मन का बड़ा भाग है। जो चेतन से बड़ा व अचेतन से छोटा होता है। यह चेतन व अचेतन के मध्य सेतु का कार्य करता है। क्योंकि अचेतन से चेतन में जाने वाला भाव इसी से होकर गुजरता है। अचेतन मन, मन का वह भाग है जो गहरा तथा बड़ा होता है। यह मन का महत्व पूर्णभाग होता है। सामान्य जीवन के लिये प्रकृति की सम अवस्था में जीवन वहन करना होगा क्योंकि योग के बिना जीवन क्लेश युक्त है। ध्यान युक्त जीवन ही सफल है। चित्तवृति निरोध ही सार है।

संदर्भ ग्रंथ :–

- पांतजल योग दर्शन
- श्रीमद्वभगवद्व गीता
- असामान्य मनोविज्ञान

ISSN : 2394-3580 Swadeshi Research Foundation Vol. – 6, No. - 7 May 2019
A Monthly Journal of Multidisciplinary
International Peer Refereed, Review, Indexing & Impact factor-4.2 Research Journal

भिलाला जनजाति की शिक्षित महिलाओं के विवार पर आधुनिकीकरण का प्रभाव

पप्पु रावत
शोधार्थी, पीएच.डी. (समाज शास्त्र), माता जीजाबाई शा. स्नातकोत्तर कन्या स्वशासी,
महाविद्यालय मोती तबेला, इन्दौर, देवी अहिल्या विश्वविद्यालय, इन्दौर

प्रस्तावना :– भारत में स्वतंत्रता के पश्चात सभ्यता आधुनिकीकरण एवं नगरीकरण आधुनिक शिक्षा पद्धति तथा नवीन सामाजिक मूल्यों के विकास के कारण देश में शिक्षित महिलाओं की स्थिति में पुनः बदलाव आया है। आधुनिक युग में विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी के क्षेत्र में युगान्तकारी परिवर्तन हुए हैं। जिसके चलते सामाजिक एवं आर्थिक विकास में भी व्यापक बदलाव आया है, और यह परिवर्तन विश्व स्तर पर आज भी चल रहा है, इसी परिवर्तन को स्पष्ट करने के लिए समाज वैज्ञानिकों ने आधुनिकीकरण जैसे अवधारणा का प्रयोग किया है।

भिलाला पश्चिमी मध्यप्रदेश की भील जनजाति की एक अपेक्षाकृत विकसित उपजनजाति है, जो क्षत्रिय पुरूष व भील स्त्रियों से उत्पन्न हैं। इनके विवाह संस्था पर आधुनिकीकरण के प्रभाव का अध्ययन इस शोध पत्र में प्रस्तुत है।

विवाह – विवाह परिवार व समाज का आधार है, इसके परिवर्तन समस्त समाज को प्रभावित करते हैं। भिलाला जनजाति में आधुनिकीकरण से विवाह की संस्था भी प्रभावित हो रही है।

शोध क्षेत्र का चयन :– देवा जिला जो कि आदिवासी बाहुल्य होने के कारण अध्ययन क्षेत्र के रूप में चुना गया है। अध्ययनित जिले में आधुनिकीकरण का अनुसूचित जनजाति की महिलाओं पर सामाजिक विवाह का प्रभाव पड़ रहा है। उनके परम्परागत मूल्य रीति–रिवाज प्रथाएँ, परम्पराएँ उनकी जीवन शैली पर आधुनिकीकरण का प्रभाव पड़ रहा है। साथ ही उनका राजनैतिक सशक्तिकरण एवं धार्मिक संस्कारों पर नकारात्मक या सकारात्मक प्रभाव पड़ा। यह ज्ञात करने का प्रयास इस शोध अध्ययन के माध्यम से किया गया है।

शोध अध्ययन के उद्देश्य :–

1) विवाह की आयु पर आधुनिकीकरण का प्रभाव का अध्ययन करना।

2) विवाह की पद्धति का अध्ययन करना।

शोध अध्ययन की परिकल्पना :–

1) आधुनिकीकरण के प्रभाव के कारण भिलाला जनजाति में सामाजिक एवं सांस्कृतिक परिवर्तन हो रहे हैं।

2) आधुनिकीकरण ने महिलाओं के जीवन स्तर को प्रभावित किया है।

शोध पद्धति :– प्रस्तुत शोध–पत्र के लिये प्राथमिक समंकों का उपयोग किया गया है जिसमें प्रश्नावली के माध्यम से शोध क्षेत्र देवास जिले के 166 विवाहित महिलाओं का चयन किया गया। चयनित विवाहित महिलाओं का प्रत्यक्ष रूप से साक्षात्कार लेकर समंकों का संकलन किया गया।

सारणी क्रमांक–1
महिलाओं के विवाह की आयु संरचना
(कुल विवाहित महिलाएँ – 166)

क्रमांक	आयु वर्ग	संख्या	प्रतिशत
1	18 से 23 वर्ष	53	31.92%
2	24 से 29 वर्ष	80	48.19%
3	30 से 35 वर्ष	22	13.25%
4	36 से अधिक	11	6.62%
	योग	**166**	**100**

उक्त तालिका से स्पष्ट है कि भिलाला महिलाओं की आयु संरचना में 31.92 प्रतिशत महिलाओं का विवाह 18 से 23 वर्ष की आयु समूह में हुआ है। 48.19 प्रतिशत महिलाओं का विवाह 24 से 29 वर्ष की आयु में हुआ। 13.25 प्रतिशत महिलाओं का विवाह 30 से 35 वर्ष के बीच में हुआ जबकि 6.62 प्रतिशत महिलाओं का विवाह 36 वर्ष से अधिक आयु में हुआ है, जो आधुनिकीकरण का सूचक है।

सारणी क्रमांक–2

विवाह संस्कार की पद्धति

क्रमांक	विवाह पद्धति का विवरण	संख्या	प्रतिशत
1	परम्परागत रीति–रिवाज	116	69.07%
2	पंडित द्वारा विहा	30	18.07%
3	पंजीकृत विवाह	25	15.06%
4	आर्य समाज मंदिर में विवाह	05	3.01%
	याग	**166**	**100**

उक्त तालिका से स्पष्ट है कि 69.07 प्रतिशत महिलाओं का विवाह परम्परागत रीति–रिवाज के अनुसार हुआ है। अर्थात् इनके विवाह संस्कार पद्धति में कोई परिवर्तन नहीं हुआ। 18.07 प्रतिशत महिलाओं का विवाह पंडित द्वारा सम्पन्न कराया गया । यह भी विवाह की परम्परागत पद्धति है। 15.06 प्रतिशत महिलाओं का विवाह अदालत में पंजीकृत पद्धति से सम्पन्न हुआ है। 3.01 प्रतिशत महिलाओं का विवाह आर्य समाज मंदिर में हुआ है। यह आधुनिकीकरण के प्रभाव का सूचक है।

निष्कर्ष :– इस प्रकार से शोध अध्ययन के द्वारा पाया गया कि भिलाला महिलाओं के विवाह पर आधुनिकीकरण का प्रभाव व्यापक होता जा रहा है। समय के साथ इस प्रक्रिया में और तीव्रता आने की संभावना है यह एक शुभ संकेत है।

संदर्भ ग्रन्थ सूची :–

1) श्रीनिवास, एम.एन. : सोशल चेंज इन मार्डन इंडिया, युनिवर्सिटी ऑफ कैलीफोर्निया प्रेस, लॉस एंजिलिस, 1966।

2) आरजू, मोजमिल्ल हसन : भारतीय महिला एवं आधुनिकीकरण, स्टाईलिश कम्पोजिंग एजेंसी, दिल्ली।

3) गुप्ता, एम.एल. एवं शर्मा, डी.डी. : समाजशास्त्र, साहित्य भवन पब्लिकेशन्स, आगरा, 2005।

4) अग्रवाल, जे.सी. : भारत में नारी शिक्षा, प्रकाशक विधा विहार, नई दिल्ली, 2005।

ISSN : 2394-3580 Swadeshi Research Foundation Vol. – 6, No. - 7 May 2019
A Monthly Journal of Multidisciplinary
International Peer Refereed, Review, Indexing & Impact factor-4.2 Research Journal

सम्प्रत्यय अर्जन प्रतिमान का विद्यार्थियों की वैज्ञानिक अभिवृत्ति पर प्रभावशीलता का अध्ययन

श्रीमती रश्मि खम्परिया
Research scholar, Rani Durgawati Vishwavidyalaya, Jabalpur
Astt. Professor, Gyaneshwari Shiksha Mahavidyalaya, Dindori, (MP)

शोध सार :— प्रस्तुत शोध का मुख्य उद्देश्य सम्प्रत्यय अर्जन प्रतिमान का विद्यार्थियों की वैज्ञानिक अभिवृत्ति पर प्रभावशीलता का अध्ययन करना था। इस अध्ययन के लिए न्यादर्श के रूप में कक्षा 9 वीं के 192 विद्यार्थियों का चयन अयादृच्छिक (असम्भाव्य) न्यादश विधि से किया गया। चयनित विद्यार्थियों को प्रयोगात्मक समूह एवं नियंत्रण समूह में विभक्त किया गया। आँकड़ों के संकलन हेतु अयादृच्छिक पूर्व—परीक्षण पश्चात् परीक्षण नियंत्रण समूह प्रायोगिक अभिकल्प का प्रयोग किया गया। अनुसंधान उपकरण के रूप में डॉ. (श्रीमती) अविनाश ग्रेवाल— वैज्ञानिक अभिवृत्ति मापनी का प्रयोग किया गया। सांख्यिकीय तकनीकी के रूप में मध्यमान, मानक विचलन, क्रांतिक अनुपात द्वारा विश्लेषण किया गया। निष्कर्ष रूप में पाया गया कि सम्प्रत्यय अर्जन प्रतिमान विद्यार्थियों की वैज्ञानिक अभिवृत्ति विकसित करने में सकारात्मक प्रभाव डालता है एवं इनमें लिंग भिन्नतायें नहीं हैं।

प्रस्तावना :— शिक्षा हमारी सभ्यता व संस्कृति का केवल एक महत्वपूर्ण अंग ही नहीं बल्कि उसकी आधारशिला है। पिछले 70 वर्षों में शिक्षा व्यवस्था में बहुत से परिवर्तन और सुधार हुए है। अब यह बहुत स्पष्ट हैं कि शिक्षण अधिगम प्रक्रिया में लक्ष्य प्राप्ति के लिये शिक्षण और अधिगम दोनों क्रियायें साथ—साथ आवश्यक है। अनुदेशन का आधुनिक दृष्टिकोण यह है कि यह एक व्यवस्थित प्रक्रिया है जिसमें प्रत्येक घटक, शिक्षक, अधिगमकर्ता, अधिगम सामग्री और अधिगम वातावरण सभी सफल अधिगम के लिये अत्यंत महत्वपूर्ण होते हैं।

हमारे ज्ञान का आधार सभी क्षेत्रों में असाधारण गति से विस्तारित हो रहा है। सूचना को संगठित करने और पुनः प्राप्त करने के लिए ज्यादा प्रभावशाली साधन आवश्यक है। सूचनाओं की प्रचुरता को संभालने के लिये विद्यार्थियों को चाहिए कि आँकड़ों को व्यवस्थित रूप से संग्रहित करें और प्रासंगिकता और उपयुक्तता के साथ समझें एवं पुनः प्राप्त करें।

जब एक शिक्षक सूचनाओं को ज्ञान के स्तर पर लेकर उनका सिखाने में उपयोग करता है तो सूचनाओं को ज्ञान की तरह ग्राह्य बनाने के लिये उसे किसी प्रक्रिया की आवश्यकता होती है। जो सूचनाएँ विद्यार्थी में प्रत्यय या अवधारणा निर्मित कर दें वे ही ज्ञानात्मक या अर्जन करने योग्य सूचनाएँ हैं। यह प्रत्यय या अवधारणा कैसे प्राप्त की जाये, इसकी क्षमता का विकास शिक्षक में आवश्यक है।

पिछले तीन दशकों के दौरान शिक्षण और प्रशिक्षण की बहुत सी नई विधियाँ भिन्न—भिन्न प्रकार की अधिगम परिस्थितियों में परीक्षित, परिवर्धित और ग्रहण की जा चुकी है। अनुदेशन को रूप देने के लिए विविध प्रकार के शिक्षण उपागम विकसित किये जा चुके हैं। शिक्षण प्रतिमानों में सबसे बड़ा वर्ग है सूचना प्रक्रियाकरण प्रतिमान। इनके द्वारा विद्यार्थियों में सूचनाएँ ग्रहण कर उनको व्यवस्थित करने की क्षमता का विकास किया जाता है। सम्प्रत्यय अर्जन प्रतिमान इस वर्ग का एक प्रमुख प्रतिमान है। इसका प्रमुख लक्ष्य आगमनात्मक तर्कशक्ति, प्रत्यय अर्जन एवं विश्लेषण बुद्धि का विकास है।

विज्ञान का अध्यन करने वाला प्रत्येक विद्यार्थी वैज्ञानिक बने, यह आवश्यक नहीं है, परंतु उसमें इतनी योग्यता का विकास अवश्य आवश्यक है कि वह अपने जीवन में आने वाली प्रत्येक वस्तु का भली—भांति पूर्व निरीक्षण कर ले, चिंतन—मनन, अध्ययन द्वारा विश्लेषण करे और तब केवल सारगर्भित वस्तु अथवा उसके उपयोगी अंश को ग्रहण करे।

संप्रत्यय अर्जन प्रतिमान :— शिक्षण का संप्रत्यय अर्जन प्रतिमान जे. एस. ब्रूनर, जे. गुडरो एवं जॉर्ज ऑस्टिन द्वारा 1956 में विकसित किया गया। यह मुख्यतः संज्ञानात्मक क्रिया 'वर्गीकरण' पर ब्रूनर के शोधकार्य से विकसित हुआ है इसीलिए इसे सामान्यतः 'ब्रूनर का संप्रत्यय अर्जन प्रतिमान' कहा जाता है।

इस प्रतिमान का आधार मनुष्य की चिंतन प्रकृति तथा वातावरण की जटिलता है। ब्रूनर ने माना कि जिस वातावरण में हम रहते हैं, वह असंख्य वस्तुओं से भरा पडा है। इस जटिल वातावरण मे समायोजन हेतु मनुष्य को इसे समझना पड़ता है। यह प्रतिमान इस तथ्य पर आधारित है कि मनुष्य में वस्तुओं को विभेदित करने एवं उन्हें समूहीकृत करने की क्षमता होती है। यह क्षमता मनुष्य को पर्यावरण की विविध वस्तुओं के मध्य समानताओं और संबंधों को पूर्णतः समझने के योग्य बनाती है। ब्रूनर का संप्रत्यय अर्जन प्रतिमान स्पष्ट करता है कि शिक्षक की भूमिका ऐसी परिस्थितियाँ सृजित करने की होती है, जिसमें विद्यार्थी स्वयं से सीखता है। यह प्रतिमान विद्यार्थियों के लिये विकास के प्रत्येक स्तर पर प्रकरणों की एक विस्तृत सीमा से संगठित सूचना को प्रस्तुत करने के लिये एक प्रभावशाली विधि उपलब्ध कराता है।

बासापुर, जगदीश (2012) ने संप्रत्यय अर्जन प्रतिमान का विद्यार्थियों की अभिवृत्ति एवं उपलब्धि पर प्रभाव का अध्ययन किया। उन्होंने पाया कि विद्यार्थियों की वैज्ञानिक अभिवृत्ति पर संप्रत्यय अर्जन प्रतिमान से शिक्षण का कोई सकारात्मक प्रभाव नहीं पड़ता है।

माथुर, मधु और कुमार अमित (2012) ने अपने शोध में पाया कि भौतिकी की अवधारणाओं को समझने के लिए संप्रत्यय अर्जन प्रतिमान परम्परागत विधि की तुलना में अधिक प्रभावशील है। मेयर, जॉय आर. (2012) ने हाई स्कूल के जीव विज्ञान विषय के विद्यार्थियों की आगमनात्मक तर्कशक्ति पर संप्रत्यय अर्जन प्रतिमान की प्रभावशीलता का अध्ययन किया और पाया कि विद्यार्थियों की जीवविज्ञान तथ्यों के प्रति समझ, मानसिक प्रक्रिया अभिप्रेरणा एवं अभिवृत्ति पर संप्रत्यय अर्जन प्रतिमान का सार्थक प्रभाव पड़ता है। मुखर्जी, मधुचन्दा (2011) ने संप्रत्यय अर्जन प्रतिमान का छात्रों की विज्ञान विषय में उपलब्धि पर प्रभाव का अध्ययन किया। सिंग, पवन कुमार (2011) ने मानसिक प्रक्रिया एवं वैज्ञानिक योग्यता पर संप्रत्यय अर्जन प्रतिमान की प्रभावशीलता का अध्ययन किया और पाया कि विद्यार्थियों की तार्किक योग्यता एवं सामान्य विज्ञान योग्यता पर संप्रत्यय अर्जन प्रतिमान से शिक्षण का सार्थक प्रभाव पड़ता है।

मिनिकुट्टी, ए. (2006) ने अपने शोध में पाया कि शैक्षिक रूप से पिछड़े हुए विद्यार्थियों की उपलब्धि पर संप्रत्यय अर्जन प्रतिमान का परंपरागत शिक्षण विधि की तुलना में अधिक प्रभाव पड़ता है। उपलब्ध संबंधित शोध साहित्य से यह स्पष्ट होता है कि संप्रत्यय अर्जन प्रतिमान का विद्यार्थियों की उपलब्धि पर प्रभाव देखने के लिये बहुत से शोध कार्य हुए हैं परंतु संप्रत्यय अर्जन प्रतिमान का विद्यार्थियों की वैज्ञानिक अभिवृत्ति पर प्रभाव देखने के अधिक प्रयास नहीं किये गये हैं।

उपरोक्त विश्लेषण एवं अन्य शोध निष्कर्षों के परिणामस्वरूप शोधकर्ता ने समस्या को निम्नांकित रूप में निर्धारित किया–''सम्प्रत्यय अर्जन प्रतिमान का विद्यार्थियों की वैज्ञानिक अभिवृत्ति पर प्रभावाशीलता का अध्ययन ''।

उद्देश्य :– प्रस्तुत शोध कार्य के निम्नांकित उद्देश्य हैं–

1. छात्र/छात्राओं/विद्यार्थियों की वैज्ञानिक अभिवृत्ति पर संप्रत्यय अर्जन प्रतिमान एवं परंपरागत शिक्षण विधि से शिक्षण की प्रभावशीलता का तुलनात्मक अध्ययन करना।
2. छात्र एवं छात्राओं की वैज्ञानिक अभिवृत्ति पर संप्रत्यय अर्जन प्रतिमान से शिक्षण द्वारा लिंग परीक्षण अंतर का अध्ययन करना।

परिकल्पना :–

1. छात्र/छात्राओं/विद्यार्थियों की वैज्ञानिक अभिवृत्ति पर संप्रत्यय अर्जन प्रतिमान एवं परंपरागत शिक्षण विधि से शिक्षण की प्रभावशीलता में कोई सार्थक अंतर नहीं है।
2. छात्र एवं छात्राओं की वैज्ञानिक अभिवृत्ति पर संप्रत्यय अर्जन प्रतिमान से शिक्षण में सार्थक लिंग भिन्नतायें नहीं होती है।

चर :–

1. स्वतंत्र चर–संप्रत्यय अर्जन प्रतिमान, परंपरागत शिक्षण विधि
2. परतंत्र चर–वैज्ञानिक अभिवृत्ति
3. नियंत्रित चर–नवमीं कक्षा के छात्र/छात्राएँ/विद्यार्थी

न्यादर्श :–

समूह	विद्यालय	छात्र	छात्राएं	विद्यार्थी
संप्रत्यय अर्जन प्रतिमान	शासकीय	22	30	52
	अशासकीय	21	21	42
परंपरागत शिक्षण विधि	शासकीय	23	30	53
	अशासकीय	29	16	45
कुल		95	97	192

अनुसंधान उपकरण :–

1. वैज्ञानिक अभिवृत्ति मापनी–डॉ. (श्रीमती) अविनाश ग्रेवाल
2. शोधकर्ता द्वारा विकसित संप्रत्यय अर्जन प्रतिमान एवं परंपरागत शिक्षण विधि पर आधारित पाठ योजनायें

शोध अभिकल्प :– प्रस्तुत अध्ययन में अयादृच्छिक पूर्व–परीक्षण पश्चात् परीक्षण नियंत्रण समूह प्रायोगिक अभिकल्प का प्रयोग किया गया है।

सांख्यिकीय विधियाँ :– प्रस्तुत अध्ययन में मध्यमान, मानक विचलन, क्रांतिक अनुपात की सहायता से परिणाम प्राप्त किये गये।

परिणामों की व्याख्या :– परिणामों का विश्लेषण निम्न प्रकार किया गया–

सारणी क्र. 1

छात्र/छात्राओं/विद्यार्थियों की वैज्ञानिक अभिवृत्ति पर संप्रत्यय अर्जन प्रतिमान एवं परंपरागत शिक्षण विधि का प्रभावशीलता संबंधी तुलनात्मक परिणाम

लिंग	समूह	संख्या	मध्यमान	मानक विचलन	क्रांतिक अनुपात	'पी' मान
छात्र	सम्प्रत्यय अर्जन प्रतिमान	43	65.18	7.69	6.7	< .01
	परंपरागत शिक्षण विधि	52	54.62	7.69		
छात्रा	सम्प्रत्यय अर्जन प्रतिमान	51	66.2	6.67	4.27	< .01
	परंपरागत शिक्षण विधि	46	56.63	7.95		
विद्यार्थी	सम्प्रत्यय अर्जन प्रतिमान	94	65.96	716	9.54	< .01
	परंपरागत शिक्षण विधि	98	55.56	7.84		

स्वतंत्रता के अंश–93, 95 0.05 स्तर पर न्यूनतम मान 1.98
0.01 स्तर पर न्यूनतम मान 2.63

स्वतंत्रता के अंश–190 0.05 स्तर पर न्यूनतम मान 2.65
0.01 स्तर पर न्यूनतम मान 3.88

उपरोक्त सारणी में छात्र/छात्राओं/विद्यार्थियों के संप्रत्यय अर्जन प्रतिमान समूह एवं परंपरागत शिक्षण समूह के पश्च परीक्षण के तुलनात्मक परिणाम प्रस्तुत किये गये है। परिणामों से स्पष्ट होता है कि छात्र/छात्राओं/विद्यार्थियों के क्रांतिक अनुपात के मान क्रमशः 6.7, 4.27 एवं 9.54 है, जो 0.01 स्तर के न्यूनतम सारणी मान की अपेक्षा अधिक है। इससे स्पष्ट होता कि छात्र/छात्राओं/विद्यार्थियों की वैज्ञानिक अभिवृत्ति पर संप्रत्यय अर्जन प्रतिमान शिक्षण विधि का सार्थक प्रभाव पड़ा है। (संदर्भ आरेख क्रमांक 1)

ISSN : 2394-3580 Swadeshi Research Foundation Vol. – 6, No. - 7 May 2019
A Monthly Journal of Multidisciplinary
International Peer Refereed, Review, Indexing & Impact factor-4.2 Research Journal

आरेख क्रमांक 01
छात्र/छात्राओं/विद्यार्थियों की वैज्ञानिक अभिवृत्ति पर सम्प्रत्यय अर्जन प्रतिमान एवं परमपरागत शिक्षण विधि की प्रभावशीलता संबंधी परिणाम

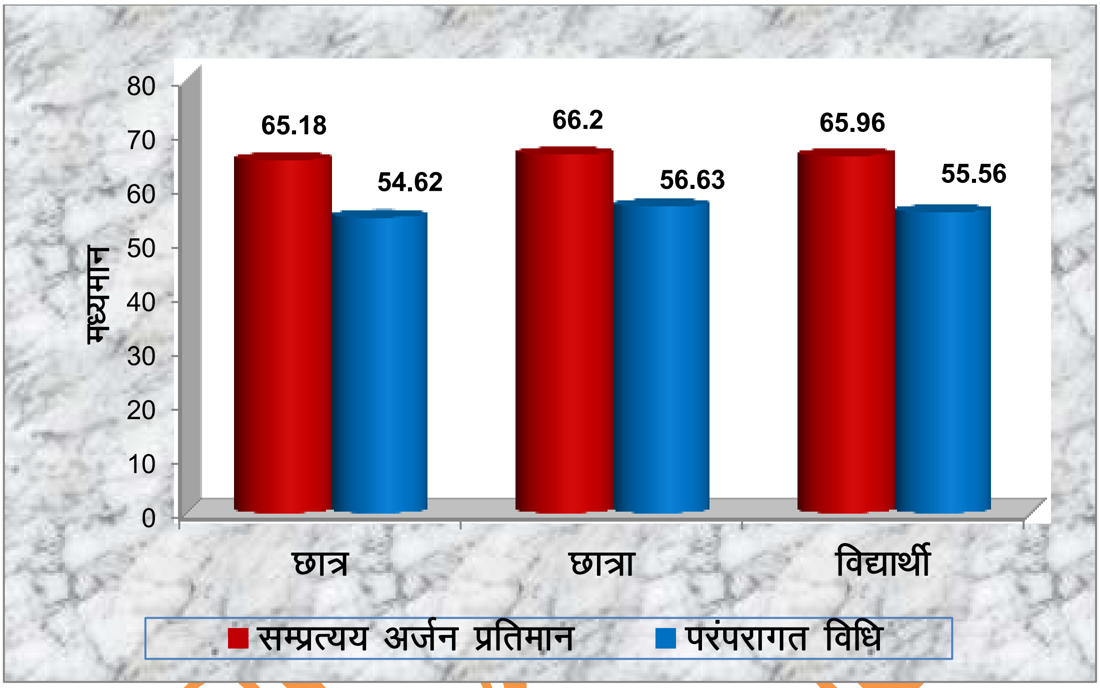

सारणी क्रमांक–2
छात्र एवं छात्राओं की वैज्ञानिक अभिवृत्ति पर संप्रत्यय अर्जन प्रतिमान से शिक्षण की प्रभावशीलता संबंधी तुलनात्मक परिणाम

लिंग	समूह	संख्या	मध्यमान	मानक विचलन	क्रांतिक अनुपात	'पी' मान
पूर्व	छात्र	43	51.00	9.16	1.01	> .05
	छात्रा	51	49.08	9.17		
पश्च	छात्र	43	66.68	7.69	0.35	> .05
	छात्रा	51	66.20	6.67		

स्वतंत्रता के अंश–92 0.05 स्तर पर न्यूनतम मान 1.98
0.01 स्तर पर न्यूनतम मान 2.63

उपरोक्त सारणी में छात्र एवं छात्राओं के संप्रत्यय अर्जन प्रतिमान के पूर्व एवं पश्च परीक्षणों के तुलनात्मक परिणाम प्रस्तुत किये गये हैं। परिणामों से स्पष्ट होता है कि पूर्व एवं पश्च परीक्षण के क्रांतिक अनुपात के मान क्रमशः 1.01 एवं 0.35 है। ये मान 0.05 सार्थकता स्तर पर न्यूनतम सारणी मान की अपेक्षा कम है।

इससे स्पष्ट होता है कि पूर्व एवं पश्च परीक्षण में छात्र एवं छात्राओं की वैज्ञानिक अभिवृत्ति में सार्थक अंतर नहीं है। (संदर्भ आरेख क्रमांक–2)

ISSN : 2394-3580 Swadeshi Research Foundation Vol. – 6, No. - 7 May 2019
A Monthly Journal of Multidisciplinary
International Peer Refereed, Review, Indexing & Impact factor-4.2 Research Journal

ग्राफ

छात्र एवं छात्राओं की वैज्ञानिक अभिवृत्ति पर सम्प्रत्यय अर्जन प्रतिमान से शिक्षण की प्रभावशीलता संबंधी परिणाम

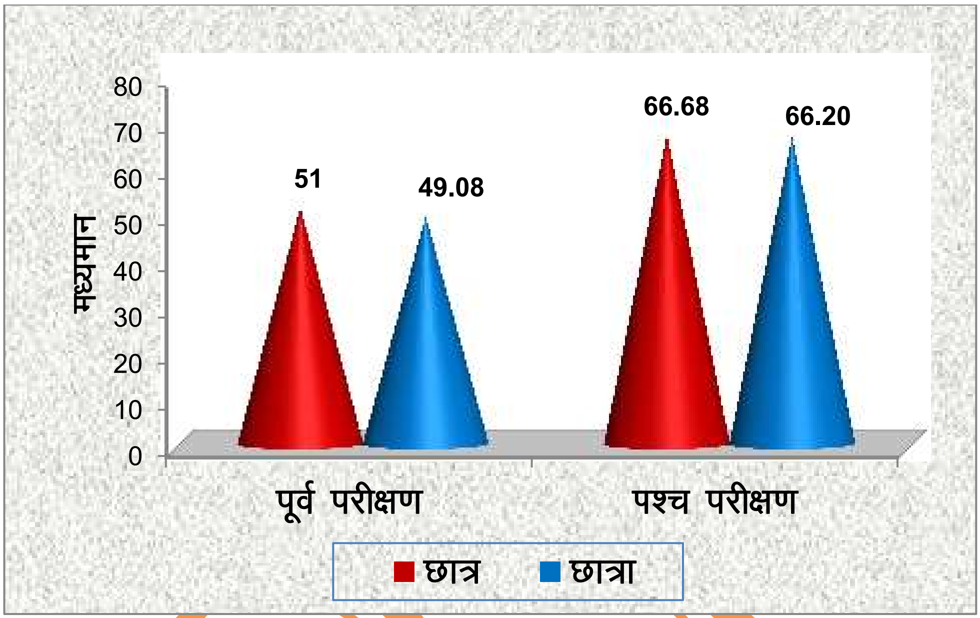

प्रस्तुत शोध में नवमीं कक्षा के विद्यार्थियों की वैज्ञानिक अभिवृत्ति पर संप्रत्यय अर्जन प्रतिमान एवं परंपरागत शिक्षण विधि संबंधी परिणामों से स्पष्ट होता है कि छात्र, छात्रा एवं विद्यार्थियों के संप्रत्यय अर्जन प्रतिमान एवं परंपरागत शिक्षण विधि समूहों में सांख्यिकीय दृष्टिकोण से सार्थक अंतर है। प्राप्त क्रांतिक अनुपातों के मान क्रमशः 6.7, 4.27 एवं 9.54 है। (संदर्भ सारणी क्र. 1, आरेख क्र.1) जो 0.01 सार्थकता स्तर पर न्यूनतम सारणी मान की अपेक्षा अधिक है। इससे स्पष्ट होता है कि संप्रत्यय अर्जन प्रतिमान के माध्यम से शिक्षण कार्य विद्यार्थियों की वैज्ञानिक अभिवृत्ति में परंपरागत शिक्षण विधि की तुलना में प्रभावी रूप से वृद्धि करता है। विद्यार्थी वातावरण में विद्यमान समान एवं असमान उदाहरणों, तथ्यों के माध्यम से संप्रत्यय को स्वयं परिभाषित करते हैं एवं इस प्रकार विषय वस्तु की उपयोगिता को समझते हैं । इस प्रकार विद्यार्थी के अंदर तर्कसंगत ढंग से सोचने और विचारों को सूत्रबद्ध करने का सामर्थ्य आता है। परंपरागत शिक्षण समूह की तुलना में संप्रत्यय अर्जन प्रतिमान समूह में अधिक प्राप्तांक संप्रत्यय अर्जन प्रतिमान की वैज्ञानिक अभिवृत्ति पर सकारात्मक प्रभाव को प्रदर्शित कर रहे हैं।

पूर्व एवं वर्तमान शोध के आधार पर संप्रत्यय अर्जन प्रतिमान का विद्यार्थियों की मानसिक प्रक्रिया एवं वैज्ञानिक अभिवृत्ति पर सकारात्मक प्रभाव पड़ता है।

शिक्षण कार्य शिक्षक छात्र सहभागिता से संपन्न होने के कारण विद्यार्थियों में अध्यापन शैली में रूचि उत्पन्न होती है। उदाहरणों के वर्गीकरण की प्रक्रिया विद्यार्थियों में विश्लेषण की प्रवृत्ति का विकास करती है। यह प्रतिमान विद्यार्थी की समझ की गहराई को त्वरित रूप में प्रकट करता है और पूर्व ज्ञान को पुनर्बलित करता है, विद्यार्थियों को आगमनात्मक तर्कशक्ति के अभ्यास के अवसर उपलब्ध कराता है। विद्यार्थी प्रत्येक परिस्थिति का विश्लेषण करने का प्रयत्न करता है और विश्लेषण के उपरांत वह उस परिस्थिति से संबंधित अवयवों का पता लगाने का प्रयत्न करता है और फिर उनके आपसी संबंध ढूँढ़कर उन परिवर्तनशील अवयवों में उस परिस्थिति के लिए उत्तरदायी कार्य–कारण संबंध खोजता है।

निश्चित रूप से वैज्ञानिक अभिवृत्ति, वैज्ञानिक सृजनात्मकता एवं अन्य संज्ञानात्मक कौशलों, मानसिक योग्यताओं में वृद्धि के लिए सक्रिय अधिगम की प्रक्रिया अपनाई जानी चाहिए। इस दृष्टि से संप्रत्यय अर्जन प्रतिमान शिक्षण की एक श्रेष्ठ विधि हो सकती है।

प्रस्तुत शोध कार्य के माध्यम से शोधकर्ता ने संप्रत्यय अर्जन प्रतिमान के इसी सैद्धांतिक पक्ष के व्यावहारिक परिणाम को जानने का प्रयास किया है।

निष्कर्ष :– संप्रत्यय अर्जन प्रतिमान द्वारा शिक्षण से छात्र/छात्राओं/विद्यार्थियों की वैज्ञानिक अभिवृत्ति में सकारात्मक प्रभाव पड़ता है। संप्रत्यय अर्जन प्रतिमान समूह के प्राप्तांक परंपरागत शिक्षण विधि समूह के प्राप्तांकों की अपेक्षा अधिक है। संप्रत्यय अर्जन प्रतिमान समूह में लिंग भिन्नतायें भी नहीं हैं।

स्पष्ट है कि संप्रत्यय अर्जन प्रतिमान परंपरागत शिक्षण विधि की तुलना में छात्र/छात्राओं/विद्यार्थियों की वैज्ञानिक अभिवृत्ति के सन्दर्भ में अधिक प्रभावशील है।

संदर्भ ग्रंथ :–

अस्थाना, डॉ. विपिन, श्रीवास्तव, डॉ. विजया एवं अस्थाना निधि (2011)– ''शैक्षिक अनुसंधान एवं सांख्यिकी'' अग्रवाल पब्लिकेशन्स–2, पृ.क्र. 35–60, 105–115, 183–203, 415–422, 651–670, 699–717

Gupta, Naresh Kumar (2007). Research in Teaching of Science, New Delhi: APH publishing corporation.

शर्मा, डॉ. संदीप एवं पारीक अलका (2006)– ''शैक्षिक तकनीकी एवं कक्षा कक्ष प्रबंधन'' शिक्षा प्रबंधन, जयपुर–पृ.क्र. 169–178, 227–238

Journals and Surveys:

Basapur, Jagdish (2012). Effectiveness of Concept Attainment Model on Pupil Achievement and their Attitude. International Indexed & Referred Research Journal,3(35), 30-31

Mathur, Madhu & Kumar Amit (2012 April 19). Comparative Effectiveness of Concept Attainment Model and Traditional Method for Acquisition of Physics Concept in Class IX. Indian Faculty. Com. http://www.indianfaculty.com/faculty-Articles /FA14/FA M7.html.

Mayer, Joy R. (2012, July). Effects of using the Concept Attainment Model with Inductive Reasoning with High School Bilology Students. Montana State University. January 23, http://etd.lib. montana.edu/etd/2012/ mayer/mayer; 08/2.pdf

Gaikwad, S. P. Saonawane. S. A. & Uplane, M. M. (2011). Enhancing Scietific

Mukharjee,Madhuchanda (2011). Effectiveness of Concept Attainment Model in forms of Achievment in Science of ClassVIII. International referred Research Journal, 2(18), 58-59

Kaporehwe, J. N. & Unwinoduakit, F. A. (2010, November 2). Enhancing Scientific Attitude through Activity Based Approaches. Academia.edu.www.academia. edu/719335/ Enhaincing-Scientific-Attitudes-through-Activity-Based Approaches. Attitude of Secondary Students. CTE National Journal. 9(1), 54-58

Minikutty, A (2005). Effect of Concept Attainment Model of Instruction on Achievement in Mathematics of Academically Disadvantaged Students of Secondary School in the Kerla State. My Net Research.http.//www. mynetresearch.com/wiki/minikutty.2006. ashx

ISSN : 2394-3580 Swadeshi Research Foundation Vol. – 6, No. - 7 May 2019
A Monthly Journal of Multidisciplinary
International Peer Refereed, Review, Indexing & Impact factor-4.2 Research Journal

भारतीय समाज में महिलाओं की स्थिति

अनीता बाई

शोध छात्रा– रानी दुर्गावती विश्वविद्यालय जबलपुर (म.प्र.)

भारत में सैद्धांतिक रूप से आज भी और हमेशा से ही नारी की मर्यादा है और उसका आदर हुआ है।

यत्र नार्यास्त्रु पूज्यते, रमन्ते तत्र देवता।
यत्रैतास्तु न पूज्यन्ते, सर्वास्तत्राफलाः क्रिया।।

अर्थात् जहाँ महिला की पूजा होती है वहाँ देवता बसते हैं पूजा का अर्थ सम्मान से है तात्पर्य यह है कि जहाँ महिला का सम्मान होता है वहाँ सुख और समृद्धि का वास होता है। और जहाँ महिलाओं का सम्मान नहीं होता वहाँ कुछ भी नहीं होता है। महिलाओं से ही घर, परिवार समाज बनता है। प्राचीन काल से आधुनिक काल यानि वर्तमान समय तक भारत में स्त्रियों की स्थिति परिवर्तनशील रही है। हमारा समाज प्राचीन काल से आज तक पुरूष प्रधान ही रहा है। ऐसा नहीं है कि स्त्रियाँ का शोषण सिर्फ पुरूष वर्ग ने किया पुरूष से ज्यादा तो एक स्त्री ने दूसरी स्त्री पर या स्त्री ने खुद अपने ऊपर अत्याचार किया है। पुरूष की उदंडता और उच्छंखला और अहम् के कारण उसे प्रताड़ित, अपमानित और उपेक्षित होना पड़ा। पहले हम इतिहास में भारतीय स्त्रियों की स्थिति पे नजर डाल लें फिर वर्तमान स्थिति का आंकलन करेंगे।

विभिन्न युगों में नारी की स्थिति :–

वैदिक युग :– सम्भवतः वैदिक युग हिन्दू समाज का स्वर्णयुग था। इस युग में नारी की स्थिति न केवल अच्छी थी बल्कि अत्यंत उन्नत थी। वैदिक साहित्य के अध्ययन से पता चलता है कि उस समय स्त्रियों की स्थिति उनके आत्म विकास, शिक्षा, विवाह, संपत्ति आदि के संबंध में प्रायः पुरूषों के समान थी। पत्नी के रूप में उनकी स्थिति अत्यंत ऊँची थी। ऋग्वेद के अनुसार पत्नी ही घर है। महाभारत के कथनानुसार घर, घर नहीं यदि उस घर में पत्नी नही। वैदिक युग में लड़कियों की गतिशीलता पर कोई रोक नहीं था और न ही मेल–मिलाप और शिक्षा प्राप्त करने के संबंध में कोई प्रतिबंध था। उस समय बहुपत्नी विवाह प्रचलित था। परन्तु स्त्रियों को आदर से रखा जाता था। विधवाओं के पुनर्विवाह के संबंध में कोई विशेष प्रतिबंध न था। यद्यपि सती प्रथा का विशेष प्रचलन न था।

उत्तर वैदिक युग :– वैदिक युग में स्त्रियों की जो ऊँची स्थिति थी वह अधिक समय तक स्थिर न रह सकी। धर्मसूत्रों में बाल–विवाह का निर्देश दिया गया जिसमें कि स्त्रियों की शिक्षा में बाधा पहुँची और उनकी शिक्षा मामूली स्तर पर आ गई। चूँकि उन्हें पढ़ने–लिखने के अवसर प्राप्त न थे इस कारण वेदों का ज्ञान असंभव हो गया। उनके लिए धार्मिक संस्कार में भाग लेने की मनाही हो गयी। उनका प्रमुख कर्तव्य पति आज्ञापालन हो गया। बहुपत्नी –प्रथा का प्रचलन और बढ़ा।

स्मृति युग :– इस युग में स्त्रियों की स्थिति और भी गिर गई उनका जो कुछ भी सम्मान इस युग में होता था वह केवल माता के रूप में होता था। न कि पत्नी के रूप में। इस युग में विवाह की आयु घटाकर 12 या 13 वर्ष की हो गई। विवाह की आयु घटने से शिक्षा न के बराबर हो गई। इस युग में स्त्रियों के समस्त अधिकारों का अपहरण कर लिया गया। स्मृतिकारों में यह निर्देश दिया कि स्त्रियों को किसी अवस्था में स्वतंत्र न रखा जाए। बचपन में उन्हें पिता के संरक्षण में, युवास्था में पति और वृद्धावस्था में पुत्र के संरक्षण में रखना उचित होगा। स्त्रियों का परम कर्त्तव्य पति की सेवा माना जाता था। चाहे वह पति किसी भी तरह का हो। विधवाओं के पुनर्विवाह पर कठोर निषेध लगा दिए। सती होना सर्वोच्च समझा गया।

मध्यकालीन युग :– इस युग में विशेषकर मुगल साम्राज्य की स्थापना के बाद स्त्रियों की दशा और भी दयनीय हो गई। ब्राह्मणों ने हिन्दू–धर्म की रक्षा स्त्रियों के सतीत्व तथा रक्त की शुद्धता बनाए रखने के लिए सम्बन्ध में नियमों को और भी कठोर बना दिया। ऊँची जातियों में स्त्री शिक्षा प्रायः समाप्त हो गई। पर्दा प्रथा को और भी प्रोत्साहन मिला। लड़कियों के विवाह की आयु घटकर 8 से 9 वर्ष हो गयी। इसके फलस्वरूप बचपन से ही इसके ऊपर–गृहस्थी का भार लद गया। गृहस्थी ही उसके समस्त कर्म और आज्ञाओं का एक

मात्र केन्द्र हो गई। विधवाओं का पुनर्विवाह पूर्ण रूप से समाप्त हो गया और सती प्रथा तो इस समय चरम सीमा पर पहुँच गई। संक्षेप में स्त्रियों के सतीत्व की रक्षा करने के लिए इस युग में हिन्दूओं ने उन्हें जन्म से मृत्यु तक पुरूष के अधीन कर दिया और उनके समस्त अधिकार और स्वतंत्रता को छीन लिया।

आधुनिक युग (स्वतंत्रता के पूर्व तक) :– मध्यकालीन युग में स्त्रियों की स्थिति अत्यधिक दयनीय थी ही पर आधुनिक समय में भी उनकी निर्योग्यताएँ कम नहीं हुई अर्थात् उनकी स्थिति अधिक नहीं सुधरी। भारतवर्ष में काफी समय से स्त्रियों को शिक्षा प्राप्त करने का अधिकार नही रहा है शिक्षा केवल नौकरी के लिए ही आवश्यक समझी जाती है और चूँकि स्त्रियों के अधिकार के लिए नौकरी करना उचित नहीं समझा जाता अतः उनके लिए शिक्षा की भी आवश्यकता नहीं समझी गई। बाल विवाह और पर्दा प्रथा ये दोनों भी इस युग में स्त्रियों की शिक्षा में घोर बाधक थे। परम्परागत रूप से स्त्रियों का घर से बाहर काम करना पारिवारिक सम्मान के विरूद्ध समझा जाता है स्वतंत्रता के पूर्व तक स्त्रियाँ न के बराबर ही नौकरी करते हुए देखी जा सकती थी। स्त्रियों की शिक्षा का अभाव और पर्दा प्रथा का अत्यधिक प्रचलन होने के कारण किसी भी समिति या संघ का संगठन करना उनके लिए स्वप्न था।

सन् 1937 से पहले स्त्रियों की संपत्ति के संबंध में कोई भी विशेषाधिकार प्राप्त नही थे। संयुक्त परिवार की संपत्ति में इनका अधिकार लेशमात्र भी नही था। अविवाहित कन्या का भी संयुक्त परिवार की संपत्ति में अधिकार नहीं था। सन् 1919 तक स्त्रियों को वोट देने का अधिकार पूर्णतः प्राप्त नहीं था। 1919 की सुधार योजना में ब्रिटिश पार्लियामेन्ट ने स्त्रियों को मताधिकार देने के प्रश्न प्रान्तीय परिषद् पर छोड़ दिया। 1935 के विधान में भी इस संबंध में कोई विशेष सुधार हुए और स्त्रियों को मताधिकार केवल उनकी शिक्षा, पति की स्थिति, संपत्ति आदि के आधार पर दिया गया।

वर्तमान भारत में महिलाओं की स्थिति :– उपर्युक्त वर्णित निर्योग्यताओं के कारण अभी कुछ वर्ष पहले तक भी भारत में स्त्रियाँ मध्यकालीन युग की परिस्थितियों में रहती थी और इनका पर्याप्त शोषण हो रहा था। इसी शोषण के विरूद्ध स्त्रियों का महिला आन्दोलन प्रारंभ हुआ और उनके ऊपर लादी गई समस्त परम्परागत निर्योग्यताओं को चुनौती दी गई। इस चुनौती के संदर्भ में भारतीय स्त्रियों की स्थिति में अनेक सुधार हुए।

सामाजिक स्थिति में सुधार :– स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात् स्त्रियों में पर्याप्त सुधार हुआ है उनमें सामाजिक चेतना की आज एक नई लहर देखने को मिलती है। जो स्त्रियाँ किसी समय घर के बाहर दरवाजे या खिड़की के बाहर झाँक भी नहीं सकती थी। वहीं आज घर के बाहर जाकर नौकरी करती है। सिनेमा देखने जाती है। समिति और संघों की सदस्यता बनती है। क्लब जाती है और भी इसी प्रकार सामाजिक कार्य में भाग लेती है। वे रूढ़िवादी विचारों से दूर होती जा रही है और नये तार्किक आदर्शो को और मूल्यों को भी अपनाती जा रही है पर्दा प्रथा प्रायः अब समाप्त हो गई है। समाज में अब उनको आदर की दृष्टि से देखा जाता है। सामाजिक क्षेत्र में वर्तमान भारत में स्त्रियों की स्थिति पहले से कहीं अधिक अच्छी है।

परिवार और विवाह के संबंध मे उच्च स्थिति :– परिवार और विवाह के संबंध में आज भारतीय नारी की स्थिति कहीं अधिक उच्च है। सन् 1929 में बाल विवाह अवरोध अधिनियम द्वारा बाल–विवाह का अन्त कर दिया गया है। पहले अधिनियम के अनुसार कोई भी माता–पिता लड़की का विवाह 15 वर्ष की आयु से पहले नहीं कर सकता। अब भारत सरकार ने इस न्यूनतम आयु को बढ़ा कर 15 से 18 कर दिया है। स्वास्थ्य तथा परिवर कल्याण परिषद ने भी अपने एक सम्मेलन में इस न्यूनतम आयु को 19 वर्ष कर देने की सिफारिश की थी। 1961 के ''दहेज प्रतिबंध अधिनियम'' के द्वारा दहेज देना अपराध घोषित कर दिया गया है। परन्तु दुःख है कि इस संबंध में कोई विशेष लाभ नहीं हुआ है। इसी प्रकार सन् 1955 के ''हिन्दू विवाह तथा विवाह विच्छेद अधिनियम'' और सन् 1954 के विशेष विवाह अधिनियम ने स्त्रियों को धार्मिक व अन्य सभी प्रकार के प्रतिबंधों से दूर विवाह करने की आज्ञा दे दी है। अब बहुपत्नी विवाह गैर कानूनी है। अन्तर्जातीय विवाह मान्य है और स्त्रियों को विवाह विच्छेद का भी पूरा अधिकार है इसी कारण विधवा–पुनर्विवाह भी आज कानूनी रूप से मान्य है। इन सभी कारणों से परिवारों के अन्तर्गत भी स्त्रियों की स्थिति काफी सुधरी है। वह अब पति की दासी नहीं वरन् मित्र है, सास–ससुर की सेविका नहीं, वरन् सम्मानीय वधू है। इस प्रकार यह स्पष्ट है कि विवाह और परिवार के क्षेत्र में स्त्रियों की स्थिति अपेक्षातया उच्च है।

उच्च आर्थिक स्थिति :– आर्थिक दृष्टिकोण से आज स्त्रियों की स्थिति उच्च है। वे अब केवल पति पर ही आश्रित नही है, आज स्वयं भी जीविकोपार्जन कर रही है वर्तमान भारत में स्त्रियाँ प्रायः प्रत्येक व्यवसाय करती हुई देखी जा सकती है। वे वकील है प्रोफेसर है, एकाउण्टेण्ट है, भारतीय प्रशासनिक सेवा अधिकारी है डॉक्टर है, नर्स है, पुलिस अधिकारी है, फैक्ट्री में मैनेजर है जज है और यहाँ तक की हवाई जहाज चालक भी है। इतना ही नहीं सन् 1956 के ''हिन्दू उत्तराधिकार अधिनियम'' के द्वारा हिन्दू स्त्रियों को माता, पत्नी और पुत्र के रूप में पुरूषों के समान संपत्ति संबंधी अधिकार प्राप्त हो गए है इन सब बातों को देखते हुए यह कहा जा सकता है कि निश्चय ही स्त्रियों की आर्थिक स्थिति में काफी सुधार हुआ है।

शिक्षा के संबंध में सुधार :– स्त्रियों की शिक्षा के संबंध में भी वर्तमान समय में पर्याप्त सुधार हुए है। पहले बहुत ही कम स्त्रियाँ पढ़ी–लिखी होती थी परन्तु आज स्त्रियाँ शिक्षा के क्षेत्र में निरंतर आगे बढ़ रही है। आज स्त्रियाँ वैज्ञानिक सामाजिक, राजनीतिक, व्यवसायिक सभी प्रकार की शिक्षा प्राप्त कर रही है। सरकार भी स्त्री शिक्षा पर विशेष ध्यान दे रही है स्त्रियों को निःशुल्क शिक्षा, प्राइवेट शिक्षा देने की सुविधा छात्रवृत्तियाँ आदि देकर शिक्षा के विषय में प्रोत्साहित किया जा रहा है।

राजनीतिक क्षेत्र में समानता :– जैसा कि कहा ही जा चुका है कि स्वतंत्रता से पूर्व तक सभी स्त्रियों को वोट देने का अधिकार न था परन्तु आज भारत की प्रत्येक नारी को जिसने की 18 वर्ष की आयु प्राप्त कर ली है वोट देने का तथा स्वयं भी लोकसभा, विधान सभा आदि के सदस्य के लिये उम्मीदवार होने का अधिकार है। अब तो पंचायत, नगर पालिका आदि के चुनाव में काफी संख्या में सीटें महिलाओं के लिए आरक्षित कर दी गई है। इसके फलस्वरूप इस देश में स्त्रियों में पर्याप्त राजनीतिक चेतना आई है।

निष्कर्ष :– उपर्युक्त विवेचना से स्पष्ट है कि स्वतंत्रता–प्राप्ति के पश्चात् भारतीय महिला की स्थिति में काफी सुधार हुआ है परन्तु इस संबंध में यह स्मरणीय है कि भारतीय गाँवों और नगरों के भी अनेक रूढ़िवादी परिवारों में स्त्रियों की स्थिति अब भी अधिक अच्छी नहीं है। वे अब भी पर्दा प्रथा को उचित समझते है और शिक्षा को स्त्रियों को बिगड़ने वाली चीज। विवाह के संबंध में रूढ़िवादी परिवारों के मुखिया अब भी लड़की की इच्छा या पसंद को जानने की आवश्यकता नौकरी करना अपनी शान के खिलाफ मानते है तथा उसके सामाजिक मेल–मिलाप आदि पर अनेक प्रतिबंध लगाते है। स्त्रियों की उच्च स्थिति का वर्णन करते समय स्त्रियों की स्थिति के इस पक्ष को भी भूलना नहीं चाहियें।

SRF

ISSN : 2394-3580 Swadeshi Research Foundation Vol. – 6, No. - 7 May 2019
A Monthly Journal of Multidisciplinary
International Peer Refereed, Review, Indexing & Impact factor-4.2 Research Journal

भारतीय जनगणना व सांख्यिकीय संगठन : एक अध्ययन

श्रीमती अर्चना चौबे
शोधार्थी, सहायक प्राध्यापक, हितकारिणी कला, विज्ञान एवं वाणिज्य महाविद्यालय, देवताल गढ़ा, जबलपुर

सारांश :— भारत में पहली जनगणना 1872 में हुई उसके बाद धीरे—धीरे इस का प्रचार प्रसार पूरे देश में क्रमिक रूप से किया जाता था। विभिन्न समस्याओं के बावजूद भारत में प्रत्येक दस वर्ष के अंतराल में जनगणना होती है।

जनगणना का शाब्दिक अर्थ है मनुष्यों की गणना, किन्तु आधुनिक अर्थ में जनगणना किसी क्षेत्र या देश के ग्राम, नगर या उपक्षेत्रों के निवासियों की संख्या तथा तत्संबंधी अन्य तथ्यों का समसामयिक विवरण प्रस्तुत करने वाली राष्ट्रीय संस्था हो गई है। जिस पर प्रशासनिक एवं आयोजना संबंधी सरकारी नीतियां निर्धारित होती है। जनगणना से प्राप्त आंकड़े के विश्लेषण से प्राप्त जानकारी को केन्द्रीय स्तर पर विभिन्न सांख्यिकीय कार्यालयों और सांख्यिकीय संगठनों के द्वारा प्रकाशित किया जाता है। इन आंकड़ों के विश्लेषण से ही देश की जनसंख्या के विविध पहलू जैसे व्यक्तियों के तौर तरीके प्रवृत्तियों तथा प्रत्येक राज्य की जनसंख्या, लिंगानुपात, साक्षरता, शिक्षा आदि का पता चलता है।

प्रस्तुत शोध पत्र ''केन्द्रीय सांख्यिकीय संगठन के कार्यों का मूल्यांकन'' (जनसंख्या समंक के विशेष संदर्भ में) पी.एच.डी. शोध प्रबंध से संबंधित है जिसे शोधार्थी द्वारा अपने शोध कार्य से पूर्व निर्मित किया गया है।

प्रस्तावना :— सर्वप्रथम जनगणना का प्रचलन संसार के किस क्षेत्र या देश में हुआ, इसका ऐतिहासिक प्रमाण उपलब्ध नहीं है, किन्तु इतिहासकारों का मत है कि इसका प्रचलन अति प्राचीनकाल से संसार के विभिन्न विभागों में रहा है, यद्यपि इसका रूप अव्यवस्थित था। संसार के विभिन्न क्षेत्रों में जब जातीय या पारिवारिक संगठन था, तब नेता को अपने वर्ग तथा पशुधन का पता रहता था। विपत्ति के दिनों में संपूर्ण वर्ग की गुहार होती थी और भोजादि के अवसरों पर सब निमंत्रित होते थे। पूर्व वैदिक काल में आर्य लोग अपनी जातियों, कुरू, यदु आदि में बंटे थे और राज्य को पूरी जाति का पता रहता था। महाभारत में कौरवों और पांडवों ने अपने सैन्यदल की गणना द्वारा अपनी शक्ति का आंकलन और युद्धायोजन किया था।

सेंसस (Census-जनगणना) शब्द रोम के प्राचीन शब्द (Censor) कहते थे, सरकारी निर्देशानुसार प्रति पांचवें वर्श राज्य के परिवारों तथा प्रत्येक परिवार के सदस्यों की संख्या तथा आर्थिक और सामाजिक तथ्यों का विवरण प्रस्तुत करते थे। इसका प्रारंभ सर्वियत टालियस नामक रोम के छठे राजा (578—534 ई.पू.) ने किया था। आंगस्टस ने ईसा से पांच वर्ष पूर्व इस रीति को संपूर्ण रोम साम्राज्य में प्रचलित कर दिया।

आधुनिक जनगणना का स्वरूप अत्यंत वृहत् होता जा रहा है। इसमें किसी देश के प्रत्येक व्यक्ति, परिवार, ग्राम, मुहल्ला, नगर, विभिन्न प्रशासकीय क्षेत्रों और संपूर्ण क्षेत्र के मनुष्यों तथा उनकी आवासीय आर्थिक, सामाजिक, धार्मिक, शैक्षिक, जातीय राजनीतिक, तथ्यों, अंतः क्षेत्रीय अंतः प्रांतीय प्रणाली तथा ताथ्यिक स्वरूप व अंतर्राष्ट्रीय बेकारी आदि विवरणों का समावेश रहता है। ये सब तथ्य निरंतर परिवर्तनशील है। अतः प्रति पांच या दस वर्षों पश्चात् ये आंकड़े लिये जाते हैं, जिससे तथ्यों में परिवर्तनक्रम के अनुसार सरकारी नीति और योजनाओं तथा विभिन्न मदों में आमदनी खर्च की अयोजनाओं में भी आवश्यकतानुसार संशोधन तथा परिवर्तन किया जा सके।

इन आंकड़ों को केन्द्रीय सांख्यिकीय संगठन के विभिन्न विभाग जैसे सामाजिक सांख्यिकीय, अंतराष्ट्रीय समन्वय, अर्थ सांख्यिकीय के माध्यम से वार्षिक सर्वेक्षण के द्वारा सांख्यिकीय एजेंसियों को आंकड़ों को उपलब्ध कराती है। जिससे एजेंसियों को तथा आम जनता को समय—समय पर योजनाओं तथा नीतियों के निर्माण में सहायता प्राप्त हो सके।

अध्ययन के उद्देश्य :— जनसंख्या समंकों के अध्ययन में सांख्यिकीय संगठनों की भूमिका का अध्ययन करना।

कार्यकारी उपकल्पना :— साख्यिकीय सगठनों की कार्यों के प्रति लोगों में जानकारी का अभाव है।

अध्ययन विधि :— प्रस्तुत शोध प्रपत्र में उद्देश्यपूर्ण अध्ययन प्रविधि का प्रयोग किया गया है।

अध्ययन क्षेत्र :— प्रस्तुत शोध प्रपत्र मध्यप्रदेश राज्य के जबलपुर जिले के चार निर्वाचन क्षेत्र के 100 (25+25+25+25) के सूचनादाताओं का चुनाव किया गया है।

सारणी क्र. 1
केन्द्रीय सांख्यिकीय संगठन के कार्यो की जानकारी संबंधी स्थिति

क्र.	विवरण	आवृत्ति	प्रतिशत
1.	हां	61	61
2.	नहीं	39	39
	कुल योग—	**100**	**100**

उपयुक्त सारणी क्र. 1 के अध्ययन से ज्ञात होता है कि अध्ययन क्षेत्र में 61 प्रतिशत उत्तरदाता केन्द्रीय सांख्यिकीय संगठन के कार्यों की जानकारी रखते हैं तथा 39 प्रतिशत उत्तरदाता में केन्द्रीय सांख्यिकीय संगठन के कार्यों की जानकारी का अभाव है।

सारणी क्र. 2
जनसंख्या समंक और सांख्यिकीय संगठन की भूमिका संबंधी

क्र.	विवरण	आवृत्ति	प्रतिशत
1.	हां	41	41
2.	नहीं	35	35
3.	थोड़ा—थोड़ा	24	24
	कुल योग—	**100**	**100**

सारणी क्रमांक 2 के अध्ययन से यह ज्ञात होता है कि अध्ययन क्षेत्र में 41 प्रतिशत उत्तरदाता यह मानते है कि जनसंख्या समंक के विश्लेषण में साख्यिकीय संगठन की महत्वपूर्ण भूमिका है जबकि 35 प्रतिशत उत्तरदाता यह मानते है कि जनसंख्या समंक और सांख्यिकीय संगठनों का कोई संबंध नहीं है तथा 24 प्रतिशत उत्तरदाता ऐसे भी है जो इस बात को मानते हैं कि जनसंया समंको के विश्लेषण में सांख्यिकीय संगठनों की भूमिका बहुत थोड़ी है।

उपकल्पनाओं का सत्यापन :— शोध प्रपत्र हेतु निर्मित उपकल्पना में यह माना गया था कि लोगों में केन्द्रीय सांख्यिकीय संगठन के कार्यों के प्रति जानकारी का अभाव है, परंतु जब तथ्यों का विश्लेषण किया गया तब ज्ञात हुआ कि 100 उत्तरदाताओं में से 61 प्रतिशत उत्तरदाताओं को केन्द्रीय सांख्यिकीय संगठन के कार्यों की जानकारी है तथा 100 में से 41 प्रतिशत उत्तरदाता इस बात को मानते हैं कि जनसंख्या समंक के विश्लेषण में केन्द्रीय सांख्यिकीय संगठन की भूमिका महत्वपूर्ण है। अतः मेरी उपकल्पना नकारात्मक सिद्ध हुई।

निष्कर्ष एवं सुझाव :— शोध के अध्ययन में यह पाया कि वर्तमान समय में जनसंख्या समंक और सांख्यिकी संगठनों की देश के विकास में महत्वपूर्ण भूमिका है।

शोध के अध्ययन से यह बात सामने आई कि अभी भी कई लोग ऐसे है जिन्हें सांख्यिकीय संगठन के द्वारा जो—जो कार्य किये जाते है उनकी जानकारी नहीं है। अतः सरकार को सांख्यिकीय संगठनों के कार्यों से अवगत कराने के लिए समय—समय पर जानकारियों का प्रकाशन तथा विचार संगोष्ठियों का आयोजन कराना चाहिए जिससे जनसंख्या संबंधी सभी पहलूओं की जानकारी साधारण जन मानस तक पहुँच सके।

संदर्भ ग्रंथ :—

1. जिला सांख्यिकी पुस्तिका, जबलपुर (2011)
2. सांख्यिकीय एवं क्रियान्वयन मंत्रालय, भारत सरकार
3- http//www.mospi.gov.in

ISSN : 2394-3580 Swadeshi Research Foundation Vol. – 6, No. - 7 May 2019
A Monthly Journal of Multidisciplinary
International Peer Refereed, Review, Indexing & Impact factor-4.2 Research Journal

गर्भवती महिलाओं के स्वास्थ्य की स्थिति तथा संचार कस एक समाजशास्त्रीय अध्ययन (मध्य प्रदेश के विशेष संदर्भ में)

Ku. Ashwini C. Bhagat
शोध छात्रा, कु. अश्विनी चिंतामण भगत सामाजशास्त्र विभाग, ब.उ.वि.वि. भोपाल (म.प्र)

प्रजनन सम्बन्धी अवस्था एक मादा के गर्भाराय में भ्रुण के होने को गर्भावस्था (गर्भ+अवस्था) कहते है, तदुपरात महिला शिशु को जन्म देती है, आमतौर पर यह अवस्था माँ बनने वाली महिलाओं में 9 माह तक रहती है, जिसे गर्भवधी करते है। कभी–कभी संयोग ऐ एकधिक गर्भवस्था भी अस्तित्व में आ जति है जिस्से जुडवा एक से अधिक सन्तान कि उपस्थिति होती है।

भ्रूण पोषण के स्वस्थ विकास को सुनिश्चित करने के लिए गर्भवस्था के दौरान भ्रूण पोषण महत्वपूर्ण है, शिक्षा के जरिये महिलाओं को गर्भावस्था के दौरान एक सतुलित ऊर्जा और प्रोटीन की मात्रा लेने के लिये प्रोत्साहित किया जा रहा है। कुछ महिलाओं को अपने आहार चिकित्सा की स्थिति खाद्य एलर्जी, या विशिष्ट धार्मिक नैतिक वि" वासों के आधार पर पेशेवर चिकित्सक की सलाह की जरूरत हो सकती मुख्य रूप से पर्याप्त मात्रा में फोलिक एसिड एवम् हरी पत्तेदार सब्जियां, फलिया और खट्टे फलो का सेवन करना चाहिये। यह महत्वपूर्ण हे कि महिला को गर्भवस्था के दौरान डी एच ए की पर्याप्त मात्रा में उपभोग करना चाहिए, डी एच ए की ओमेगा–3 मस्तिष्क और रेटिना में एक प्रमुख संरचनात्मक फैटी एसिड होता है और स्वाभाविक रूप से माँ दूध में पाया जाता है, यह नर्सिग के दौरान शिशु के स्वास्थ का समर्थन करता है। साथ ही विटामिन (डी) और कैल्शियम भी आहार में लेना चाहिये।

उत्तम स्वास्थ्य व्यक्ति तथा राष्ट्र दोनों के लिए महत्वपूर्ण है किसी भी समाज के स्वास्थ्य में महिलाओं और उनके नवजात शिशुओं के स्वास्थ्य का अत्यधिक महत्व है। इन दोनों का स्वास्थ्य उस समाज की संरचना से प्रभावित होता है।

समाज एवं देश के विकास में स्वस्थ्य नारी की भूमिका को पहचानते हुए प्रस्तुत शोध में मध्य प्रदेश निवासी महिलाओं के स्वास्थ्य का वैज्ञानिक अध्ययन करने का प्रयास किया गया है मध्य प्रदेश में बहुत कम महिलाएँ शिक्षिक एवं जागरूक है स्वास्थ्य के प्रति उनकी अज्ञानता उन्हें सशक्त बनने से रोकने में एक बहुत बड़ी अडचन है। निरक्षर महिला को तो अपनी शारीरिक एवं मानसिक वस्तुस्थिति का स्पष्ट ज्ञान नही होता। वे अपने जीवन स्तर और संघर्ष को नियती समझकर चुप और उदासीन रहती है। स्वस्थ गर्भवती ही स्वस्थ शिशु को जन्म दे सकती है। प्रस्तुत शोध कार्य में गर्भवती के स्वास्थ्य पर पडने वाले प्रभावों का परीक्षण करने का प्रयास किया जायेगा।

उद्देश्य :–

- गर्भवती महिलाओं के स्वास्थ्य की दशाओं का अध्ययन
- उन्हे उपलब्ध संस्थागत एवं अन्य चिकित्सा सेवाओं का आंकलन
- गर्भवती महिलाओं को होने वाले रोगो पर प्रकाश डालना
- गर्भववती महिलाओं की समसयाओं को दूर करने के लिए सरकार द्वारा किये गये प्रयासों का आंकलन करना
- गर्भावस्था में स्वस्थ्य से के लिए सूझाव प्रदान करना
- गर्भावस्था में संतुलीत आहार के महत्व प्रती जागृवता ज्ञात करना
- गर्भावस्था में संचार का महत्व ज्ञात करना

अध्ययन पद्वति :– सामाजिक घटनाओं का अध्ययन सामाजिक शोध का सबसे प्रमुख विशय रहा है। सामाजिक घटनाओं की प्रकृति जटिल, अमूर्त और परिवर्तनशील होती है। सामाजिक घटनाओं में समरूपता का आभाव होता है। समाजिक घटनाएं विविध स्थान पर विविध रूप में घटित होती है। यह भी सत्य है कि सामाजिक घटनाओं के पीछें कोई न कोई कार्यकारण संबंध अवश्य होता है। सामाजिक घटनाओं के संबंध में विभिन्न प्रकार की घटनाओं और उनके घटित होने के

ISSN : 2394-3580 Swadeshi Research Foundation Vol. – 6, No. - 7 May 2019
A Monthly Journal of Multidisciplinary
International Peer Refereed, Review, Indexing & Impact factor-4.2 Research Journal

पीछे कार्य कारण संबंधों का ज्ञान प्राप्त करना सामाजिक शोध का प्रमुख उद्देश्य है।

प्रस्तुत शोध–पत्र पूर्णतया द्वितीयक स्रोतो से एकत्रित तथ्यों के विश्लेषण पर आधारित है। इस में विविध शोध कार्यो, एवं पुस्तको के अतिरिक्त समाचार पत्रो, इन्टर नेट सूचनाओं से तथ्य एकत्रित कर के उनका द्वितीयक विश्लेषण किया गया है।

मध्य प्रदेश में गर्भावती महिलाओं के स्वास्थ्य की स्थिति :–

कैग की एक रिपोर्ट (2011–16) के अनुसार मध्य प्रदेश में पिछले पाँच सालों में तकरीबन 93.7 लाख गर्भवती महिलाओं ने प्रसव पूर्व देखभाल के लिए उपना पंजीकरण करवाया था पर प्रसव सिर्फ 69.8 लाख के हुए, ऐसे में सवाल उठता है कि बाकी 23.9 लाख गर्भवती महिलाओं का क्या हुआ ?

कैग की इस रिपोर्ट में राज्य की स्वास्थ्य सेवाओं की खस्ताहाल स्थिति उजागर होती है, **हिंदूस्तान टाइम्स** की खबर के अनुसार, कैग की रिपोर्ट के मुताबिक 2011 से 2016 के दौरान हुए प्रसव संबंधी आंकड़ों में पाई गई यह गड़बडी राज्य में बिगड़ते लिंग अनुपात का कारण भी हो सकती है. गौरतलब है कि राज्य में लिंगानुपात लगातार बिगड़ता जा रहा है, रिपोर्ट में दिए गए सालों के दौरान यह अनुपात 52:48 का है।

स्वास्थ्य क्षेत्र में काम कर रहे एक **एनजी ओ 'जन स्वास्थ्य अभियान'** से जुडे अमूल्य निधि कहते हैं कि इस रिपोर्ट से राज्य सरकार के स्वास्थ्य क्षेत्र में हुए सुधारों के दावे की सच्चाई सामने आ गई है, वे कहते है, 'उन 23 लाख गर्भवती महिलाओं का क्या हुआ ? जिस तरह यह डेटा दिखा रहा है क्या उस हिसाब से यह समझा जाए कि लडके की चाहत में गर्भ गिरा दिया गया ? या फिर प्रशासन ने एक बार प्रसव पूर्व देखभाल के लिए पंजीकृत हुई गर्भवती महिला की दोबारा कोई सुध लेने की जरूरत ही नहीं समझी ?

2011 के आंकड़ों के अनुसार राज्य में लिंगानुपात 1000 लड़को पर 912 लड़कियों का था, लगातार गिर रहे इस आंकडे की वजह जन्म और उसके बाद लड़कियों की ठीक से देखरेख न होना भी है हालांकि **राष्ट्रीय ग्रामीण स्वास्थ्य मिशन** द्वारा इस बारे में काम किया गया है, पर इसके बावजूद 2011–12 ओर 2015–16 के बीच 35.89 लाख लड़को की तुलना में 33.36 लाख जड़किया ही पैदा हुई।

कैग की इस रिपोर्ट में इस बात पर जोर दिया गया कि इस तरह बिगड़ते लिंगानुपात पर ध्यान देने की जरूरत है, रिपोर्ट में यह भी बताया गया कि **राज्य के प्रमुख स्वास्थ्य सचिव** के अनुसार, 'इन 23 लाख गर्भवतियों के गायब होने' के आंकड़े का सच जानने के लिए घर और निजी अस्पतालों में हुए प्रसवों की बेहतर जानकारी के लिए सरकार को रिपोर्टिग तकनीक बेहतर करनी चाहिए।

रिपोर्ट में लिखा ह, '**प्रमुख स्वास्थ्य सचिव** के इस जवाब को स्वीकार नहीं किया गया है क्योंकि 2012 से 2015–16 के बीच लिंगानुपात में किसी तरह का कोई सुधार नहीं हुआ है। प्रसव पूर्व देखभाल के लिए पंजीकृत हुई गर्भवती महिलाओं की संख्या और कुल प्रसवों की संख्या में बहुत बड़ा अंतर है। यह प्रसव पूर्व देखभाल के पंजीकरण और उसके बाद की देखभाल के लिए काम कर रहे स्वास्थ्यकर्मियों और उनके जांच अधिकारियों की कमी को दिखाता है।

इस रिपोर्ट में शामिल कमियों में राज्य का शिशु मृत्यु दर में अन्य राज्यों से पिछड़ना भी है. राज्य में यह आंकड़ा प्रति 1000 पर 52 का है, जबकि देश में यह 1000:40 का अनुपात है. वही माता और शिशु की देखभाल से जुड़ा एक और खराब आंकड़ा भी सामने आया है।

प्रसव पूर्व देखभाव के लिए पंजीकृत हुई 93.7 महिलाओं में से मात्र 56 प्रतिशत (52लाख) महिलाओं ने ही गर्भावस्था की पहली तिमाही के अंदर पंजीकरण करवाया था, वहीं लगभग 21 फीसदी महिलाओं का बाकी दो तिमाहियों में होने वाला चेकअप हुआ ही नहीं.

कैग की रिपोर्ट में राज्य सरकार की मध्य प्रदेश स्वास्थ्य से गारंटी योजना पर भी सवाल उठाए गए है. इस योजना के तहत सरकार को हर तरह के स्वास्थ्य केंद्रों पर न्यूमनतम आवश्यक दवाईयां ओर लैब से जुड़ी सुविधाएं मुहैया करवानीथीं पर रिपोर्ट के अनुसार जिन स्वास्थ्य केंद्रों पर जाँच की गई वहाँ योजना में बताई गई सुविधाएँ और लैब सुविधाएँ नहीं पाई गई।

स्वास्थ्य विभाग गर्भवती महिलाओं को सुरक्षित प्रसव के नाम पर हर साल करोड़ों खर्च कर रहा है. लेकिन महिलाओं को इसका लाभ नही मिल पा रहा। प्रदेश में 54.6 प्रतिशत महीलाएँ एनिमिया का शिकार हैं। राजधानी में भी बदतर हालत है। यहाँ करीब 62 प्रतिशत महिलाएँ यही खान–पान और दवाइयों के

अभाव में एनिमिया का शिकार हो रही है। यही कारण है कि प्रदेश में मातृत्व मृत्यु दर में कमी नहीं आ पा रही है। यह खुलासा **नेशनल हेल्थ फेमिली सर्वे** की (2014–15) रिपोर्ट में हुआ है। रिपोर्ट के अनुसार पिछले साल बिहार के बाद म.प्र. सबसे फिसड्डी रहा। जहाँ गर्भवती महिलाओं का तीन माह में चेकअप हो। बिहार में जहां 34.6 प्रतिशत महिलाओं को यह सुविधा मिल रही है। वहीं प्रदेश में 53.1 प्रतिशत की ही जाँच हो पा रही है। हैरानी है कि त्रिपुरा, नगालैड, मिजोरम, सिक्किम, पांडिचेरी, मणीपुर जैसे राज्यों की हालत भी म.प्र. से बेतहर हैं। यही हालत संपूर्ण चेकअप को लेकर है। नौ माह होने तक प्रदेश की महज 11.4 प्रतिशत महिलाओं की ही जाँच हो पा रही है।

मध्य प्रदेश सरकार के अनुसार :– यहाँ संस्थागत प्रसव की संख्या 2005–06 के 30 प्रतिशत से बढकर 2006–07 में 55 प्रतिशत तक हो गई। यही नहीं 11वीं **पंचवर्षीय योजना के तहत** वर्ष 2007–08 में यह बढकर 79 प्रतिशत तथा 2008–09 (जून 2008 तक के आंकड़े) में बढ़कर यह 82.36 प्रतिशत तक पहुँच गई। **मध्य प्रदेश में पंजीकत** हुए 1166950 प्रसवों में वर्ष 2008–09 में अप्रैल से नवंबर 2008 तक कुल संस्थागत प्रसव की संख्या 906869 **राष्ट्रीय ग्रामीण स्वास्थ्य मिशन,सार्वजनिक स्वास्थ्य व परिवार कल्याण विभाग, तथा डी एल एच एय –3 की सर्वेक्षण रिपोर्ट म.प्र. में संस्थागत प्रसव** की लाचार हालत को बखूबी सामने लाती है।

www.mediaforrights.org (के अनुसार)

डीएलएचएस-3 में मातृत्व स्वास्थ्य सूचकांक

विवरण	कुल	ग्रामीण
शादी के वक्त लड़की की औसत उम्र	18.5	17.9
18 साल से कम उम्र की शादी-शुदा लड़कियां	29.2	34.3
मांए जिनकी प्रसव पूर्व किसी तरह की जांच की गई हो	61.8	56.8
गर्भवती महिलाएं जिनकी पहली तिमाही में जांच की गई हो	33.8	27.9
संस्थागत प्रसव	47.1	40.8
सुरक्षित प्रसव (जो या तो संस्थागत हुए हों या फिर घर में प्रशिक्षित दाईयों, डाक्टर, नर्स, एलएचवी अथवा स्वास्थ्य कार्यकर्ता की मदद से)	50.1	43.4
मांए जिनकी प्रसव के दो सप्ताह के अंदर किसी तरह की देख-रेख की गई हो	37.7	32.5
मांए जिन्हें जननी स्वास्थ्य योजना के तहत वित्तीय मदद मिली हो	34.9	34

डी एलएचएस–3 की सर्वेक्षण रिपोर्ट मध्य प्रदेश में संस्थागत प्रसव की लाचार हालत को बखूबी सामने लाती है।

प्रदेश के कई जिलों में तो स्थिति बहुत ही खराब है। डिंडौरी, मंडला, सीधी तथा बडवानी सरीखे जिलों में संस्थागत प्रसव 30 प्रतिशत से भी कम है। डिंडौरी जिले में संस्थागत प्रसव महज 13.1 प्रतिशत है, वही सीधीं में 23.5 प्रतिशत, मंडला में 28.5 प्रतिशत तथा बड़वानी में 29.5 प्रतिशत है। ये सभी जिले मुख्य रूप से अनुसूचिंत जनजाति बहुल हैं। डिंडौरी में अनुसूचिंत जनजाति 64.5 प्रतिशत है तो सीधी में 2.9 प्रतिशत, मंडला में 57.2 प्रतिशत है तथा बड़वनी में 67 प्रतिशत आबादी अनुसूचित जलजाति की है। इससे साफ पता चलता है कि मध्यप्रदेश की आदिवासी महिलाओं के लिए गर्भावस्था की स्थिति कितनी जटिल और कई बार जानलेवा है।

गर्भवती महिलाओं को होने वालो रोग

गर्भावस्था के दौरान संक्रमण :–

(1) गर्भावस्था मे संक्रमण की समस्या के चलते गर्भवती को कई बिमारीयों का सामना करना पड़ता है। गर्भाशय में घाव हो जाते है। पर जरूरी नहीं कि सोर संक्रमण पेल्विक हिस्सें में ही हों, कई बार यह घाव ब्लैडर एवं किडनी में भी हो सकते है।

गर्भावस्था में इस तरह का संक्रमण कई बार जानलेवा भी हो सकता है खासकर तब जब इसका सही से ईलाज न किया जाए। यूटरस में संक्रमण होने पर रक्त के थक्के जम जाते हैं। किडनी में संक्रमण होने पर किडनी से जुड़ी बीमारियाँ होने का खतरा बढ़ जाता है। रक्त कोशिकाओं में रक्त जमने से कई बार सेप्टीक का खतरा बढ़ जाता है, इस प्रकार के संक्रमण से कुछ महिलाओं में बनने भी समस्या आती है कोशिश करनी चाहिए की ऐसी कोई स्तीथी पैदा न होने दें।

(2)प्रेगनेसी के दौरान हार्मोनल बदलाव :– प्रगनेंसी एक कठिन समय है। गर्भावस्था के दौरान शरीर में होने वाले हार्मोनल बदलावों की वजह से कई परेशानियाँ खतरनाक भी हो सकती हैं। प्रेगनेसी के दौरान कई महिलाओं का इंट्राहेप्टिक कोलेस्टेसिस ऑफ प्रेगनंसी या आई सी पी का सामना करना पडता है। आई सी पी के कारण बहुत सी महिलाओं को दूसरी या आखिरी तिमाही में खुजली की समस्या शुरू हो जाती है।

(3)प्रगनेंसी के दौरान प्लेसेंटा प्रिविया हो सकता है खतरनाक :– प्रेगनेंसी के दौरान प्लेसेंटा प्रिविया हो सकता है प्लेसेटा एक तरह का स्ट्रक्चर है, जो प्रेगनेसी के दौरान यूरेटस में बनता है प्रेविया के द्वारा शिशु को ऑक्सीजन और जरूरी पोशक तत्व मिलते हैं और इसके द्वारा ही शिशु के भारीर में मौजूद गंदगी बाहर निकलती है। प्लेसेंटा प्रेविया उस स्थिति को कहते है, जब शिशु के प्रेविया द्वारा माँ के यूरेटस का थोड़ा या पूरा हिस्सा बंद हो जाता है। ये एक खतरनाकं स्थिति हो सकती है।

(4) **एच.आई.वी** से ग्रसित महिला के बच्चों में 7 में से। एच.आई.वी पाजिटिव पाये गये है। लेकिन आधुनिक ड्रग्स एच.आई.वी की रोकथम में बहुत प्रभावी है।

जब इन दवाओं से पूरी चिकित्सा की जाती है और फार्मला फीडिंग की सहायता ली जाती है तो बच्चों में एच.आई.वी फैलने की 2 प्रतिशत से भी कम सम्भावना रहती है। संसाधनों के सीमित होने पर माँ और बच्चे दोनों को ही एच.आई.वी का खतरा कम होता है।

(5) **खमीर के कारण संक्रमण :–** गर्भावस्था के दौरान इंफेक्शन होना बहुत आम बात है। इनमें ही एक है यौनि में संक्रमण जो सूक्ष्म कवक या खमीर के कारण होता है, जिसे कैंडिला एल्बीकस कहते हैं। पुरुषों से ज्यादा कवक महिलाओं में होते हैं जो गर्भावस्था के दौरान संक्रमण का कारण बनते हैं।

गर्भावस्था के दौरान योनि में ग्लाइकोजन नामक ग्लूकोज की मात्रा बढ़ जाती है, इसके कारण केकिला एल्बीकस नामक कवक का विकास होता है। महिला को गर्भावस्था के दौरान यह संक्रमण दस बार से भी ज्यादा हो सकता है। गर्भावस्था में एस्ट्रोजन के स्तर में वृद्धि के कारण ग्लाइकोजन का स्तर बढ़ता है और यह संक्रमण होता है।

(6) टी.बी. और गर्भवस्था :– टी.बी यानि Tubercosis की बीमारी एक जीवाणु Mycobacterium Tubercuosis की वजह से होती है। टी.बी आज भी विश्व की सबसे जानलेवा बीमारियों में से एक है। 40 लाख से भी ज्यादा स्त्रियों हर साल इस बीमारी का शिकार बनती हैं और लाख मौतें भी होती हैं। गर्भवती महिलाओं में सबसे ज्यादा पायी जाने वाली टी.बी फेफड़ों की है। इसके अलावा हड्डी, गुर्द,पेट यहाँ भी टी बी हो सकता है। अगर किसी महिला को टी.बी है और वह गर्भावती हो जाती है तो यह देखा गया है कि टी.बी की बीमारी उससे अप्रभावित रहती है।

(7) मिर्गी :– गर्भवती स्त्री को मिर्गी रोग होने पर माये में इई होना, सुस्ती आना, सिर में चक्कर आना, दिमागी परेशानी रहना, नींद में बेचैनी होना, दिल कघिड़कना, जी मिचलाना, उल्टी होना, चेहरे का लाल हो जाना आदि जेसे मिर्गी रोग के लक्षण है।

(8) गर्भावस्था में पानी की कमी :– गर्भावस्था में पानी की कमी से बहुत सारी परेशानिया हो जाती है। जो शिशु के लिये खतरनाक है। गर्भशय में पानी पानी का कमी बच्चे के लिए खतरनाक होता है। जब महिला गर्भवती होती है तो उनकी बच्चेदानी में एक वि"ोश

ISSN : 2394-3580 Swadeshi Research Foundation Vol. – 6, No. - 7 May 2019
A Monthly Journal of Multidisciplinary
International Peer Refereed, Review, Indexing & Impact factor-4.2 Research Journal

प्रकार का द्रव्य बनता है जिसे भ्रुव अवरण द्रव कहते हैं ये द्रव्य बच्चे को सुरक्षा प्रदान करता है।

पानी की कमी से बच्चे का सम्पुर्ण विकास बांधित हो सकात है। पानी की कमी से शिशु का भरपुर पोषण नहीं हो पाता। पानी की कमी के कारण बच्चे के जन्म में देरी भी हो सकती है।

(9) गर्भावधि मधुमेह (जैस्टेशनल डायबिटीज) :– मधुमेह (जैस्टेशनल डायबिटीज) तब होती है, जब गर्भावस्था के दौरान आपके खून में शर्करा (ग्लूकोस) की मात्रा काफी ज्यादर हो जाती है। जब गर्भवती का शरीर इंसुलिन नामक होर्मोन का प्र्याप्त मात्रा में उत्पादन नहीं कर रहा होता, तो रक्त शर्करा (ब्लड शुगर) का स्तर बड सकता है। इंसुलिन हमारी निम्न तरीके से मदद करती है–

- शरीर की मांसपेशियों और ऊत्तकों की मदद करती है, ताकि वे ऊजा के लिए रक्त शर्करा का इस्तेमाल कर सकें
- जिस रक्त शर्करा की अभी जरूरत नहीं है, शरीर में उसके संग्रहण में मदद करती है।

गर्भावस्था में शरीर को अतिरिक्त इंसुलिन बनानी पड़ती है, खासकर कि मध्य गर्भावस्था के बाद से। गर्भवती को अतिरिक्त इंसुलिन की इसलिए जरूरत होती है, क्योंकि अपरा (प्लेसेंटा) के हार्मोन शरीर को इसके प्रति कम प्रतिक्रियाशील बना देते हैं। यदि शरीर इस अतिरिक्त इंसुलिन की मांग को पूरा नही कर पाता, तो रक्त में शर्करा का स्तर बढ़ जाएगा और गर्भवती को गर्भावधि मधुमेह हो सकता है। खून में अत्याधिक शर्करा होने से आपके और आपके शिशु के लिए समस्याएं उत्पन्न हो सकती है। इसलिए गर्भावस्था के दौरान अतिरिक्त देखभाल में रहना होगा। गर्भावधि मधुमेह की समस्या काफी आम है और यह करीब छह गर्भवती माँ ओं में से एक को प्रभावित करती है। अच्छी बात यह है, कि आमतौर पर शिशु के जन्म के बाद गर्भावधि मधुमेत स्वयं ठीक हो जाती है। यह जिंदगी भर चलने वाली टाईप 1 और टाईप 2 मधुमेत से अलग होती है।

गर्भवती महिलाओं की स्वास्थ्य संबंधी समस्याओं को दूर करने के लिए सरकारी प्रयास

(1) मध्य प्रदेश प्रसूति सहायता योजना 2018 :– महिला श्रमिक को गर्भावस्था के अंतिम 3 महीनों में उनको मिलने वाली तनख्वाह का 50 प्रतिशत प्रसूति हितलाभ के रूप में प्रदान किया जाता है। इसके साथ ही प्रसव के बाद 1000 की धनराशि चिकित्सा आदि खर्चे के रूप में प्रदान की जाती है। साथ ही योजना के अंतजर्गत लाभ प्राप्त करने वाली महिलाओं के पति को भी 15 दिन का पितृत्व लाभ भी प्रदान किया जाता है। मध्य प्रदेश राज्य सरकार द्वारा चलाई जा रही इस योजना का लाभ प्राप्त करने के लिए श्रमिक महिला और अनके पति को पंजीकृत निर्माण श्रमिको होना आवश्यक है।

(2) गर्भवती महिलाओं को राज्य सरकार चार किश्तों में 7,400 रूपए देगी, जिससे वह गर्भावस्था के दौरान संतुलित पोशण, डिलेवरी के तत्काल बाद शिशु के देख भाल अच्छे से कर सके। इसके लिए राज्य सरकार मुख्यमंत्री नियमबद्ध आर्थिक अनुदान योजना की तैयारी है।

प्रमुख सचिव श्रीमती सिंह में बताया कि प्रस्तावित योजना में चार किश्तों में गर्भवती महिलाओं को अनुदान राशि दी जाएगी। गर्भावस्था में 7 वें महीनों लगने पर महली किश्त में 2000 रू दिए जाएगे। महिला द्वारा सरकारी अस्पताल में प्रसव कराने एवं बीसीजी, ओपीवी तथा हेपेटाइटिस बी का शून्य डोज लगाने पर दूसरी किश्त में 1400रू देना प्रस्तावित है। इसी प्रकार नवजात शिशु को ओपीबी व पेंटावेलेंट का टीका लगवाने और 6 माह तक केवल स्तनपान कराने पर चौथी किश्त में 2000 और अगले 2 वर्श तक गर्भवती न होने और शिशु को आवश्यक टीका लगवाने पर चौथी किश्त में 2000 रूपए दिए जाएगे। मुख्य सचिव ने इस योजना मे केंद्र की अन्य योजनाओं को शामिल किया जाए, जिससे पैसों कासंकट न बने। इस योजना का लाभ सिर्फ गरीबी रेखा से नीचे जीवन यापन करने वाली महिलाओं को ही मिलेगा।

(3) प्रधानमंत्री मातृत्व वंदना योजना :– किसी भी परिवार की महिला के पहली बार गर्भधारण करने पर लाभ दिया जाएगा। गर्भधारन के 150 दिन के भीतर महिला को किसी भी सरकारी स्वास्थ्य केंद्र पर पंजीकरण कराकर आवेदन फार्म करीब के स्वास्थ्य केंद्र पर जमा करना होगा। आवेदन जमा होने के बाद एक हजार रूपयें की पहली किस्त महिला के बैंक खाते में सीधे लखनऊ से ट्रांसफर कर दी जाती है। गर्भधारण के छह माह के भीतर प्रसव पूर्ण जाँच कराने के बाद दो हजार रूपये और प्रसव के बाद बच्चे को नियमित

टीकारण के बाद दो हजार रूपये की आखिरी किस्त महिला के खाते में भेजी जाती है।

(4) जननी सुरक्षा योजना :– गरीबी रेखा के नीचे जीवन यापन करने वाली गर्भवती महिला को दो जीवित सन्तानों तक इस योजना के तहत वित्तीय यहायता एवं निःशुल्क परिवहन संस्थागत प्रसव के लिये प्रदान किया जाता है। तीसरे बच्चें के होने पर यह नसबन्दी कराने के बाद ही दिया जाता है।

(5) लालीमा अभियान :– प्रदेश में बच्चे बालिकाओं और महिलाओं को एनीमिया से मुक्त करवाने के लिये राज्य शासन द्वारा 'लालिमा अभियान' आरंभ किया गया है। इस अभियान के तहत आयरन फॉलिक एसिड की गोलियाँ आँगनवाड़ियों, शैक्षणिक संस्थाओं और चिकित्सालयों में निःशुल्क उपलब्ध करवाई चायेगी।

गर्भावस्था से संतुलित आहार का महत्व :– गर्भावस्था के दौरान स्त्री का शरीर कई शारीरिक और हार्मोनल परिवर्तन से होकर गुजरता है इसलिए इस दौरान उन्हें अपने स्वास्थ्य पर विशेष ध्यान देने की जरूरत होती है। संतुलित और पोषणयुक्त आहार का सेवन इस वक्त में माँ और बच्चे दोनों के स्वास्थ्य के लिए आवश्यक है।

गर्भावस्था के दौरान यह सुनिश्चित कर लेना चाहिए कि जो भी आहार गर्भवती ले रही हैं उसका पोषण की दृष्टि से क्या महत्व है। यह जीवन का वो दौर होता है जब एक ही शरीर में दो जिंदगियां अस्तित्व में होती हैं इसलिए भी इस दौरान पोषण की आवश्यकता बढ़ जाती है।

गर्भावस्थ में कैलोरी की खपत बढ़ जाती है इसलिए पौष्टिक और संतुलित आहार लेना भ्रुण और माँ दोनों के लिए जरूरी हो जाता है। पर्याप्त पोषक तत्व भ्रुण के शारीरिक विकास को सुनिश्चित करते हैं। इस संबंध में खाने–पीने का ख्याल कुछ इस तरह से रखना चाहिए कि मांसपेशियों त्वचा और अंगो के विकास के लिए प्रोटीन की जरूरत होती है, इसलिए अपनी डाइट में चिकन, अंडे, ड्राई फ्रूट्स, दाल और जूसी फलों के सेवन से शरीर में प्रोटीन की आपूर्ति होती है।

गर्भावस्था के दौरान शरीर को कैल्शियम की बहुत जरूरत होती है। इसके लिए आपको प्रतिदिन कम से कम दो गिलास दूध के साथ दही, दलिया, साग, बादाम और तिल को गर्भवती की डाइट में शामिल करना चाहिए। स्ट्रॉबेरी, संतरे और पत्तेदार सब्जियों को अपने आहार में शामिल करने से शरीर को पर्याप्त मात्रा में फोलिक एसिड मिलता है। यह बच्चे के न्यूरल ट्यूब में दोष के खतरे को कम करता है। प्रसव के दौरान होने वाले रोग एनीमिया और नकसीर से बचने के लिए पर्याप्त मात्रा में आयरन लें। इसके लिए डाइट चार्ट में मछली, चिकन, ब्रोकली, मसूर, पालक, जामुन, सोयाबीन कि शमिश को जगह देनी चाहिए। इसके लिए आयरन की गोली भी दी जा सकती है।

शरीर में विटामिन सी की आपूर्ति के लिए खट्टे फल जैसे–संतरे, मौसमी, आंवला इत्यादि का सेवन गर्भवती को करना चाहिए। आलू, अनाज, शकरकदी, पानक, जामून, तरबूज कार्बोहाइड्रेट भी महत्वपूर्ण आवश्यकता है।

निष्कर्ष :–

(1) एजीओं के अनुसार महिला बाल विकास व स्वास्थ्य विभाग का अमला इसे लेकर लापरवाह है। वे आयरन गोलियां तो बांट देती हैं, लेकिन खाने के तरीके नहीं बताती इन गोलियों से होने वाली परेशानियों के कारण महिलाएँ इन्हें खाना छोड़ देती है संचार के साधानों द्वारा सही तरीका बताया सकता है।

(2) हर वर्ष मातृत्व स्वास्थ्य को लेकर स्वास्थ्य विभाग, महिला एवं बाल विकास विभाग और एनएचएम की योजनाओं में करोड़ों का बजट खर्च करने के बावजूद गर्भवती महिलाओं को उस स्तर की सुविधाएँ नहीं मिल पा रहीं। अब भी एनिमिया और जाँच के अभाव में महिलाओं की मौत हो रही है।

(3) डीएलएचएस–3 सर्वेक्षण से प्रदेश संस्थागत सुरक्षित प्रसव के लिए बुनियादी जरूरत माने जाने वाली स्वास्थ्य संस्थाओं की गंभीर स्थिति का पता चलता है। जाहिर है कि स्वास्थ्यगत ढांचों में ऐसी कमी तथा स्वास्थ्य क्षेत्र से जुड़े लोगों के अभाव के चलते सुरक्षित संस्थागत प्रसव के विषय में प्रदेश की सरकार सवालों के घेरे में ही रहती है।

(4) म.प्र. सरकार का कहना है कि वर्ष 2015–16 में जननी सुरक्षा योजना के तहत 6 लाख 83 हजार 249 लाभार्थी रहे। जबकि इसके बावजूद प्रदेश खराब निष्पादन वाला राज्य रहा, जहाँ मातृ मृत्यु अनुपात (एम एम आर) अधिक है आवा–जावी के साधनो की कमी के कारण अस्पताल में प्रसव कम है।

(5) म.प्र. में शिशु मृत्यु दर एक हजार बच्चों में 51 है जबकि 27 होना चाहिए। ऐसे ही मातृ मृत्यु दर का

औसत जहाँ एक लाख प्रसव पर 1.09 होना चाहिए, वह प्रदेश में 221 है। यह दोनों ही दरें बिहार, महाराष्ट्र, केरल, पश्चिम बंगाल और झारखंड से ज्यादा है। पिछले पाँच सालों में म.प्र. में जहाँ 4826 प्रसूताओं की मौत हुई तो 96 हजार 159 शिशु की स्वास्थ्य एवं परिवार कल्याण मंत्रालय की ताजा रिपोर्ट कहती है कि शासन गर्भवती महिलाओं को प्रसवपूर्व देखभाल व अन्य सेवाएँ देने में असाफल रहा।

(6) योजनाओं का प्रचार–प्रसार कम होने के कारण सही पात्र इन योजनाओं का लाभ नहीं ले पाते है।

सूझाव :–

(1) तीस या चालीस की उम्र में माँ बनने से बचे

(2) गर्भावस्था में धूम्रपान व नशे का सेवन ना करें

(3) महिला या उसका पार्टनर एच.आई.वी. पाजिटिव है तो उसे प्रेगनेंट होने से पहले प्लान करना चाहिए। प्रेगनेंसी से पहले ही दवाएँ लेनी शुरू कर दी है तो वो अपने बच्चे को एच.आई.वी से बचा सकती है। डाक्टर्स की सलाह से गर्भाधान का सही समय पता करें

(4) गर्भावस्था के दौरान यौनि के आसपास की जगह को साफ रखे। कॉटन के इनरवीयर का प्रायोग करना चाहिये, जो ढीले और आराम दायक हों योनि के आस–पास साबुन और परफयूम आदि का प्रयोग बिलकुल नहीं करना चाहिएँ।

(5) गर्भवती को टी.बी हो जाने पर इवाईयों का पूरा कोर्स करना चाहिए शिशु को स्तनपान कराना चाहिए लेकिन शिशु को soniazid या pyridoxine दवाई जाये ताकी उसे टी.बी से बचाया जा सकें। टी.बी का सही तरीके किया जाये तो वह 6 महीने में आम बिमारीयों की तरह ठिक हो सकती है।

(6) गर्भवती को दिन में 8 से 10 गिलास पानी पिना चाहिए। ऐसे फलो और सब्जियों का सेवन करे जिसमें पानी की मात्रा ज्यादा हो जब गर्भवती आराम करे तो बाई तरफ करवट लेकर सोये क्योंकि ऐसा करने पर रक्त का सर्कुलेशन बच्चेदानी की तरफ बढ़ जाता है जिससे भ्रुण अवरण द्रव बढ़वा है। लम्बे समय तक बैठकर झाडू पोचा न करें। नशेली खाद्यय पदार्थो का सेवन ना करें। कम से कम दिन में दो गिलास दूध पिना चाहिए। ताकी पानी की कमी से होने वाली परेशानीयों से बचा जा सकें।

(7) यह सब जानकारीयाँ हितग्रही तक संचार से पहोचनी चाहिए।

संदर्भ-ग्रंथ सूची :-

1. एम. ज्योति, - “फेमेली प्लानिग ऐसोसिएशन ऑफ इंडिया’’ मुम्बई, 2004।
2. अर्थ सत्यदेव, - “आहार एवं पोषाहार’’ राजस्थान हिन्दी ग्रंथ अकादमी जयपुर, 1985।
3. श्री मुकर्जी, रविन्द्रनाथ, - “सामाजिक शोध एवं सांख्यिकी’’ 2005।
4. नारायणन् प्रोफेसर सुधा, - “मातृ-कला’’ रिसर्च पब्लिकेशन 89. त्रीपोलीया,बाजार जयपुर-2 2005।
5. इन्टर नेट पर समय-समय पर प्रकाशीत होने वाले आंकड़े, जानकारी, लेख।
6. **कैग की रिपार्ट – (2011–16)**
7. दैनिक भास्कर में समय-समय पर प्रकाशीत लेख।
8. महिला एवं बाल विकास विभाग के समय-समय पर प्रकाशीत आंकड़े।

ISSN : 2394-3580 Swadeshi Research Foundation Vol. – 6, No. - 7 May 2019
A Monthly Journal of Multidisciplinary
International Peer Refereed, Review, Indexing & Impact factor-4.2 Research Journal

स्वामी विवेकानन्द का ईश्वर विचार

डॉ. दिलीप सिंह पँवार
(दर्शन–विभाग), शासकीय महाविद्यालय रतलाम

भारत की पुण्यभूमि से बहुत से आग्नीगर्भ तेजस्वी महापुरूषों का जन्म हुआ। अजस्र मानवता व विचारों को जान्हवी धारा का अभ्युदय हुआ। उनमें और चाहे जो भी विभिन्नता व मतभेद रहे हों परन्तु उनका लक्ष्य एक ही रहा है और वह भगवान के द्वारा मानवता का मिलन है। इस आध्यात्मिक महापुरूषों एवं चिंतकों में स्वामी विवेकानन्द प्रमुख है।

विवेकानन्द का आध्यात्मिक चिन्तन भी कुछ इसी प्रकार का था। परमसत् (ब्रह्म) की ही तरह उन्होंने ईश्वर के स्वरूप और कार्य, जीव–जगत् की अवधारणा के सम्बन्ध में एक नवीन व्याख्या प्रस्तुत की थी।

जब तक हमारा शरीर है, जब तक हम इस शरीर को आत्मा समझे बैठे हैं और जब तक हम स्थूल जगत् की ओर दृष्टि किये हुए हैं, तब तक हमें सगुण ईश्वर को स्वीकार करना ही होगा। ऐसी अवस्था में ईश्वर को स्वीकार न करना निरा–पागलपन है।[1] इन शब्दों के साथ स्वामी विवेकानन्द भी आचार्य शंकर के समान सगुण ईश्वर की मान्यता का समर्थन करते हैं। संसार के अधिकांश व्यक्ति द्वैतवादी है। ऐसे व्यक्ति जो साधारण बुद्धि के हैं, निर्गुण ब्रह्म की धारणा को ग्रहण करने में असमर्थ हैं।[2] अतः एक व्यक्ति विशेष के रूप में ईश्वर की उपासना किये बिना मनुष्य का काम नहीं चल सकता।[3]

वेदान्त दर्शन का एक ही उद्देश्य है और वह है एकत्व की खोज।[4] एकत्व के अन्वेषण का तात्पर्य है कि हमें जो विषय–विषयी और जड़ चेतनादि की विभिन्नता और विविधता प्रतीत हो रही है। उस विविधता में एकत्व किस प्रकार स्थापित किया जाये। इसके लिये शनैः–शनैः इस प्रकार लक्ष्य की ओर बढ़ना होगा जिस प्रकार किसी सूक्ष्म तारे को देखने के लिए पहले अनेक समीपस्थ तारे का निर्देशन करना पड़ता है। अतः अद्वैत–वेदान्त में भी लक्ष्य प्राप्ति के लिए पहले ब्रह्मपरिणामवाद को स्वीकार करना पड़ता है। इसमें सत्कार्यवाद स्वीकार कर कार्य–कारण में अभेद प्रतिपादित किया जाता है। एकत्व के अवबोधन का क्रम पहले 'सर्वम् खल्विदं ब्रह्म' की धारणा को पुष्ट कर पश्चात् तत्वमसि को हृदमगम करना है। स्वामी जी ने बार–बार युक्तिपूर्वक कार्य–कारण का अभेद प्रतिपादित किया है।[5] इस जगत का अन्तिम परिणाम चैतन्य है।[6] उस मायायुक्त ईश्वर से ही संसार की उत्पत्ति स्थिति और प्रलय होते है।[7] वही जगत् का उपादान एवं निमित्तकरण है।[8] संसार में देह, मन, इन्द्रिय आदि जितनी भी वस्तुएँ हैं, उनमें भेद प्रकार गत नही हैं अपितु परिणाम–गत है।[9] एक ही वस्तु नामरूप की उपाधि के कारण अनेक रूप से प्रतीत हो रही है।[10] नामरूप के कारण ही समुद्र की तरंग समुद्र से पृथक् प्रतीत हो रही है। वस्तुतः उसका उससे भेद नही है। इसी प्रकार जगत् भी ब्रह्म से भिन्न नही है।

सतकार्यवाद अथवा ब्रह्मपरिणामवाद को स्वीकार कर लेने पर प्रश्न उठता है कि निरपेक्ष तत्व परिवर्तनशील और नाशवान् कैसे हो गया। दर्शन की इस मूल समसया के समाधानार्थ स्वामी जी ने भी अद्वैत–वेदान्त के समान विवर्तवाद को स्वीकार किया है। विवर्तवाद का अर्थ है कि समस्त नानारूपात्मक पदार्थ ब्रह्म के प्रतिभासिक रूप हैं। ब्रह्म विश्व का वास्तविक नहीं आभासी उपादान कारण है। इस तथ्य को सर्प–रज्जु के उदाहरण द्वारा स्पष्ट किया जाता है। रज्जु का सर्प रूप में आभास होता है, वास्तविक परिणाम नही। इसी प्रकार सत् में प्रतीत होने वाले समस्त परिवर्तन भी आभास मात्र है।[11]

भारतीय परम्परा में ईश्वर के दो स्वरूप माने गये हैं– सगुण और निर्गुणं विवेकानन्द के अनुसार निर्गुण–ईश्वर सर्वव्यापी हैं, संसार की सुष्टि, स्थिति और प्रयल का कर्ता है। सांसारिक जीव दुःखी है क्योंकि वह इस ईश्वर से विभक्त हो गया है। वह मुक्ति चाहता है, ईश्वर का समीप्य और सालोम्य चाहता है। निर्गुण ब्रह्म के साथ हम अभिन्न हैं। चर–अचर सब कुछ उसी की अभिव्यक्ति है किन्तु ब्रह्म की भावना सर्वम् ब्रह्माण्ड की एकात्मता अथवा जीवन के अखण्डत्व का बोध है। अतः वेदान्त का प्रतिपाद्य हैं ''विश्व का एकत्व''।

विवेकानन्द एक स्थान पर यह भी कहते हैं कि – ईश्वर वह है, जिससे विश्व का जन्म, स्थिति और प्रलय होता है। वह अनन्त, शुद्ध, नित्य मुक्त, सर्वशक्तिमान, सर्वज्ञ, परमकारूणिक सर्वोपत्ति एवं अनिर्वचनीय प्रेम स्वरूप है। उनके अनुसार भक्त का उपास्य सगुण ईश्वर, ब्रह्म से भिन्न अथवा पृथक नहीं है। सब हुछ वहीं एकमेवाद्वितीय ब्रह्म है। अर्थात् एक सच्चिदानन्द–स्वरूप, जिसे ज्ञानी ''नेति–नेति'' करके प्राप्त करता और दूसरा भक्त का प्रेममय भगवान् दोनों एक ही। उनके ही शब्दों में – ''ईश्वर के सम्बन्ध में हमारी धारणा हमारी अपनी प्रतिच्छाया है''[12] ईश्वर जगन्नियंता है – वही सृष्टि की उत्पत्ति, धारणा व विनाश करता है।

विवेकानन्द के अनुसार ईश्वर उतना ही सत्य है जितना विश्व की अन्य कोई वस्तु।[13] जिससे विश्व का जन्म, स्थिति ओर प्रलय होता हे वही ईश्वर है।[14] वह अनन्त शुद्ध, नित्य, मुक्त, सर्वशक्तिमान, सर्वज्ञ, परम कारूणिक और गुरूओं का भी गुरू है, और सर्वोपरि, वह ईश्वर अनिर्वचनीय प्रेमस्वरूप है।[15] विवेकानन्द के अनुसार ईश्वर दो नही है। ''वह सच्चिदानन्द ही यह प्रेममय भगवान् है, वह सगुण और निर्गुण दोनों है। यह सदैव ध्यान में रखना चाहिए कि भक्त का उपास्य सगुण ईश्वर, ब्रह्म से भिन्न अथवा पृथक नही है। सब कुछ वही एकमेवाद्वितीय ब्रह्म है।

संदर्भ सूची :–

1. Complete works of Swami Vivekanand Vol. III, P.281
2. Ibid Vol. II, P.241
3. Ibid Vol. II, P.387
4. Ibid Vol. II, P. 363
5. Ibid Vol. II, P425-7
6. Ibid Vol. II, P. 209
7. Complete works of Swami Vivekanand Vol. II, P. 251
8. Ibid Vol. II, P. 248
9. Ibid Vol. III, P. 246
10. Ibid Vol. II, P. 274
11. विवेकानन्द साहित्य, खण्ड 09, पृष्ठ 68
12. विवेकानन्द साहित्य, अष्टम खण्ड, पृष्ठ 166
13. विवेकानन्द साहित्य, चतुर्थ खण्ड, पृष्ठ 13
14. जन्माद्यस्य यतः, ब्रह्मसूत्र, 1.1.2
15. स ईश्वर अनिर्वचनीय प्रेमस्वरूपः (चि.सा. चतुर्थ खण्ड, पृष्ठ 9)

ISSN : 2394-3580 Swadeshi Research Foundation Vol. – 6, No. - 7 May 2019
A Monthly Journal of Multidisciplinary
International Peer Refereed, Review, Indexing & Impact factor-4.2 Research Journal

पतंजलि योग द्वारा छात्रों के व्यक्तित्व विकास और समाज (पतंजलि योग संदर्भ)

डॉ. प्रशांत शर्मा
(व्याख्याता), (माता जीजाबाई शा. कन्या महाविद्यालय, मोती तबेला, इन्दौर)

व्यक्तित्व विकास आज प्रत्येक क्षेत्र में महत्वपूर्ण होने के साथ–साथ, व्यक्तित्व विकास का क्षेत्र एक उद्योग का रूप धारण कर रहा है। विभिन्न संस्थाएँ आज व्यक्तित्व विकास के कार्यक्रमों का जोर–शोर से प्रचार कर रही है; लेकिन सूक्ष्म दृष्टि से देखने पर यह सतही प्रतीत होते हैं। समाज पर व्यक्तित्व का सर्वाधिक प्रभाव पड़ता है, क्योंकि संपूर्ण समाज एक उच्च व्यक्तित्व का अनुसरण करता है फिर वह यद्पि सकारात्मक एवं नकारात्मक दोनों हो सकते हैं। समाज में उच्च नैतिक व्यक्तित्व का होना अत्यन्त आवश्यक है। प्रश्न यह उत्पन्न होता है कि वर्तमान समाज में प्रत्येक क्षेत्र में व्यक्तित्व विकास पर बल देने के उपरान्त भी समाज अनैतिकता, असंवेदनशीलता, नैतिक पतन इत्यादि की ओर अग्रसर क्यों हो रहा है। विद्वानों के मतानुसार वर्तमान शिक्षा मात्र एक औपचारिकता बन चुकी है। व्यक्तित्व विकास भी सिर्फ एक सतही आवरण की तरह प्रत्येक शिक्षा संस्थानों में क्रियान्वित हो रहा है। जिसके फलस्वरूप समाज में सच्ची नैतिकता, संवेदनशीलता, मानवीयता, धर्म आदि का अभाव दिखाई दे रहा है। छात्र समाज के महत्वपूर्ण अंग होते हैं। संपूर्ण समाज के नींव के रूप में, जड़ के रूप में छात्र ही भविष्य के समाज की दिशा तय करते हैं। इनका व्यक्तित्व ही समाज को सही गति प्रदान करने में सक्षम होता है।

व्यक्तित्व विकास का महत्व श्री अरविन्द कहते हैं कि ''एकमात्र सच्ची शिक्षा वह होगी जो व्यक्ति के माध्यम से समाज एवं राष्ट्र के वास्तविक कार्य के लिए उपकरण हो।'[1] जो शिक्षा छात्र अपने विद्या अध्ययन काल में प्राप्त करता है उसका प्रभाव उसके संपूर्ण जीवन पर पड़ता है, फलस्वरूप प्रत्येक जीवन समाज का निर्माण करता है। इस संदर्भ में छात्र का व्यक्तित्व उच्च कोटि का होना आवश्यक हीं नहीं अपितु अनिवार्य हो जाता है। विद्वानों के मतानुसार शिक्षा का उचित उपयोग न होना, शिक्षा प्रणाली व विषय की कमियों के कारण छात्र दिशाहीन होकर वस्तुवादी एवं उपयोगितावादी जीवन शैली को अपना रहा है। जिसके परिणामस्वरूप समाज में आधुनिकता की अंधी दौड़ के रूप दिखलाई पड़ रहे है।

उपरोक्त संदर्भ में पंतजलि अष्टांग योग व्यक्तित्व विकास को एक नया आयाम, संपूर्णता, सुदृढ़ता प्रदान करने मे सक्षम है। जो कहीं अधिक स्थायी एवं प्राकृतिक है। आधुनिक व्यक्तित्व विकास के क्षेत्र में विद्वान जागरूकता, आत्मज्ञान, स्वाभिमान, विकास क्षमता, आध्यात्मिकता स्वास्थ्य, सामाजिक सरोकारता आदि को सम्मिलित करते है।

छात्रों के व्यक्तित्व विकास में शारीरिक एवं मानसिक विकास बहुत आवश्यक है। स्वस्थ शरीर एवं विचारशील, विवेकयुक्त मानसिकता ही समाज को प्रभावित कर सकती है। इस संदर्भ में पंतजलि 'योग' इन सभी पर पूर्णतः बल देता है तथा इन्हें व्यक्तित्व में शामिल ही नहीं करता, बल्कि विकास अवस्था को चरम तक भी ले जाता है। महान कवि कालिदास अपने विश्रुत ग्रंथ कुमारसंभव में शरीर को लक्ष्य कर बड़ी सटीक टिप्पणी करते हैं कि **''शरीर माद्यं खुल धर्मसाधनाम्''** अर्थात् निश्चत ही शरीर धर्मचर्या का प्रथम साधन है। आधुनिक योगाचार्य रामदेव मानते हैं कि शरीर वह उपकरण है जिसका हमें आने वाले भविष्य में उपयोग करना है।[2] स्वस्थ शरीर व्यक्तित्व विकास की अनिवार्य शर्त है। योग के माध्यम से आसन, प्राणायाम, ध्यान करके शरीर के प्रत्येक अंग को स्वस्थ बनाया जा सकता है।

भारत जैसे विकासशील समाज में शारीरिक स्वास्थ्य के प्रति छात्रों में जागरूकता अत्यधिक न्यून है। योग के माध्यम से विभिन्न संसथाओं में छात्रों के बीच जागरूकता लाकर स्वस्थ्य समाज का निर्माण संभव हो सकेगा। मुनि पंतजलि के अष्टांग मार्ग में 'यम' एवं 'नियम' छात्रों के व्यक्तित्व को एक नया आयाम देते हैं। जिससे शारीरिक विकास के साथ, मूल्य एवं नैतिकता का भी विकास होता है।

आचार्य रजनीश के अनुसार ''शुद्धता व्यक्तित्व का अनिवार्य अंग है।[3] योग की विभिन्न पद्धतियों द्वारा बाहरी एवं आन्तरिक शुद्धता प्राप्त की जा सकती है। साथ ही समाज के लिए अहिंसा को प्रथम योग का प्रथम व्रत के रूप में छात्रों व जन सामान्य में विकसित करने का प्रयास किया जा सकता है। गाँधी जी के मतानुसार भी अहिंसा छात्रों में विकसित कर संस्था एवं समाज सभी को लाभान्वित किया जा सकता है।[4]

इसी प्रकार नैतिकता छात्र जीवन में बेहतर रूप से विकसित की जा सकती है। अगर इसे छात्र जीवन में ही विकसित किया जाए तो आजीवन, व्यक्तिगत एवं सामाजिक रूप से लाभ प्राप्त होगा। अर्थात् 'यम' एवं 'नियम' के माध्यम से छात्रों के व्यक्तित्व में दृढ़ता, संवेदनशीलता, व्यावहारिकता, नैतिकता इत्यादि का विकास आन्तरिक रूप से किया जा सकता है जिससे कि समाज के प्रत्येक वर्ग को लाभ एवं विचारशीलता प्रदान हो सकती है।

समाज में आर्थिक दृष्टि से भी 'यम' व्रत विद्वानों ने बहुत उपयोगी माना है। 'अपरिग्रह' व्रत के माध्यम से समाज में भौतिकता कम होती है। वर्तमान युग में छात्रों में भौतिकता का आवरण दिखाई दे रहा है। समाज शास्त्रियों के अनुसार बढ़ती मांग बढ़ते शौक, छात्रों को गलत दिशा में भटका रहे हैं। जिससे आज चोरी, ईर्ष्या, हिंसा आदि छात्रों में भी कलंक रूप में देखने को मिल रही हैं। जिसका समाज पर भयंकर प्रभाव पड़ रहा है। वर्तमान वस्तुवादी युग में योग के माध्यम से वस्तुओं के प्रति और उनके संग्रह भाव के प्रति एक समझ विकसित की जा सकती है। जिससे समाज में असमानता, दुख और असंतोष व्याप्त होने से रोका जा सकता है।

वर्तमान छात्र शिक्षा को सिर्फ अपनी भौतिक आवश्यकता की पूर्ति का माध्यम मानने लगा है। आचार्य जे. कृष्णमूर्ति के अनुसार वर्तमान शिक्षा प्रणाली से पीढ़ियों ने अपनी महत्वाकांक्षाओं परम्पराओं तथा आदर्शों से विश्व में कष्ट तथा विनाश पैदा किया है।[5] इस संदर्भ में विद्वानों का मत है कि 'यम' व 'नियम' योग प्रशिक्षण एवं योगाभ्यास द्वारा सामाजिक स्तर पर छात्रों के माध्यम से भविष्य में व्यापक परिवर्तन की आशा की जा सकती है। इसी उपयोगिता को जानते हुए विनोबा जी, गाँधी जी, विवेकानन्द जी जैसे आधुनिक चिंतकों ने पतंजलि योग शिक्षा को उपयोगी माना है।[6]

समाजशास्त्रियों व मनोवैज्ञानिकों के मतानुसार समाज में आध्यात्मिक प्रवृत्ति का होना समाज में संतुलन लाता है। इसको अनदेखा नहीं किया जा सकता है। छात्रों में दया, करूणा, प्रेम, सहानुभूति व जगत के प्रति अलग दृष्टिकोण का होना आवश्यक है। गाँधी जी के दृष्टिकोण से सामाजिक स्तर पर चित्त का शुद्धिकरण एवं सौम्य दृष्टिकोण आवश्यक है। इसके लिए योग के सभी अंग छात्रों में वैचारिक एवं रचनात्मक प्रक्रिया को उत्पन्न करते हैं। जिससे समाज में संतुलन उत्पन्न होता है। प्राचीन काल में समाज अपेक्षाकृत अधिक शांत व संतुलित था। जिसका कारण प्राचीन शिक्षा पद्धति थी। जो गुरूकुल के माध्यम से सर्वांगीण विकास पर आधारित थी।

निष्कर्ष: समाज में संतुलन, विश्वबन्धुत्व की भावना, साहचर्य आदि भावना विकसित करने के लिए छात्रों का योग के माध्यम से विकास आवश्यक है क्योंकि योग सर्वांगीण विकास के साथ, वैचारिक प्रक्रिया को भी प्रभावित करता है। युवा शक्ति की सकारात्मकता ही समाज को एक बेहतर दिशा प्रदान कर सकती है। जिससे आदर्श समाज की स्थापना संभव हो सकती है। पतंजलि अष्टांग योग के माध्यम से आगामी पीढ़ी को इस रूप में ढाला जा सकता है जो कि भारत को विश्व गुरू के रूप में पुनः स्थापित की जा सकें।

संदर्भ सूची :–

1. श्री अरविन्द नमी शिक्षा
2. स्वामी रामदेव : विज्ञान की कसौटी पर योग
3. Datta D.M. The Philosophy of Mahatma Gandhi.
4. विनोबा : अहिंसा, विचार और व्यवहार
5. ओशों : पतंजलि योग सूत्र
6. विवेकानन्द साहित्य
7. डॉ. सरोज सक्सेना : भारतीय शिक्षास्त्री एवं उनकी दार्शनिक विचारधाराऐं।

स्त्री संवेदना का मार्मिक आख्यान 'अ अस्तु का'

आरती परमार
(शोधार्थी), हिन्दी अध्ययनशाला, विक्रम विश्वविद्यालय, उज्जैन

हिन्दी साहित्य के इतिहास में साहित्य जीवन का एक प्रतिबिम्ब है और इसी जीवन को प्रतिबिम्बित करने के लिए हमने साहित्य के विभिन्न रूपों को अपनाया है। इन सभी रूपों में कथा–साहित्य सबसे अधिक लोकप्रिय और प्रभावोत्पादक साहित्यांग रहा है। सजीवता, स्वभाविकता आदि गुणों के कारण ही कथा–साहित्य जीवन को प्रतिबिम्बित करने की अधिक क्षमता रखता है तथा इसके माध्यक से जीवन के वास्तविक रूप का देखा जाता है।

कथा–साहित्य के विभिन्न रूपों में उपन्यास और कहानी का समावेश होता है, जो पाठकों में कौतूहल जगाकर उनकों अपनी और आकर्षित करता है तथा उनकी जिज्ञासा की स्वाभाविक प्रवृत्ति को तृप्त करता है। हिन्दी में उपन्यास शब्द 'उप' तथा 'न्यास' के योग से बना है। जिनके अर्थ क्रमशः 'समीप' तथा 'वस्तु' है। अंग्रेजी में इसे 'नॉवेल' कहा जाता है। इस प्रकार उपन्यास जीवन की घटनाओं को समाहित किये हुए हैं।

डॉ. श्याम सुन्दर दास– ''उपन्यास मनुष्य के वास्तविक जीवन की काल्पनिक कथा है।''[1]

सामान्यतः उपन्यास शब्द मानव की आनंदमयी चेतना का ही एक साहित्यिक रूप ही है। जिसमें मनुष्य के जीवन की व्यापक झाँकी को, घटना और प्रतिघटनाओं के माध्यम से चित्रित करने का प्रयास किया है।

हिन्दी में भिन्न–भिन्न साहित्यकारों ने उपन्यास को अपनी रूचि के अनुसार परिभाषित करने का यथोचित प्रयास किया है–

आचार्य रामचन्द्र शुक्ल– ''वर्तमान जगत में उपन्यासों में बड़ी शक्ति है। समाज जो रूप पकड़ रहा है, उसके भिन्न–भिन्न वर्गो में जो प्रवृत्तियाँ उत्पन्न हो रही हैं, उपन्यास उनका विस्तृत प्रत्यक्षीकरण ही नहीं करते, आवश्यकतानुसार उनके ठीक विन्यास, सुधार अथवा निराकरण की प्रवृत्ति भी उत्पन्न कर सकते है। लोक या किसी जनमानस के बीच काल की गति के अनुसार जो मूढ़ और चिन्त्य परिस्थितियाँ खड़ी होती रहती हैं, उनकों गोचर रूप में सामने लाना और कभी–कभी विस्तार का मार्ग भी प्रत्यक्ष करना उपन्यासों का कार्य हैं।[2]

स्पष्टतः उपन्यास एक शक्तिशाली विधा है, जो समाज के परिवर्तनों को प्रस्तुत करता है। एक उपन्यासकार मानव जीवन का यथार्थ चित्रण प्रस्तुत करते हुए जीवन में व्याप्त विषमताएँ है उनकों समग्रता के साथ चित्रित कर के समस्याओं को सुधारने का प्रयास करता है।

उपन्यास लेखन की इस कड़ी को आगे बढ़ाते हुए विशिष्ट रचनाशैली,नवीन जीवन बोध और शब्द के साथ खेलते हुए लीक से हटकर साहित्य में अपनी एक अलग पहचान बनाने वाली लेखिका–ज्योत्स्ना मिलन है।

बम्बई में अषाढ़ कृष्ण एकादशी के दिन प्रसिद्ध कवि कथाकार वीरेन्द्र कुमार जैन के यहाँ 19 जुलाई 1941 में जन्मी प्रसिद्ध प्रतिभाशाली लेखिका ज्योत्स्ना मिलन जी ने समाज में व्याप्त विभिन्न प्रकार की सामाजिक घटनाओं को जिसमें स्त्री को केन्द्र में रखते हुए उससे संबंधित घटनाओं को अपने लेखन का विषय बनाकर उन्हें समाज के सामने लाने का सार्थक प्रयास किया है।

'अ अस्तु का' जैसी सर्वोत्कृष्ट कृति देने वाली ज्योत्स्ना मिलन का हिन्दी साहित्य में महत्वपूर्ण स्थान है। उनके उपन्यास में घरेलू और सामाजिक पारिवारिक अत्याचारों से लेकर के आध्यात्मिक चिंता आदि सब एक स्त्री के होते हैं।''[3] ज्योत्स्ना जी के उपन्यास में इन विसंगतियों को उजागर करने वाले चित्रों को देखा जा सकता है। स्वतंत्र्योत्तर हिन्दी साहित्य के क्षेत्र में कई लेखिका जैसे चित्रा मुगद्ल, राजी सेठ, सूर्यबाला जैसी लेखिकाओं के समय में अपना स्थान रखने वाली सुविख्यात व महानुभवी साहित्यका ज्योत्स्ना मिलन जी का नाम वीरेन्द्रकुमार जैन के कारण विरासत में मिला

है, ऐसा नहीं है, मिलन जी ने अपने लेखन के माध्यम से एक अलग पहचान बनाई है।

ज्योत्स्ना जी के पिताजी साधारण व्यक्ति नहीं थे, वे साहित्य के बहुत बड़े कवि, कथाकार और अनुवादक थे, जिसका लाभ ज्योत्स्ना जी को बचपन से ही मिलता रहा है।

ज्योत्स्ना जी के पिताजी बागड़ के निवासी थे। गुजरात की उत्तरी और राजस्थान की दक्षिणी सीमा पर बागड़ था, जिससे इनको राजस्थानी और गुजराती दोनों का ही ज्ञान रहा था, जो ज्योत्स्ना जी को बचपन में ही प्राप्त हो गया था। उन्होंने घर के कार्यो में अपने योगदान के साथ ही अपने छोटे भाई–बहनों का ध्यान रखने की भी जिम्मेदारी निभाती थी।

ज्योत्स्ना मिलन को उनके पहले उपन्यास 'अपने साथ' से उतना नहीं जानते, जितना की दूसरे उपन्यास 'अ अस्तु का' के माध्यम से जानते है। मिलन जी को उपन्यास के अलावा कविता, कहानी के माध्यम से भी प्रसिद्धि मिली है।

ज्योत्स्ना मिलन के संदर्भ में कृष्ण बलदेव वैद का मत है कि–"मुझे (अ अस्तु का) कई बातों ने बहुत खुश किया – कथा का अभाव, स्थान की संकेतात्मक उपस्थिति, समय का अनूठा प्रयोग, क्रमहीनता, तमाम तथाकथित औपन्यासिक तत्वों का त्याग, मासूमियत और शरारत का खूबसूरत घुलाव, ह्यूमर, बड़े–बड़े सवालों के साथ दिलचस्प खेल, फैन्टेसी, ऐसा उपन्यास एक सहज, सबल, सिसली–प्रेम नारी ही लिख सकती थी।"[4]

लीक से हटकर लिखने वाली ज्योत्स्ना जी की रचनाओं में स्त्रियों के मार्मिक चित्रण को उकेरने का प्रयास किया गया है। "ज्योत्स्ना मिलन अपनी रचनाओं को खामोशी की अनेक तहों में लपेटकर तहरीर करती हैं। आसमान केवल आसमान नहीं होता। वह स्त्रियों की स्वतन्त्रता का प्रतीक हो जाता है।"[5]

उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट है कि ज्योत्स्ना जी अपनी हर रचनाओं को बड़ी ही खामोशी के साथ गहरी और अनूठे ढंग से समाज के सामने लाने का तथा आसमान को स्त्रियों के जीवन की स्वतंत्रता के प्रतीक के रूप में बताने का सार्थक प्रयास किया है।

ज्योत्स्ना मिलन ने अपने उपन्यासों में स्त्री को केन्द्र में रखकर के समाज में व्याप्त विकृतियों, कुंठाओं, कुरीतियों आदि बुराईयों को सामने लाने का प्रयास किया है। इनकी रचनाओं का क्षेत्र ज्यादा विस्तृत तो नही रहा है फिर भी स्त्री पात्रों के माध्यम से समाज में व्याप्त विसंगतियों पर उन्होंने अपने शब्दों से गहरा प्रहार किया है।

"आलोचक निबंधकार कवि कथाकार, नाटककार, डायरी संस्मरण लेखन रमेश शाह की संगति की सहृदयता और गहन गंभीर चिंतन शक्ति का प्रभाव ज्योत्स्ना जी पर तथा उनके उपन्यास कहानियों में दिखाई देता है।"[6] ज्योत्स्ना जी ने अपने उपन्यास में महिला कथा लेखन में अधिकांशतः नारी विमर्श को अपने उपन्यास, कहानियों का केन्द्र बनाया तथा अपने समय में व्याप्त नारी दशा को एक नये रूप में दुनिया के सामने प्रस्तुत करने का सार्थक प्रयास किया है। मिलन जी सिर्फ एक उपन्यासकार ही नहीं बल्कि एक समीक्षक, अनुवादक और श्रेष्ठ कवयित्री भी रही है।

"एक स्त्री के पास कितनी–कितनी बारीक और कितनी विशद जानकारियां होती हैं, यह उपन्यास अनायास हमारे समक्ष रखता जाता है – बताने की मुद्रा अपनाएँ बिना उपन्यास की नायिका अस्तु का अनुभव संसार और अनुभूति के समक्ष तिरता चला जाता है। यह उपन्यास अस्तु की आंखों से आसपास के परिवेश को, अतीत की स्मृतियों, दार्शनिक तथा भावात्मक कल्पनाओं, विचारों संकल्पों और अनुमानों को देखने का पुनरावलोकन और नवअवलोकन का अवसर सुलभ करता है।"[7]

उपर्युक्त विवरण में ज्योत्स्ना जी ने 'अ अस्तु का' उपन्यास के पात्र 'अस्तु' के आंखों के अनुभवों के माध्यम से उपन्यास में अतीत की स्मृतियों को, भवनात्मक कल्पनाओं, विचारों आदि अनुमानों के अवसर प्रस्तुत करने का प्रयास किया गया है।

"रोजमर्रा की मध्यमवर्गीय जिंदगी, उसकी मार्मिकताएँ–विडंबनाएं, उत्सुकताएं और नाउम्मीदियां, प्रकृति, मानवीय जीवन और चीजों की अपार दुनिया इन सभी को गूंथते हुए जीने–बढ़ने–अहसास करने का सहज अध्यात्म मानों इस उपन्यास की असली मर्म है।"[8]

इस प्रकार उपन्यास के पात्रों के माध्यम से उनके जीवन की मार्मिकताएं विडंबनाएं तथा प्रकृति आदि के साथ ही अहसास कहने का सहज मर्म को उजागर करने का सार्थक प्रयास किया गया है।

ज्योत्स्ना जी के उपन्यास में 'अस्तु' हर बार एक नये रूप में नजर आती है, हर बार वो अपनी अल्हड़ता और मासूमियत से चौंकाती है। ज्योत्स्ना जी के उपन्यास में बचपन का उल्लास किसी ठाठें मारते समन्दर की तरह नजर आता है। किन्तु हर कही आसमान ही दिखाई देता है।

ज्योत्स्नाजी के शब्दों में कहा गया – ''जब कभी बीमार पड़ती उसे दो ही चीजों की जरूरत लगती। उसका पक्का विश्वास था कि देखने को अगर आसमान या पेड़ या नदी–तालाब जैसी कोई चीज हो और खाने को हरी मिर्च के अचार के साथ ठंड़ी रोटी, तो उसका कैसा भी बुखार ठीक हो सकता है। उसने शुरू में ही एक वसीयत लिखी थी मरते समय जो कोई मुझे समन्दर के किनारे या पेड़–पौधों के बीच या कम से कम, खुले आसमान के नीचे ले जाकर लिटा देगा वहीं मेरी कुल सम्पत्ति का मालिक होगा।''[9]

इस प्रकार मिलन जी के इस उपन्यास में 'अस्तु' और उसके चारों ओर के पर्यावरण की चर्चा करते हुए अस्तु के मन की पसंद ना पसंद को दिखाने का प्रयास किया गया है। ज्योत्स्ना जी का उपन्यास 'अ अस्तु का' में पात्रों के माध्यम से मोक्ष की बातें करते हुए कहा गया है, कि मोक्ष केवल 'पुरूष' को ही प्राप्त होता है 'स्त्री' को नहीं।

आजी के अनुसार – ''स्त्री पर्याय से मोक्ष जा ही नहीं सकती। क्योंकि औरत अंतिम कपड़ा नहीं फेंक सकती, इसलिए वो मोक्ष नहीं पा सकती।''[10] उपर्युक्त विवरण से ज्योत्स्ना जी के इस उपन्यास में अस्तु को आजी के द्वारा कही गई मोक्ष की बात का कोई खास फर्क नहीं पड़ता है, उसे अस्तु का अस्तु न रहने से फर्क पड़ने की बात ज्योत्स्ना जी द्वारा की गई है। ज्योत्स्ना जी के उपन्यास की भाषा सरल व सहज है। ''दिखने में सामान्य सी है, पर अनुभव, जानकारी और विचारशीलता से सिझी हुई भाषा दिखाई देती है। भाषा का होना भाषा के संगीत के होने जैसा है। इसी भाषा की सादगी और सादगी के भीतर अस्तु की प्रश्नकुलता, जिज्ञासा होने और न होने का सच और कल्पनाशीलता, चेतना को स्पर्श करते हुए बताया गया है।''[11]

इस प्रकार से ज्योत्स्ना जी ने उपन्यास में भाषा के माध्यम से अस्तु की अनन्त जिज्ञासाओं और कल्पनाशीलताओं को बड़ी सादगी से चित्रित करने का प्रयास किया है।

''अस्तु के प्रश्न–आप करती क्या है?''[12]

''वस्तुतः ज्योत्स्ना जी ने एक स्त्री को घर के कामों तक ही सीमित होना नहीं बल्कि कही और नौकरी करने से उसकी पूर्णता को समाज के सामने लाने का सार्थक प्रयास किया है।

ज्योत्स्ना जी ने 'अ अस्तु का' में आसपास की स्त्रियाँ और पुरूष किस प्रकार से धन–साधन के आधार पर व्यवहार करते है तथा जोड़–तोड़ से अपनी दुनियादारी चलाते है। यह सब भी ज्योत्स्ना जी ने अस्तु के माध्यम से समाज के सामने प्रस्तुत किया है।

ज्योत्स्ना जी के उपन्यास में ऐसे चरित्र आते है जिनका घटनाओं से कोई संबंध नहीं है, मगर जहाँ एक बात खत्म होती है, वहीं दूसरी शुरू हो जाती है। ''अ अस्तु का में घटनाएँ नहीं, स्मृतियाँ है, एक–दूसरे के साथ गुंथी हुई स्मृतियाँ जो जुड़ती चली जाती है। मिलन जी का लेखन कार्य गंभीर होकर भी सहज है।''[13]

इस प्रकार मिलन जी ने इस उपन्यास में घटनाएँ तथा एक–दूसर से जुड़ती हुई स्मृतियों को दिखाया गया है।

इसके अतिरिक्त ज्योत्स्ना जी ने अपनी अन्य रचनाओं जैसे – अपने साथ, केशरमाँ, चीख के आर–पार, अँधेरे में इंतजार आदि के द्वारा समाज की स्त्रियों की आर्थिक, पारिवारिक, मांसिक चिंताएँ आदि मार्मिक दशाओं को ज्योत्स्ना जी ने समाज के सामने लाने का सटीक प्रयास किया है।

निष्कर्षतः कहा जा सकता है कि ज्योत्स्ना जी ने स्त्रियों के जीवन की सामाजिक पारिवारिक विसंगतियों को उजागर करने का सार्थक प्रयास किया है। ज्योत्स्ना जी का कथा साहित्य के क्षेत्र में एक विशिष्ट स्थान रहा है, जिसमें मनुष्य के जीवन की

अंतर्जगत और बाह्यजगत की जटिलताओं को उजागर करते हुए देखा जा सकता है। उनका कथा–साहित्य समाज और संस्कृति दोनों को समझने का माध्यम रहा है, जिसमें अपने सृजन कार्य के बीज को बोते हुए अपनी रचनाओं को धैर्य के साथ बड़े आदर और बारिकी से बुनने वाली ज्योत्स्ना जी का साहित्य के क्षेत्र में सर्वोत्कृष्ट योगदान रहा है।

संदर्भ ग्रन्थ सूची :–

01. डॉ. पूरनचंद टण्डन व डॉ. ममता सिंगला : साहित्यिक विधाओं के सिद्धांत, संदर्भ प्रकाशन, दिल्ली पृष्ठ क्रमांक – 96
02. डॉ. रामचन्द्र शुक्ल : हिन्दी साहित्य का इतिहास, नागरी प्रचारिणी सभा काशी पृष्ठ क्रमांक –513
03. अशोक वाजपेयी : (कभी–कभार) जनसत्ता, 2009
04. कृष्ण बलदेव वैद के पत्र से
05. ज्ञान प्रकाश विवेक : (जहाँ प्रकृति एक दोस्त की तरह है), पुस्तक वार्ता (नवम्बर–दिसम्बर/11)
06. ज्योत्स्ना मिलन : कहते–कहते बात को (साक्षात्कार), पृष्ठ क्रमांक –119
07. पंकज : (अनूठे शिल्प मे ंसूक्ष्म प्रस्तुति), इंडिया टुडे, 15 दिसम्बर 1995
08. अशोक वाजपेयी : (कभी–कभार), जनसत्ता 2009
09. ज्योत्स्ना मिलन : 'अ अस्तु का' वाग्देवी प्रकाशन, बीकानेर, पृष्ठ क्रमांक –134
10. ज्योत्स्ना मिलन : 'अ अस्तु का' वाग्देवी प्रकाशन, बीकानेर, पृष्ठ क्रमांक –111
11. ज्ञान प्रकाश विवेक : पुस्तक वार्ता (नवम्बर–दिसम्बर/11)
12. पंकज : इंडिया टुडे (15 दिसम्बर 1995)
13. ज्योत्स्ना मिलन : कहते–कहते बात को (साक्षात्कार)

ISSN : 2394-3580 Swadeshi Research Foundation Vol. – 6, No. - 7 May 2019
A Monthly Journal of Multidisciplinary
International Peer Refereed, Review, Indexing & Impact factor-4.2 Research Journal

श्रीलाल शुक्ल के व्यंग्य निबंधों में सामाजिक विसंगतियाँ

तारा वाणिया
शोधार्थी, हिन्दी अध्ययनशाला, विक्रम विश्वविद्यालय, उज्जैन

हिन्दी साहित्य के इतिहास में व्यंग्य का आर्विभाव बीसवी शताब्दी की घटना है। बीसवीं सदी के शुरु हो जाने के बाद भी मानव जीवन पर मध्ययुगीन विसंगतियों के बादल किसी–न–किसी रूप में छाए हुए थे। आज वर्तमान में भी सर्वत्र विसंगतियों, विडम्बनाओं, बुराईयों का बोल–बाला है। ऐसा कोई क्षेत्र नहीं है जो विसंगतियों से अछुता हो। मानव का निजी जीवन तथा सामाजिक परिस्थितियाँ कई विरोधों को अपने अंदर समाहित किए हुए है। समाज में फैली विसंगतियों का विरोध व्यंग्य के द्वारा किया जाता रहा है। मनुष्य अच्छा करे या बुरा दोनों स्थितियों में व्यंग्य के माध्यम से विरोध या सहमति जताई जाती है। मनुष्य और समाज के हित को ध्यान में रखते हुए किया गया विरोध व्यंग्य ही कहलाता है। जब हम असत्य, अत्याचार, अनाचार, बेईमानी आदि से असंतुष्ट होते है तब हमारा हृदय भाव विह्वल होकर दुःख व्यक्त करता है। जिसे हम अभिव्यक्ति के माध्यम से व्यक्त करते है। व्यक्त करने की उसी दशा में ही व्यंग्य का अवतरण माना जा सकता है।

"व्यंग्य, सत्य अन्वेषी होता है। वह मुखौटों को नोच डालना चाहता है। कृत्रिम आवरण हटाकर नया प्रकाश फैलाना चाहता है ताकि शताब्दियों से फैले अंधकार से जनता को उभारा जा सके।"[1]

सामान्यतः व्यंग्य शब्द कई अर्थों में प्रयोग होता रहा है। हिन्दी में व्यंग्य शब्द मूलतः संस्कृत भाषा की देन है। आधुनिक समय में व्यंग्य शब्द का प्रयोग ज्यादातर होने लगा है। अंग्रेजी में इसे 'सटायर' कहा जाता है। इस प्रकार व्यंग्य अपने अंदर कई अर्थों को समाहित किए हुए है।

"व्यंग्य शब्द का प्रयोग कई अर्थों में किया जाता है। इसमें सामान्य व विशिष्ट, प्राचीन एवं आधुनिक सभी तरह के अर्थ है; जो विकास के क्रम में इस शब्द को मिलते रहे है। मूलतः संस्कृत में व्यंग्य का संबंध अर्थ–बोध की प्रक्रिया से था और इसका अर्थ था – 'शब्द की व्यंजनावृत्ति द्वारा प्रकट होने वाला अर्थ' (व्यंग्य – वि + अंज + व्यत्) अर्थात् शब्द का वह अर्थ जो व्यंजनावृत्ति के द्वारा प्रकट हो, गूढ़ और छिपा हुआ अर्थ।

हिन्दी तथा अन्य भारतीय भाषाओं के विचारकों–लेखकों ने भी व्यंग्य को परिभाषित करने का यथोचित प्रयास किया है –

डॉ. शेरजंग गर्ग के मतानुसार – "व्यंग्य एक ऐसी साहित्यिक अभिव्यक्ति या रचना है, जिसमें व्यक्ति तथा समाज की कमजोरियों, दुर्बलताओं, करनी एवं कथनी के अंतरों की समीक्षा अथवा निंदा भाषा को टेढ़ी भंगिमा देकर अथवा अगंभीर होते हुए तटस्थ हो सकती है, निर्दय लगते हुए दयालु हो सकती है, प्रहारात्मक होते हुए तटस्थ हो सकती है, मखौल लगती हुई बौद्धिक हो सकती है। अतिश्योक्ति एवं अतिरंजना का आभास देने के बावजूद पूर्णतः सत्य हो सकती है। व्यंग्य में आक्रमण की उपस्थिति अनिवार्य है।"[2]

स्पष्टतः व्यंग्य हमें वास्तविकता से परिचित करवाने के साथ–साथ समाज में फैली सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक आदि विकृतियों से भी अवगत कराता है। एक व्यंग्यकार की दृष्टि व्यक्ति और समाज की विसंगतियों को देखकर उन्हें अभिव्यक्त करने के लिए स्वयं को प्रेरित करती है। प्राचीन समय से ही व्यंग्यकारों ने समाज में फैली विसंगतियों को व्यंग्य के द्वारा अपने–अपने ढंग से प्रस्तुत करने का सफल प्रयास किया है। हरिशंकर परसाई, रवीन्द्रनाथ त्यागी, शरद जोशी आदि रचनाकारों ने अपने व्यंग्य लेखों के माध्यम से समाज की सभी आर्थिक, धार्मिक, सामाजिक, राजनीति आदि विद्रुपताओं को उजागर किया है।

उसी श्रृंखला में व्यंग्य लेखन की इस कढ़ी को आगे बढ़ाते हुए एक सशक्त व्यंग्यकार के रूप में उभरकर सामने आये – 'श्रीलाल शुक्ल'।

उत्तरप्रदेश के अतरौली नामक स्थान पर जन्में (1925–2011) महानुभवी, प्रसिद्ध, उत्कृष्ट प्रतिभाशाली व्यंग्यकार श्रीलाल शुक्ल जी ने भी समाज में व्याप्त विभिन्न या प्रत्येक क्षेत्र की विसंगतियों को अपने व्यंग्य

ISSN : 2394-3580 Swadeshi Research Foundation Vol. – 6, No. - 7 May 2019
A Monthly Journal of Multidisciplinary
International Peer Refereed, Review, Indexing & Impact factor-4.2 Research Journal

लेखन का विषय बनाकर उन्हें समाज के समक्ष लाने का उपयुक्त व सार्थक प्रयास किया है।

विश्व साहित्य में 'रागदरबारी' जैसी सर्वोत्कृष्ट कृति देने वाले श्रीलाल शुक्ल जी हिन्दी व्यंग्य परम्परा के महत्वपूर्ण स्तम्भ है। उनके व्यंग्य का क्षेत्र अत्यधिक विशाल है, जिसमें समाज की सभी विसंगतियों को उजागर करने वाले चित्रों को बहुतायत में देखा जा सकता है। स्वातंत्र्योत्तर हिन्दी व्यंग्य साहित्य के क्षेत्र में हरिशंकर परसाई, रवीन्द्रनाथ त्यागी, शरद जोशी के बाद आने वाले सशक्त सुविख्यात व महानुभवी व्यंग्यकार श्रीलाल शुक्ल जी के नाम व काम का परिचय देने की आवश्यकता नहीं है। वह स्वयं एक अभिन्न परिचायक है। श्रीलाल शुक्ल जी को लोग उनके पहले उपन्यास 'सूनी घाटी का सूरज' से उतना नहीं जानते जितना उन्हें उनके प्रथम व्यंग्य संग्रह 'अंगद का पाँव' के माध्यम से जानते है। 'रागदरबारी' उपन्यास और श्रीलाल शुक्ल ये दोनों एक ही सिक्के के दो पहलू के समान है। शुक्ल जी को व्यंग्य लेखन में प्रसिद्धि उनके उपन्यास 'रागदरबारी' के माध्यम से मिली।

शुक्ल जी के संदर्भ में अखिलेश का मत है कि – "हमारे लोकतंत्र की यात्रा सपनों के विध्वंस की संस्थाओं, मूल्यों, नैतिकताओं और आस्थाओं के क्षरण की कथा है। श्रीलाल शुक्ल उसी क्षरण के उद्घाटनकर्ता रचनाकार है। राजनीति की पतनशीलता विकास गोरखधंधा जनहित का पाखण्ड – भारतीय जनतंत्र की निर्विवाद वास्तविकताओं पर तीक्ष्ण और विस्तृत कटाक्ष उनकी रचनाशीलता की धुरी है। गद्य लेखन में भारतीय लोकतंत्र की इतनी सख्त और विस्तृत विवेचना अन्यत्र दुर्लभ है।"[3]

श्रीलाल शुक्ल जी ने साहित्यिक जीवन में समाज की जड़बद्ध होती जा रही समस्याओं को उभारने का यथोचित प्रयास करते हुए समाज की समस्याओं को आम आदमी से जोड़ते हुए स्वयं लिखा है कि – "वास्तव में आम आदमी को पहचानने का काम मेरा, मेरा मतलब है कि राजनीतिक, समाजशास्त्र, साहित्य और कला आदि के स्तर पर आम आदमी को पहचानने का काम इतना आसान नहीं है, बल्कि ऐसा भी है कि शताब्दियों से कला और साहित्य के क्षेत्र में जो रुढ़िया पनपी हैं, उन्होंने आम आदमी की पहचान को और भी मुश्किल बना दिया है।"[4]

उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट है कि शुक्ल जी ने अपनी बहुआयामी रचनाओं में समाज की सामाजिक, आर्थिक, धार्मिक, राजनीतिक आदि विसंगतियों को उजागर करने का सार्थक प्रयास किया है।

"श्रीलाल शुक्ल जी विसंगतियों पर आक्रोश व्यक्त करते है, उनकी यह अभिव्यक्ति रचना के स्तर पर होती है। वे विसंगतियों की खोज करते है और टूटे मूल्यों की पुनर्स्थापना का आह्वान करते है।"[5]

श्रीलाल शुक्ल जी ने अपने व्यंग्य निबंधों में समाज की विकृतियों, विद्रुपताओं, कुंठाओं, कुरीतियों आदि बुराइयों को सामने लाने का यथोचित प्रयास किया है। इनकी रचनाओं का क्षेत्र अत्यधिक विस्तृत है। समाज की सभी विसंगतियों पर उन्होंने गहरा कुठाराघात किया। मनुष्य सामाजिक प्राणी होने के नाते अपनी सभी आवश्यकताओं की पूर्ति समाज में रहकर ही करता है। उसे समाज के सभी नियम–कायदों को समझते हुए चलना पड़ता है।

आधुनिक समाज में कई ऐसी विसंगतियाँ है जो किसी अभिशाप से कम नहीं है। स्वातंत्र्योत्तर भारतीय समाज में तीव्रता से बढ़ती जा रही समस्त सामाजिक विकृतियों पर श्रीलाल शुक्ल जी कटाक्ष करते है और लोगों के चेहरों से बनावटी मुखौटे को निकाल फेंकने का समुचित प्रयास करते है। शुक्ल जी समाज व जीवन में मौजूद विसंगतियों के लिए जिम्मेदार अभ्यन्तरिक विद्रुपताओं को उजागर करने का सफल प्रयास करते है।

शुक्ल जी ने समाज में प्रतिष्ठित वर्ग जिनको शुक्ल जी ने कुत्ता–पालन के प्रतीक के रूप में व्यक्त किया है। यहाँ उन्होंने कुत्ता किस प्रकार बड़े लोगों के जीवन में आर्थिक स्थिति को दर्शाता है, इस पर कटु व्यंग्य करते हुए लिखा है कि – "कुत्ता–विशेषज्ञ की हैसियत से अब उन्हें काफी बड़े पैमाने पर स्वीकार कर लिया गया। उनको कुत्ता–प्रदर्शनियों के उद्घाटन के लिए और उनकी बीबी को पुरस्कार वितरण के लिए बुलाया जाने लगा। वे जहाँ–जहाँ तबादले पर गए वहाँ–वहाँ उनकी अध्यक्षता में कुत्ता कल्याण समितियाँ बनाई गई। सफलता की इन मंजिलों को पार करके आखिर में उन्हें यह आध्यात्मिक अनुभव हुआ कि उनके भी जीवन का एक अर्थ और उस अर्थ का नाम कुत्ता है।"[6]

शुक्ल जी ने समाज में पनपती जा रही अमीरी–गरीबी की असमानता पर व्यंग्य किया है कि – "शहर में दीवाली का कुल यही अभिप्राय है कि अमीर इतनी ज्यादा अमीरी दिखाएँ कि गरीबों में अपनी गरीबी का अहसास और भी गाढ़ा हो जाए। अगर हम देश में सर्वहारा–वर्ग को क्रांति के लिए खड़ा करना चाहते है तो इसका सबसे सस्ता नुस्खा यह है कि शहरों में दीवाली का त्यौहार तीन दिन के बजाय तीन महीने के लिए खींच दिया जाए। लोग सफेद और काले पैसे का करिश्मा देखते–देखते इतना उकता जाएँगे कि अपने आप क्रांति कर बैठेगें।"[7]

आधुनिक समय में व्याप्त पाश्चात्य सभ्यता का अनुकरण की समस्या पर भी शुक्ल जी व्यंग्य करते है। उन्होंने आज की इस व्यवस्था तथा लोगों की मानसिकता पर व्यंग्यात्मक प्रहार करते हुए अपनी रचना 'सफेद कालर का विद्रोह' में मध्यम वर्ग की दोहरी मानसिकता सुविधायुक्त जीवन तथा चारित्रिक कमजोरी को स्पष्ट करते हुए कहा है कि – "सफेद–कालर के विद्रोह यानी मध्यवित्त लोगों की युद्धकामिता यानी मिडिल क्लास मिलिटेंसी की प्रेरक शक्ति मँहगाई और मुद्रास्फीति ही नहीं है। उसके पीछे सामाजिक कुरीतियाँ, व्यक्तिगत कुकर्म और हर सुविधापरक पदार्थ को खरीदने की स्पर्धा भी है जो सफेद कालर को अंधाधुंध खर्च करने और पैसे की कमी पर लगातार रोने को बाध्य करती है।"[8]

इस प्रकार शुक्ल जी ने समाज की बदलती व्यवस्था पर कटाक्ष किया है।

समाज में अनेक इकाइयाँ है और उनमें अनेक प्रकार की समस्याएँ है। उन्हीं विसंगतियों में एक विसंगति 'दहेज प्रथा' है। 'दहेज प्रथा' हमारी आधुनिकता पर एक बहुत बढ़ा धब्बा है। समाज की यह प्रथा हमारी प्रगतिशीलता की कलाई खुरच देती है। आधुनिक युग में दहेज प्रथा का रूप उपहार प्रथा ने लिया है। आज वही दहेज उपहार के रूप में दो गुना करके दिया जाता है। दहेज प्रथा का यह रूप नौकरी पैसा वर्ग में ज्यादा देखा जाता है। इसी संदर्भ में शुक्ल जी व्यंग्यात्मक कटाक्ष करते है कि – "मोटी खादी के पजामें के नीचे रेश्मी चड्ढ़ी छिपी है, उगते सूर्य की सुनहरी आभा में आग छिपी है। मंत्री के घर में पलंग के नीचे टुटहे बक्से में एक करोड़ के नोट छिपे है और कन्या के बांछित गुणों के पीछे श्वसुर के सम्पूर्ण विस्कुटों की खनक छिपी है।"[9]

उपर्युक्त उद्धरण से स्पष्ट है कि आज भी 'दहेज प्रथा' भयानक रूप से समाज में व्याप्त है। इसी के आधार पर ठेकेदार ने दहेज में अगाध सम्पत्ति और सैकड़ों एकड़ जमीन जायदाद देकर आई.ए.एस. की मर्यादा के अनुकूल टी.एम. सिंह ने अपनी कन्या का विवाह किया।

आधुनिक युग में तीव्रता से बढ़ रहे भ्रष्टाचार पर भी शुक्ल जी व्यंग्य की तीखी मार मारते है। समाज का कोई वर्ग भ्रष्टाचार से अछुता नहीं है। आम–आदमी इसकी चपेट में जकड़ता जा रहा है। यह भ्रष्टाचार फिर किसी भी क्षेत्र में हो जैसे – उच्च शिक्षा, नौकरी, व्यापार, विकास आदि। देश के विकास में बाधा बन रहे भ्रष्टाचार पर शुक्ल जी व्यंग्य करते है कि – "देश विकास की प्रक्रिया के दो मूल तत्व है – भ्रष्टाचार और सरकारी लद्धड़पन। यहाँ भ्रष्टाचार ही लद्धड़पन का इलाज है उसी के सरकाने से एकड़ा सरकता है, उसी के जोर से विकास की घोड़ी चलती है। भ्रष्टाचार खत्म हो गया तो लद्धड़पन के सिवाय बचेगा क्या ? सारा देश लद्धड़ों और काहिलों के किले में कैद हो जाएगा।"[10]

इस प्रकार शुक्ल जी ने देश में दिन दुगनी और रात चौगुनी तरक्की से बढ़ते जा रहे भ्रष्टाचार को उजागर करने का प्रयास किया है। अतः आज भ्रष्टाचार भी व्यक्ति के हुनर की पहचान बन गया है।

इसके अतिरिक्त शुक्ल जी ने अपने अन्य व्यंग्य लेखों जैसे – जीती जागती सरकार का हसीन सपना, एक वर्ष युवा वर्ग के नाम, महाजनी सभ्यता और दाढ़ी मूंछ की कथा, होरी और उन्नीस सौ चौरासी, अंगद का पाँव, कुत्ते की पिल्ले को नसीहत कुत्ते और कुत्ते, पहली चूक, दुभाषिय आदि के माध्यम से समाज में दिनोंदिन बढ़ती जा रही विभिन्न प्रकार की विद्रुपताओं पर पुरजोर कटाक्ष किया है।

निष्कर्षतः कहा जा सकता है कि श्रीलाल शुक्ल जी ने सामाजिक विसंगतियों को उजागर करने का जो सार्थक प्रयास किया है, उससे स्पष्ट है कि समाज प्रत्येक व्यक्ति के लिए वह दर्पण या आइना होता है जो उसे समाज में रहते हुए नैतिक कार्य करने

के लिए प्रोत्साहित करता है। हर व्यक्ति अपने जीवन के अनुभवों को समाज में रहकर व समाज से ही सीखता है। लेकिन कभी–कभी समाज में अनेक प्रकार की विद्रूपताएँ जन्म ले लेती है और समाज को गंदा करती है। ये विद्रूपताएँ कहीं और से नहीं आती बल्कि समाज में रहने वाला व्यक्ति ही उसे जन्म देता है। वह अपनी बुरी आदतों व मानसिकता से अनेक सामाजिक विसंगतियों को उत्पन्न करता है। श्रीलाल शुक्ल कुरूपताओं को उद्घाटित करते है। समाज में व्याप्त रुढ़ियों, अंधविश्वास, ढोंग, पाखण्ड, जातीयवाद, वर्ण भेद, स्त्री की स्थिति, दहेजप्रथा आदि सभी विसंगतियों के पहलुओं पर व्यंग्य किया है जो समाज को जड़ से खोखला कर रही है। सामाजिक विसंगतियाँ दिनोंदिन अपना भयावह रूप धारण करती जा रही है। इन्हीं विसंगतियों, विकृतियों, कुण्ठाओं के प्रति श्रीलाल शुक्ल जी ने समाज को अपने व्यंग्य बाणों के माध्यम से जागृत करने का उत्कृष्ट व सार्थक प्रयास किया है। उनका यह लेखन समाज व देश के लिए सर्वोपरि होने के साथ ही साथ उपयोगी व उत्कृष्ट भी है।

संदर्भ ग्रन्थ सूची :–

1. विक्रमजीत, आधुनिक हिन्दी काव्य में राजनीतिक व्यंग्य, पृ.7.
2. डॉ. विनयकुमार पाठक एवं जयश्री शुक्ल (संपादक), हिन्दी व्यंग्य–कर्म एवं समकालीन परिदृश्य, पृ. 25.
3. अखिलेश (संपादक) – श्रीलाल शुक्ल की दुनिया, संपादकीय पृ. बिंदु पाँच.
4. डॉ. प्रेमजनमेजय, श्रीलाल शुक्ल, विचार, विश्लेषण एवं जीवन, पृ. 216.
5. डॉ. आशा रावत, हिन्दी व्यंग्य निबंध, स्वतंत्रता के बाद, पृ.26.
6. श्रीलाल शुक्ल – जहालत के पचास साल, पृ. 34.
7. वही, पृ. 151.
8. वही, पृ. 243.
9. श्रीलाल शुक्ल – जहालत के पचास साल, पृ. 388.
10. श्रीलाल शुक्ल – खबरों की जुगाली, पृ. 61.

डॉ. सतीश दुबे के रेडियों रुपक में लोक जीवन विशेष सन्दर्भ (महक रही फूलवारी)

रामसिंह सौराष्ट्रीय
(शोधार्थी), हिन्दी अध्ययनशाला, विक्रम विश्वविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.)

लोकसाहित्य में 'लोक' शब्द बहुत ही व्यापक है। इस शब्द में मानव सभ्यता, संस्कृति, धर्म, रीति–रिवाज़, कला, साहित्य से लेकर दैनिक जीवन की मानव सुलभ समस्त क्रियाएँ आदि समाहित है। हमारे सम्पूर्ण वाङमय साहित्य की रचना के समय से ही 'लोक' शब्द प्रचलन में रहा है। इस शब्द की प्राचीनता के विषय में भी कोई सन्देह नही है–"ऋग्वेद के ही सुप्रसिद्ध पुरुषसूक्त में लोक शब्द का व्यवहार जीव तथा स्थान दोनों शब्दों में हुआ है।"[1] फलतः 'लोक' शब्द प्राचीनकाल से अनवरत् चला आ रहा है। आज यह शब्द उस मानव समाज का पर्याय बन गया हैं जो अपनी प्राचीन मान्यताओं एवं परम्पराओं के प्रति आस्थावान है। वह आधुनिक सभ्यता एवं कृत्रिम संस्कृति से परे अपनी प्राचीन सभ्यता और संस्कृति का दामन थामे, अपने युग की मनोवृत्तियों व उसकी पहचान को जीवन्त बनाये हुए है।

लोकसाहित्य का विषय क्षेत्र बहुत ही व्यापक है। उसे किसी क्षेत्र विशेष की परिधि में समाहित करना आज अनुचित प्रतीत होता हैं क्योंकि लोकसाहित्य लोकमानस की सहज अभिव्यक्ति और व्यवहार का साहित्य है–"लोक साहित्य लोकमानस की सहज और स्वाभाविक अभिव्यक्ति है।"[2]

डॉ. सतीश दुबे न सिर्फ रेडियो नाटककार के रूप में जाने जाते है वरन् उन्होंने उपन्यास हायकु कविताएँ, बाल साहित्य, नव साक्षरता पर आधारित साहित्य, पत्र संग्रह, पुस्तक समीक्षा को अपनी साहित्यिक प्रतिभा से सींचा है। लघुकथा के तो वे जनक माने जाते है। दुबे जी का जन्म 12 नवम्बर 1940 को भारत के हृदयस्थल मध्यप्रदेश के इंदौर में हुआ। डॉ. सतीश दुबेजी की साहित्यिक यात्रा का प्रथम सोपान तब प्रारम्भ हुआ जब उनकी पहली व्यंग्य रचना सन् 1960 में 'नोक–झोंक' के नाम से प्रकाशित हुई। तब से दुबे जी अनवरत साहित्य सृजन में लीन रहें। अन्य विधाओं के साथ–साथ उन्होंने रेडियो नाटकों का सृजन भी किया है। उनके रेडियो नाटकों में मानव जीवन के सभी पक्षों का उद्‌घाटन हुआ है किन्तु उनमें हमें लोक जीवन का हुबहु चित्रण दिखाई देता है।

डॉ. सतीश दुबे लोकजीवन की धरातल से जुड़े रुपककार है। उनके रेडियों रुपकों में उन्होंने लोकजीवन के सभी पक्षों को समाहित किया है। उनके रेडियो रुपक 'महक रही फूलवारी' में लोकजीवन की प्रचुरता दिखाई देती है। यह रुपक ग्रामीण परिवेश के चित्रांकन के साथ–साथ लोकजीवन से भी हमें रुबरु करवाता है। डॉ. सतीश दुबे के रुपकों में अनेक अनछुए पहलू है जो लोकजीवन को प्रतिबिम्बित करते है। प्रस्तुत रुपक की सभी कड़ियों में ग्रामीण वातावरण का निर्माण किया है। वे सृजनात्मकता के प्रति समर्पित, बहुआयामी, प्रतिभा सम्पन्न ऐसे सर्जक कलाकार है जिनकी लेखनी का स्पर्श पाकर हिन्दी रेडियों नाटक ने अपना स्वरुप परिष्कृत किया है।

'महक रही फूलवारी' में बारह कड़ियाँ संग्रहित है। प्रत्येक कड़ी में लोकप्रचलित रीतियों, परम्पराओं का जीवन्त चित्रण दिखाई देता है। सांझ के समय जब पति–पत्नि खेत से घर वापस आते हैं तों पत्नी गाँव से बाहर ही छकड़े से उतरकर चलते हुए घर आती है यथा –

पति– अच्छा जब फायदा हो तुम मुझे बता देना, अभी तो बैठों
छकड़े में टच्च ......टच्च चल बेटा नरसिंगा लगा दौड़......
पत्नि – ठीक हैं जो तुम्हारी इच्छा हो किया करों .... अब जरा
छकड़ा रोक दो......मैं यहीं गाँव–गोयरे उतर जाती हूँ ....
घर तक छकडे में बैठकर जाना अच्छा नही लगता ....
पति – जैसी तुम्हारी मर्जी, रुक जा भाई नरसिंगा .....
लो उतरों .... पांव जरा फटाफट बढ़ाना ...... "[3]

उपर्युक्त संवाद में समसामयिक ग्रामीण जीवन में प्रचलित लोक रीति अभिव्यक्त हुई है किंतु युग के बदलते परिवेश में ये रीतियाँ धीरे–धीरे कालकवलित होती जा रही है। आज शहरों के साथ–साथ ग्रामीण जीवन भी तनावग्रस्त होने लगा है। यान्त्रिकीकरण के चलते मानवीय मर्यादाएँ और संवदेनाएँ शुष्क होती जा रही है। बढती स्वार्थ प्रवृत्ति ने संबंधों को खोखला बना दिया है। फलतः आज हर तरफ लोगों के बदलते

चरित्र, दो मुँहापन और अनैतिकता का आलम दिखाई देता है। व्यक्ति को अकेलापन बहुत अच्छा लगता है। पहले जहां परिवार के लोग साथ मिलकर धार्मिक अवसरों पर लगने वाले मेलें, उत्सवों में जाकर झूला–झूलना, नौटंकी, दंगल, कुश्ती, रामलीला आदि का भरपूर आनन्द लेते थे आज वह सब बदल गया है।

डॉ. सतीश दुबे द्वारा सृजित ऐसे अनेक दृश्य है जो लोकजीवन की संवेदनाओं को बहुत नजदीक से व्यक्त करते है। यही वजह हैं कि इनके रुपकों में जहाँ एक ओर छद्म आधुनिकता की झलक दिखाई देती है वहीं दूसरी ओर स्नेहिल और निर्मल लोकजीवन के संस्कार भी दिखाई देते है उन्होंने रिश्तों को अधिक महत्व दिया है। एक बेटी पिता की बात सहर्ष स्वीकार करती है किंतु बाद में उलाहना भी देती है –

''कंत तमारा गांव गोयरे
कांटा घणा बबूल का
रोज सबेरे हूं तो कंडा थापू
म्हारा बाप की भूल का ....''[4]

इसी प्रकार रिश्तों की तुलना का अद्वितीय उदाहरण भी हमें रुपक की तीसरी कड़ी में दिखाई देता है –

''लाडू सा प्यारा सुसरा, पेड़ा देवर जेठ
घेवर मोती सायबा, नणदल खारी सेंव''[5]

डॉ. सतीश दुबे लोक संस्कृति के परिचायक है। इस रुपक की एक कड़ी में जनजातीय लोगों द्वारा मनाए जाने वाले होली के त्यौहार का चित्रण किया है। लोकगीत की ये पंक्तियाँ हमें लोक संस्कृति से परिचित कराती है –

''हाय कैसो आयो त्यौहार
पचास रंग में तो वा पेलाजरंगी
अब कौन सा रंग की करुं हूं मार।''[6]

एक ओर जहाँ दुबेजी के रुपक छोटे–छोटे बेहद लुभावने दृश्यों के साथ अपनी संवेदनशीलता और अर्थवत्ता के साथ अभिव्यक्त होते हैं वहीं श्रोताओं के मानस पटल पर सुखद स्मृतियाँ छोड़ जाते हैं। उन्होंने अपने समय और परिवेश को न केवल अपने रुपकों में प्रस्तुत किया वरन् भोगा और सींचा भी है। उनके रुपकों में हमें न सिर्फ लोक प्रचलित रीतियों की झलक दिखाई देती है अपितु उन्हीं रीतियों के माध्यम से वर्तमान परिप्रेक्ष्य की ज्वलंत समस्याओं के समाधान भी दिये है। दहेज प्रथा की समस्या का समाधान लोकप्रचलित रीति से इस प्रकार प्रस्तुत किया है –

''पति – अब लेकिन–वेकिन जैसे सवाल जवाब मत करों ....
पत्नि – तो मैं विवेक को कार्ड लिख दूँ ......
पति – विवेक को क्या लिखोगी ....उस लकड़ी के घरवालों
को लिखों कि वे कुंकू कन्या तैयार रखें ......''[7]

लोकजीवन की ये परम्परा रही है कि बिना दहेज दिये, कुंकू–अक्षत का तिलक लगाकर कन्या का विवाह सम्पन्न हो जाता था। आज हमें 'कुंकू–कन्या' की विचारधारा को अपनाने की आवश्यकता है। एक समृद्ध और सभ्य समाज की कल्पना तभी साकार की जा सकती है।

लोकजीवन में प्रचलित मांडना परम्परा के दर्शन भी हमे दूबे जी के रुपकों में दिखाई देते है –

''पति–राधा तुम बताओं तो जरा, क्या बना रही थी ये सब .....
पत्नि – वह क्या बतायेगी ....मुझसे पूछों.....मैं इसे दीवार पर
मांडने के मांडने सिखा रही थी ......
पति – पहले संजा मांडते तो सीखाती ......
पत्नी – संजा तो लड़कियाँ एक दूसरे से सीख जाती है पर ये सब सीखना पड़ता है, मेरे को भी माँ ने सीखाया था ....
पति – वाह! कितना बारीक काम है, ऐसा लगता है जैसे सांचों में ढला है।''[8]

इस प्रकार रुपक की अन्य कड़ियों में भी लोकजीवन से संबंधित लोक रीतियों की बात बहुत गहराई और सूक्ष्मता से की है। यह एक पारिवारिक रुपक है अतः इसमें दुबेजी ने परिवार, समाज आदि में होने वाली छोटी–छोटी बातों को बेबाकी के साथ प्रस्तुत किया है।

निष्कर्षतः कहा जा सकता हैं कि डॉ. सतीश दुबे एक ऐसे रुपककार जिन्होंने अपने रुपकों में लोकजीवन से संबंधित, लोकपरम्पराओं, रीतियों एवं संस्कृति के साथ ग्रामीण जीवन के जीवन्त दृश्यों का चित्रण किया है। आज के बदलते परिवेश और लुप्त

होती हुई लोकप्रचलित रीतियों की सार्थक अभिव्यक्ति एवं मानव मन को उनकी पहचान कराने के उद्देश्य से दुबेजी ने उन्हें रुपकों में वर्णित कर नवीन आयाम स्थापित करने का सार्थक प्रयास किया है। अतः कह सकते है कि सतीश दुबे के रेडियों रूपक लोक जीवन के महत्व से स्पंदित है। लोकजीवन उनके रुपकों में पूरी सच्चाई के साथ अंकित हुआ है।

सन्दर्भ :–

1. डॉ. कृष्णदेव उपाध्याय 'लोक संस्कृति की रुपरेखा', राजकमल प्रकाशन पृ. सं. 9
2. डॉ. दिनेश्वर प्रसाद, लोक साहित्य और संस्कृति, नटराज प्रकाशन पृ. सं. 156
3. डॉ. सतीश दुबे 'महक रही फूलवारी' प्रथम कड़ी पृ. 3
4. वही दूसरी कड़ी पृ. 4.
5. वही. तीसरी कड़ी पृ. 8.
6. वही. चौंथी कड़ी पृ. 5.
7. वही. सातवी कड़ी पृ. 11.
8. वही. नौवी कड़ी पृ. 3.

SRF

ISSN : 2394-3580 Swadeshi Research Foundation Vol. – 6, No. - 7 May 2019
A Monthly Journal of Multidisciplinary
International Peer Refereed, Review, Indexing & Impact factor-4.2 Research Journal

योग विज्ञान की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि

डॉ. चौधुरी शिवव्रत महान्ति
निर्देशक, कृष्णराव शोध संस्थान एवं मानद व्याख्याता–प्रा.शा.इतिहास, संस्कृति व पुरातत्त्व,रा.दु.वि.वि., जबलपुर

योग का शाब्दिक अर्थ मिलन अथवा आत्मा का परमात्मा में मिल नाजा हैं।[1] गीता के अनुसार सुखदुख, लाभ, हानि, जय–पराजय आदि में सम्भाव रखना योग है (समत्वं योग उच्चते) पंततलि ने शरीर, इनिद्रय तथा मन पर नियंत्रण स्थापित करके पूर्णता प्राप्त करने के लिए किय गये आध्यात्मिक प्रयत्न को योग बताया है।[2]

योगसूत्र के अनुसार– योगश्चित्तवृत्तिनिरोधः'' अर्थ, चित्त वृत्तियों का निरोध योग है। चित्त वृत्ति के निरोध का आशय मन बुद्धि तथा अंकार से तादात्म्य समाप्त होकर पूर्ण चैतन्य स्वरूप, आत्मा में स्थित हो जाना है। ऐसा योगी काम, क्रोध, राग, द्वेष, लोभ, मत्सर, भय सभी से पर रहता है।[3]

भारतीय इतिहास अनुशीलन करने पर पाया गया है कि योग सिद्धांत, जीवन शैली अथवा योग दर्शन के अधिकांश हिस्से, भारतीय संस्कृति में आद्यकाल अथवा सिंधुकाल से प्रतिष्ठित हैं। उस काल की लिपि का अध्ययन अभी तक सफलता पूर्वक न होने के कारण उनके साहित्य में तो अपरिचित हैं किन्तु उनके शिल्प में अनेक स्थान पर योगियों, योगासन जैसी परंपरा समझ में आती है।[4]

योग की चर्चा हम वैदिक साहित्य में भी पाते है जबकि यज्ञादि का आचरण करने वाले ऋषि–मुनियों से आशा की जाती थी कि वे योग का पालन करें। प्राणायाम तथा प्राण शब्दों का उल्लेख वेदो में अनेक बार आया है। अर्थवेद में एक स्थान पर ''अष्टांग'' योग तथा षड्योग'' उल्लेखित है, इसके अतिरिक्त ''आठ चक्र'' ''नौ द्वार'' तथा एक' ''बाहय गुहा'' जैसी चर्चा की गई है जिससे वैदिक युग में भी योग शास्त्र की प्रतिष्ठा का हमें ज्ञान होता है।[5]

वैदिक काल के पश्चात् महाकाव्य काल था जिसमे मर्यादा पुरूषोत्तम श्री राम का अवध में तथा योगेश्वर श्रीकृष्ण का अवतरण बृजमूमि में हुआ।

यहाँ एक बात उल्लेखित करने की है कि सिंधु घाटी सभ्यता का काल ईसा पूर्व 4000 से 3000 वर्ष होने पर अधिकांश विद्वानों का मतैक्य है किन्तु आर्यो की तिथि तथा उद्गम स्थान पर मतभेद सुलझ नही सके हैं। फिर भी अनेक पुरातत्वीय खगोलमितीय, साहित्यक प्रमाणों के आधार पर बहुत सारे विद्वानों ने'' महाभारत युद्ध काल ईसा पूर्व 3102 वर्ष माना है।[6] श्रीकृष्ण का काल हैं। श्रीराम उनसे पहले हुए हैं।

प्राचीन आर्य सभ्यता जब भी सक्रिय रही होगी, वह विरासत के रूप में हमें एक अत्यंत सुलझा हुआ सोच दे गई है, और योग'' भी उस सोच का हिस्सा है। उपनिषद्, वेद के बाद आऐ। उस युग का चिन्तन भारतीय चिंतन का स्वर्णकाल माना जाता है। इस काल में योग अच्छी तरह समझ लिया गया था। 'छान्दोग्य' तथा 'वृहदारण्यक' उपनिषद् में योग के विशिष्ट तत्व ''प्राण'' कहते हैं।[7]

किन्तु बृहदारण्य उपनिषद् में राजा जनक के दरवार में ऋषि गार्ग्य का उत्तर देते समय, ऋषि याज्ञवल्क्य ने अंतिम सत्ता को वायु से भी परे माना है।

इन दोनों उपनिषदो में यम, नियम प्राणायाम, तथा इडा–पिंगला, सुषम्ना तथा कुण्डलालिनी की चर्चा की गई है। कुछ अन्य उपनिषदों में भी उपरोक्त का थोड़ा विवरण है।[8]

कठोपनिषद में योग बहुत अच्छे से समझाया गया जिसमे यम ओर नचिकेता के संवाद में यम कहते है कि शरीर एक रथ के समान है, रथ का स्वामी आत्मा है, बुद्धि सारथि है पाँच इन्द्रियाँ घोड़े हैं। संसार के विषय मार्ग है, मन लगाम है। उपरोक्त सभी की समन्वयित क्रिया से ही शरीर में स्थित आत्मा मोक्ष की ओर अग्रसर होती है।[9]

गीता ही उपनिषदीय साहित्य का एक महत्वपूर्ण हिस्सा है (गीता के प्रत्येक अध्याय के अंत की पंक्तियों में यह शब्द है'' इति श्रीमद्भागवतगीतासूपनिषत्सु

SRF

ब्रहमंविद्याया'')। गीता के संबंध में एक संस्कृत छंद में यह भी कहा गया है'' सम्पूर्ण उपनिषद् गौएँ हैं, श्रीकृष्ण दुहने वाले है, बछड़ा अर्जुन है, यह अमृत स्वरूप दुग्ध गीता के विचार है और इस गीता का पाठ करने वाले इस दुग्ध का आनंद लेते है।''

गीता के 700 श्लोकों का पठन, मनन तथा उन पर अमल करने से चित्तवृत्ति के निक्षेप स्वतः दूर हो जाते है। योग को इसमें कर्मयोग, ध्यान योग, ज्ञान योग, तथा भक्तियोग के रूप में अच्छे से समझाया गया है।

गीता के कर्म योग का आशय, फलो में स्पृहा न रखते हुए अपने समस्त आवश्यक कार्य कर्त्तव्यभाव से करना है। कर्मो की संबंध की नैतिकता का वर्णन भी गीता में है।

ज्ञान योग का अर्थ सभी चराचर भूतों में ईश्वर तथा अपनी आत्मा जानकर सभी के प्रति बराबर स्नेह रखता है। भक्तियोग में ईश्वर के प्रति अनन्य शरणागति का भाव है।

ध्यान योग में भी अच्छे से समझाया गया है। कुछ श्लोकों का उद्व्हरण साथ उनका अर्थ भी समझाया जा रहा हैं।

शुचौ देशे प्रतिष्ठाप्य स्थिरमासमात्मनः।
नात्युच्छ्रितं नातिनीचं चैलाजिनकुशोत्तरम्।।6:11
तत्रैगाग्रं मनः कृत्वा यतचितेन्द्रियक्रियः।
उपविश्यासने युंज्योगमात्म विशुद्धेये।।6:12

स्वच्छ स्थान पर स्थिर होकर, वस्त्र, चर्म, कुशा क्रमशः एक के नीचे एक रखकर, ऐसा आसन बनायें जो न तो बहुत ऊँचा हो और न बहुत नीचा हो ऐसे आसन पर बैठ कर मन में आंतरिक शुद्धि का विचार करें और मन और इंन्द्रियों पर नियंत्रण करने का निश्चय करें।10

समं काय शिरोग्रीवं धारन्नचंल स्थिरः।
मंडोक्ष्य नासिकाग्रं स्वं दिशाश्रानवलोकयन्।।6:13
प्रशान्तात्मा विगतभीर्ब्रहमचारिव्रते स्थितः।
मनः संयम्य मच्चितत्रत्तो युक्त आसीत मत्परः।।6:14

काया, ग्रीवा और सर को सीधा रखकर, नासिका के अग्र में देखें और अत्यत्रं न देखें। इस प्रकार शांत मन से बैठ कर भय–मुक्त भाव से ब्रहमचर्य में स्थित होकर मन को मुझे (पारब्रम्हा परमेश्वर, श्री कृष्ण) में ध्यान केद्रित कर मुझे परम लक्ष्य मानें।[11]

आगे के श्लोकों में श्री कृष्ण कहते है कि इस प्रकार ध्यान केद्रित करने वाला मुक्ति अथवा मुझ में निवास करता है। यह भी कहाँ गया इस प्रकार का योग न अधिक जाग्रत रहने वाले को, न अधिक सोने वाले को, न अधिक खाने वाले को तथा बिल्कुल कम खाने वाले प्राप्त नहीं होता। यह योग उनको प्राप्त होता है जिनकी निद्रा, जागृति आहार तथा प्रयत्न संतुलित (युक्त) हैं। उपरोक्त के संतुलन रखने वालों के दुखों का नाश, योग कर देता है।

गीता में प्राणायाम की जानकारी युक्त संदर्भ तीन बार आया है। उनमें से दो निम्नलिखित हैं।

स्पशर्निकृत्वा बहिर्बाहयांश्चक्षुश्रवान्तरे भ्रुवोः।
प्राणापानौ समौ कृत्वा नासाम्यन्तरचारिणौ।।5:27
यतेन्द्रियमनोबुद्धि मुंनिर्मोक्षपरायणः।
विगतेच्छाभयक्रोधो यः सदा मुक्त एवं सः।।5:28

बाहरी शब्द स्पर्शादि विषयों के संस्पर्श से मन से बाहर रखकर, चक्षु को भ्रू–युगल के बीच में रखकर नाक के भीतर संचरणशील प्राण और अप्राण वायु को समभाव में स्थिर रखकर, इन्द्रिय और बुद्धि को वशीभूत करके इच्छा, भय और क्रोध छोड़ कर मोक्ष परायण जो मुनि हैं वह सदा मुक्त ही हैं।[12]

अपाने जुहवति प्राणं प्राणेऽपानं तथाऽपरे।
प्राणापानगति रूद्धवा प्राणायामपरायणः।। 4:29
अपने नियताराः प्राणान्प्राणेषु जुहवति।
सर्वेऽप्येते यज्ञविदो यज्ञक्षपितकल्मषाः।। 4:30 :

और अन्य श्रेणी के योगी अपान वायु में प्राणवायु और प्राण वायु ममें अपान वायु को हवन करते हैं। अन्य लोग परिमित–भोजन–सेवी होकर प्राण और अपान की गति को रोककर, प्राणायाम करते हुए इन्द्रियों को प्राणायाम में हवन करते है, यह भी एक प्रकार का यज्ञ है। ये सब यज्ञ के विद्वान, यज्ञों के द्वारा पाप मुक्त होते हैं।[13]

ईसा पूर्व छटवीं शताब्दी में जैन और बौद्ध धर्म के विद्वानों ने योग को स्वयं की दृष्टि से समझाया। उनके दृष्टिकोण की थोड़ी चर्चा बाद में की जायगी।

पारंपरिक आर्य–ब्राह्मण बिचार धारा ने मौर्य काल में थोड़ा अवनति का समय देखा। 184 ईसा पूर्व तिथि को पुषमित्र शुंग नाम के ब्राह्मण सेनापति ने अंतिम मौर्य सम्राट व्रहदथ का वध करने के बाद सिंहासनारूढ हुए।[14]

तथा आर्य– ब्राह्मण विचारों की पुर्नस्थापना हेतु प्रयत्न करने लग गये। उन्ही के काल में महर्षि पंतजलि हुए जिन्होंने'' महाभाष्य'' तथा ''योगसूत्र'' की रचना की।

'योगसूत्र' योग विद्या पर प्रस्तुत पहली स्पष्ट भाषित संहिता है जिसके प्रकाशन के पश्चात् यह ज्ञान पुनरूज्जीवित जैसा हुआ। योग सूत्र चार भागों में व्यक्त है। प्रथम समाधिपाद के 51 सूत्रों में क्लोशों का नाश, उनकी प्रकृति का विवरण, इसके अतिरिक्त कियाओं और अष्टांग योग के बाहरी अंगो का वर्णन भी मिलता है। तीसरे भाग विभूतिपाद के 55 सूत्रों में क्लोशों के नाश होने के पश्चात् संयम द्वारा प्राप्त होने वाली सिद्धियों के बारे में कहाँ गया है। कैवल्यपाद (अथवा मुक्तिपाद) के 34 सुत्रों में मानव जीवन के चरम उद्देश्य मोक्ष या कैवल्य प्राप्ति की बात कही गई हैं।[15]

स्मृति और पुराणों का पूर्ण लेखन तथा संकलन गुप्त काल में हुआ, यह काल 319 ईस्वी से 550 ईर्स्वी तक माना जाता हैं।[16]

स्मृति साहित्य ने योग को आत्मसाक्षात्कार साधन माना और यह कहा कि समाज के सभी वर्ग योग के द्वारा आत्मज्ञान प्राप्त करें।

स्मृतियों में कियात्मक योग तथा प्राणायाम की चर्चा भी है।पंतजलि द्वारा लिखे गये यम, नियम, धारणा, ध्यान प्रराणों में भी लिलते हैं।[17]

1000 ईस्वी के लगभग गोरक्षनाथ ने ''नाथ'' सम्प्रदाय प्रारंभ किया। उन्होंने कुछ पुस्तके लिखकर स्वतंत्र हठयोग संप्रदाय की स्थापना की ।तब से अब तक हठयोगियों का क्रम निरंतर बना हुआ हैं।[18]

चौदहवीं शताब्दी के योगी स्वामी स्वात्माराम ने अपनी पुस्तक 'हठयोग प्रदीपिका' के द्वारा हठ योग को एक अच्छा स्थान दिलाया उन्होंने हठयोग में ''चतुरंग योग'' का अविष्कार उसे साधारण जन तक पहुँचाया।[19]

पन्द्रहवीं शताब्दी के सन्त कबीरदास की रचनाओं में योग कई स्थानों पर झलकता हैं।

सोलहवीं शताब्दी में पारंभ हुए सिख धर्म की के गुरू, ग्रन्थ साहब' में कई स्थानों पर ध्यान, समाधि, सत्य अहिंसा, का अच्छे से उल्लेख किया गया है।

सत्रहवीं शताब्दी के योगी घेरण्ड ने अपनी रचना घेरण्ड संहिता में योग के सात अंग निर्धारित किए हैं। उनकी रचना ''घेरण्ड संहिता'' है।

7016 में राजस्थान के मेवाड़ प्रदेश के अलवर के निकट डेहरा गाँव में जन्में स्वामी चरणदास ने 17 ग्रन्थों की रचना की जिन्हें ''भक्तिसागर'' कहा गया है। भक्तिसागर का चौथा ग्रन्थ अष्टांग योग है, जबकि पाँचवा ग्रंथ ''षड्कर्मयोग वर्णन'' है। उनके अन्य ग्रंथ हैं, ''शिव महिमा'' हटरत्नावलि' 'हठसंकेत' तथा 'चन्द्रिका' स्वामी

चरणदास जी ने दिल्ली में जामा मस्जिद की पीछे अखाड़ा स्थापित किया था, जो आज तक बना हुआ है और उसमे योगी साधना करते हैं। स्वामी चरणदास का योग पंतजलि के अष्टांग योग के अत्यन्त निकट है।

अठारहवीं तथा उन्नीसवीं शताब्दी में भी अनेक योगियों के योग का प्रचार किया जिसमें सबसे प्रमुख नाम योगी कुवलयानन्द हैं।[20]

बीसवीं शताब्दी में योग का प्रचार करने वालों में प्रमुख नाम, योगी श्री बी.के.एस.आयंगर, धीरेन्द्र ब्रम्हाचारी स्वामी महेशानन्द, आचार्य रजनीश, डॉ. लयदेव योगेन्द्र हैं।

संप्रति काल में योगी बाबा राम देव ने दूरदर्शन, तथा इंटरनेट की सहायता से योग का ज्ञान जन–जन तक पहुँचा दिया है। भारतीय योग विद्या को संयुक्त राष्ट्र (UN) से भी अत्यन्त सम्मान जनक मान्यता मिल चुकि है। संयुक्त राष्ट्र ने वर्ष 2015 से 21 जून को विश्व योग दिवस के रूप में मनाने का निर्णय लिया हैं। 21 जून 2015 को विश्व के प्रमुख स्थलों पर नागरिकों ने योग किया जिसमें इंग्लैण्ड, फ्रांस, रूस, अमेरिका, चीन के प्रमुख सार्वजनिक स्थल भी सम्मिलित थे। भारत के योग कार्यक्रमों का नेतृत्व विजय चौक से प्रधानमंत्रि श्री नरेन्द्र मादी जी ने किया।

जैन योग परंपरा :– जैन धर्म प्राचीन काल से योग का अर्थ विभिन्न ध्यान विधियों से माना गया है। स्वयं महावीर के बारह वर्ष का पस्या काल अधिकांशतः ध्यान में ही बीता। भगवान महावीर स्वामी अपने पीछे योग–ध्यान की समृद्ध परंपरा छोड़ कर गये।

जैन योग तथा उपासनाओं ने प्राकृतिक, मानवीय, प्रकोपों, इतिहास के उतार–चढ़ाव के साथ काफी परिवर्तत देखे। 20वीं के अत्यंत सम्मानीय जैन

संत, आचार्य महाप्रज्ञ ने जैन येग के काल को चार खण्ड़ो में वर्गीकृत किया हैं।

1. भगवान महावीर से आचार्य कुन्दकुन्द तक (विक्रम की प्रथम शताब्दी तक)
2. आचार्य कुन्दकुन्द से आचार्य हरिभद्र तक (विक्रम की आठवीं शताब्दी तक)
3. आचार्य हरिभद्र से आचार्य याशोविजय तक (विक्रम की अठारहवीं शताब्दी तक)
4. और आचार्य से यशोविजय तक (विक्रम की अठारहवीं शताब्दी से आज तक)[21]

पहले युग में ध्यान को प्रमुखता दी गई, द्वितीय युग में ध्यान का स्थान शास्त्रीय ज्ञान, विद्या और मंत्रो ने लिया। जैन संत अब चमत्कारों की ओर भी उन्मुख होने लगे। तृतीय युग में गोरक्षनाथ के नाथ संप्रदाय से जैन साधना में प्रभावित हुए। जप, हठयोग, तंत्र साधना भी हुई। चर्तुथ युग में जैन धर्म पर भक्तिमार्ग का प्रभाव स्पष्ट देखा जाता है, जिसमें वे शैव तथा वैष्णवी दोनों भक्ति साधनाओं से प्रभावित हुए। बीसवीं सदी के महान जैन विद्वान आचार्य संत आचार्य तुलसी ने विलुप्त जैन युग परंपरा को विज्ञान के प्रकाश में पुररूज्जीवित करने का प्रयास किया है। उन्होंने संस्कृत सूत्र शैली में ''मनोनुशासनम्'' नामक ग्रंथ में लगभग 2500 वर्ष की विशाल जैन ज्ञान परंपरा को व्यक्त करने का प्रयत्न किया है। आचार्य श्री तुलसी के बाद उनके उत्तराधिकारी आचार्य श्री महाप्रज्ञ ने शास्त्रों के गहन अध्ययन कर अपनं गुरू की परंपरा को आगे बढ़ाते हुए 50 से अधिक पुस्तकें लिखि हैं। जिसमें जैन, ध्यान योग मंत्रादि को अत्यंत व्यवस्थित कर दिया है।[22]

बौद्ध धर्म में योग :– बौद्ध धर्म निवृत्तिमार्गी है। इसमें शील विशुद्धि (सतकर्मों से नैतिक शुद्धि) तथा चित्त शुद्धि दोनों की बाते कही गई हैं। शील विशुद्धि बहुत से बौद्ध धर्म ग्रंथो में समझाई गई है, किन्तु चित्त विशुद्धि का विवेचन अपेक्षाकृत रूप से कम स्थानों पर हुआ है। ''सुत्त पिटक'' में गौतम बुद्ध ने समाधि की शिक्षा दी है।

आचार्य बुद्धघोष का ''विशुद्धिमग्न'' चित्त विशुद्धि मार्ग बतलानें वाला अत्यंत उत्कृष्ट ग्रंथ है। इसमें हीन यान के अनुरूप ध्यान प्रकिया समझाई गई है। महायान ग्रंथो में असंग के '' महायान सूत्राअंकार तथा योगाचार भूमिशास्त्र'' में विज्ञानवादी दृष्टिकोण से समस्त ध्यान समझाया गया।[23]

गौतम बुद्ध के समय पर कुछ ध्यान पद्धतियाँ पहले से विद्यमान थी। बुद्ध ने उसमें विपश्यना (अथवा आनापानसती) उसकी निरंतरता बनाए रखे।[24] 20वीं भाताब्दी में आनापान सती के भारत विश्व में प्रचार का बहुत बड़ा श्रेय सारनाथ को भिक्षु जगदीश कश्यप तथा बम्बई के श्री सम्नारायण गोयनका जी को जाता हैं।

संदर्भ ग्रंथ सूचि व टिप्पणी :–

1. कृष्ण चंद्र श्रीवास्तव ''प्राचीन भारत का इतिहास तथा संस्कृति'' पृष्ठ संख्या 840, यूनाईटेड बुक डिपो, इलाहाबाद, 2006
2. वही
3. वही
4. R.C. Maijumder: ''An Advanced History of India'' P.P. 21 Macmillan india ltd, Madras, 1985
5. प्रवीण कुमार एवं रजनी वाली, ''योग, परिचय एवं परंपरा'' खेल साहित्य केन्द्र, नई दिल्ली, 2008,
6. R.C. Majumdar: ibid, p.p. 1067
7. प्रवीण कुमार एवं रजनी बाली पूर्वोक्त पृष्ठ सं. 14
8. वही
9. वही, पृष्ठ सं. 15
10. Swami Gambhirananda (Translation by), Bhagavad- gita: p.p. 286-287 Advaitia Ashajama, Calcutta, 1984
11. Ibid, p.p. 287-287
12. Ibid, pp. 267
13. Ibid, p.p. 217-218
14. कृष्ण चंद्र श्रीवास्तव, पूर्वोक्त पृष्ठ संख्या 278.
15. कृष्ण चन्द्र श्रीवास्तव, पूर्वोक्त पृष्ठ संख्या 16.
16. कृष्ण चन्द्र श्रीवास्तव, पूर्वोक्त पृष्ठ संख्या 371कृ
17. प्रवीण कुमार एवं रजनी बाली, पूर्वोक्त, पृष्ठ संख्या 15.
18. वही, पृष्ठ संख्या 12
19. वही, पृष्ठ संख्या 13
20. वही
21. सुशील कुमार व्यास,'योग शिक्षा', पृष्ठ संख्या 35, खेल साहित्य केन्द्र नई दिल्ली, 2008
22. वही, पृष्ठ संख्या 38
23. वही, पृष्ठ संख्या 40
24. वही, पृष्ठ संख्या 50

ISSN : 2394-3580 Swadeshi Research Foundation Vol. – 6, No. - 7 May 2019
A Monthly Journal of Multidisciplinary
International Peer Refereed, Review, Indexing & Impact factor-4.2 Research Journal

माध्यमिक स्तर के शासकीय एवं अशासकीय विद्यालयों में अध्ययनरत विद्यार्थियों की शैक्षणिक उपलब्धि का तुलनात्मक अध्ययन

डॉ. कालिका यादव
मार्गदर्शक, आचार्य सतत शिक्षा एवं विस्तार विभाग, बरकतउल्ला विश्वविद्यालय, भोपाल
वर्षा कापसे
शोधार्थी

प्रस्तुत अध्ययन में माध्यमिक स्तर के शासकीय एवं अशासकीय विद्यालयों में अध्ययनरत विद्यार्थियों की शैक्षणिक उपलब्धि का तुलनात्मक अध्ययन किया गया है। इसके लिए बीना में स्थित शासकीय एवं अशासकीय विद्यालयों में अध्ययनरत माध्यमिक विद्यालयों की कक्षा 9 वी में अध्ययनरत 200 विद्यार्थियों का चयन किया गया। बार्षिक परीक्षा के प्राप्तांक मूल प्राप्तांक के रूप में लिए गये। प्रदत्तों के विश्लेषण के लिए क्रांतिक अनुपात परीक्षण का प्रयोग किया गया। शोध परिणामों से सह ज्ञात हुआ कि पूर्व माध्यमिक स्तर के अशासकीय विद्यालयों के छात्रों/विद्यार्थियों से उच्च पायी गयी परंतु शासकीय एवं अशासकीय विद्यालयों की छात्राओं की शैक्षणिक उपलब्धि में सार्थक अंतर नही पाया गया।

मुख्य शब्द :– माध्यमिक स्तर, शैक्षणिक उपलब्धि, शासकीय एवं अशासकीय विद्यालय।

मानवजाती के विकास तथा प्रगति में शिक्षा की सर्वप्रमुख भूमिका है। शिक्षा समाज की सामाजिक एवं आर्थिक प्रगति का मुख्य आधार है। शिक्षा के अभाव में सामाजिक, आर्थिक एवं सांस्कृतिक गतिशीलता की कल्पना करना निरर्थक है। शिक्षा जीवन पर्यन्तचलने वाली समाज की प्राचीनतम घटना है जो शिशु के जन्म से लेकर मृत्युपर्यन्त चलती रहती है। वर्तमान समय में शिक्षा का स्वरूप परिवर्तित होते जा रहा है एवं वर्तमान में शिक्षा पाठ्यक्रम केन्द्रित होने के स्थान पर बालकेंद्रित हो गई है, परंतु वर्तमान में बालकों की व्यक्तिगत सफलताएं ही परिवार तथा विधालयों का मुख्य लक्ष्य बनती जा रही है। और इस सफलता में बालकों के सवार्गीण व्यक्तित्व विकास की उपेक्षा कर सिर्फ उसके बौद्धिक विकास पर या कहें तो उसके द्वारा परीक्षा में प्राप्त अंको को ही महत्व दिया जा रहा है। पंतु विछले कुछ समय में विभिन्न आयोगें, समितियों व राष्ट्रीय पाठचर्या की रूपरेखा में इस बात पर बहुत अधिक जोर दिया गया कि बच्चों के सवार्गीण विकास के सभी पक्षों पर ध्यान दिया जाए तथा विद्यार्थियों की उपलब्धियों का मापन करते समयस सिर्फ शैक्षणिक क्षेत्रों पर ही ध्यान नहीं दिया जाय अपितु गैर शैक्षणिक क्षेत्रों में भी उसके द्वारा प्राप्त की गई उपलब्धियों का मूल्यांकन किया जाए। फिर भी वर्तमान की सामाजिक, आर्थिक एवं सांस्कृतिक परिस्थितियों के संदर्भ में शैक्षणिक उपलब्धि सबसे अधिक महत्व रखती है। वास्तव में स्कूलों में औपचारिक शिक्षा के दौरान शैक्षणिक उपलब्धि पर ही विशेष जोर दिया जाता है। अतः शोधकर्ता ने यह देखने का प्रयास किया है कि क्या विद्याथियों के विद्यालय प्रबंधन की प्रकृति शैक्षणिक उपलब्धि को प्रभावित करती है या नहीं। इसी उद्देश्य की पूर्ति हेतु शोधार्थी ने माध्यमिक स्तर के शासकीय एवं अशासकीय विद्यालयों में अध्ययनरत विधार्थियों की शैक्षणिक उपलब्धि का तुलनात्मक अध्ययन करने का प्रयास इस अध्ययन द्वारा किया है।

प्रस्तुत शोध से संबंधित पूर्व में भी कुछ शोध कार्य किये गये है जैसे :– **सारस्वत, अनिल (1988)** के परिणामों में यह स्पष्ट हुआ कि उत्तम वातावरण में विद्यार्थियों की शैक्षणिक उपलब्धि अधिक रहती है। **मुखोपाध्याय, दिलीप कुमार (1988)** ने अपने अध्ययन के निष्कर्षतः पाया कि विद्यालयों में उपलब्ध भौतिक सुविधाओं का शैक्षणिक उपलब्धि पर सार्थक प्रभाव पाया जाता है। **दार्जिगपूई (1989)** ने अपने अध्ययन के निष्कर्षतः पाया कि विद्यालय का प्रकार, विज्ञान विषय में शैक्षिक उपलब्धि तथा विज्ञान के प्रति अभिवृत्ति को बढाने में धनात्मक प्रभाव डालते है। **पाण्डेय, विष्णु प्रकाश (1989)** ने अपने अध्ययन के निष्कर्षतः पाया कि सरस्वती विद्या मंदिर के विद्यार्थियों की गणित विषय में उपलब्धि, शासकीय एवं निजी विद्यालयों के विद्यार्थियों से सार्थक रूप से उच्च पाई गई जबकि कान्वेंट विद्यालयों के विद्यार्थियों के समान पाई गई। **प्रधान (1991)** ने अपने अध्ययन में पाया कि

विद्यालयीन संस्थागत वातावरण विद्यार्थियों की शैक्षिक उपलब्धि को सार्थक रूप से प्रभावित करता है। **फैलोज, अंजना (2011)** ने अपने अध्ययन के निष्कर्षतः पाया गया कि शासकीय एवं अशासकीय विद्यालयों के छात्रों की शैक्षिक उपलब्धि में सार्थक अंतर पाया गया तथा अशासकीय विद्यालयों के छात्रों की शैक्षिक उपलब्धि, शासकीय विद्यालयों के छात्रों से उच्च पाई गई।

उद्देश्य :– माध्यमिक स्तर के शासकीय एवं अशासकीय विद्यालयों में अध्ययनरत छात्र/छात्रा/विद्यार्थियों की शैक्षणिक उपलब्धि का तुलनात्मक अध्ययन करना।

परिकल्पना :– माध्यमिक स्तर के शासकीय एवं अशासकीय विद्यालयों में अध्ययनरत छात्र/छात्रा/विद्यार्थियों की शैक्षणिक उपलब्धि में सार्थक अंतर नहीं पाया जायेगा।

उपकरण :– प्रस्तुत शोधकार्य हेतु शैक्षणिक उपलब्धि के मापन के लिए सत्र 2017–18 में म.प्र. माध्यमिक शिक्षा मंडल भोपाल द्वारा आयोजित कक्षा 9 वी की वार्षिक परीक्षा के प्राप्तांक मूल प्राप्तांक के रूप में लिए गये है।

विधि :– सर्वप्रथम बीना शहर के म.प्र. माध्यमिक शिक्षा से संबद्व विद्यालयों की सूची प्राप्त की गई तथा इस सूची में से चार विद्यालयों का चयन किया गया (2 शासकीय विद्यालय एवं 2 अशासकीय विद्यालय) तथा इन विद्यालयों की कक्षा नवमीं में सत्र 2017–18 में अध्ययनरत् 200 विद्यार्थियों का चयन यादृच्छिक न्यादर्श विधि द्वारा किया गया, जिसमें 100 विद्यार्थी शासकीय विद्यालयों में (50 छात्र एवं 50 छात्राएं) तथा 100 विद्यार्थी अशासकीय विद्यालयों के (50 छात्र एवं 50 छात्राएं) थे। इन विद्यार्थियों की शैक्षणिक उपलब्धि के मापन के लिए म.प्र. राज्यशिक्षा केन्द्र द्वारा आयोजित कक्षा 9 वीं की वार्षिक परीक्षा के प्राप्तांक मूल प्राप्तांक के रूप में लिये गये। मध्यमान, मानक विचलन एवं क्रांतिक अनुपात परीक्षण के द्वारा आंकडो का विश्लेषण किया गया एवं प्राप्त परिणामों के आधार पर निष्कर्ष प्राप्त किये गये।

परिणामों का विश्लेषण :–

तालिका

माध्यमिक स्तर के शासकीय एवं अशासकीय विद्यालयों में अध्ययनरत छात्र/छात्रा/विद्यार्थियों की शैक्षणिक उपलब्धि संबंधी तुलनात्मक परिणाम

समूह	विद्यालय का प्रकार	संख्या	मध्यमान	मानक विचलन	क्रांतिक अनुपात मान	'पी' मान
छात्र	शासकीय	50	303.78	55.83	3.82	<0.01
	अशासकीय	50	344.20	49.73		
छात्रा	शासकीय	50	337.16	61.39	1.95	<0.05
	अशासकीय	50	359.64	53.45		
विद्यार्थी	शासकीय	100	320.47	59.37	3.96	<0.01
	अशासकीय	100	351.92	52.69		

स्वतंत्रता के अंश 98, 198 0.05, 0.01 स्तर के लिये निर्धारित न्यूनतम मान – 1.98, 2.63, 2.60

उपरोक्त सारणी में प्रदर्शित परिणामों से स्पष्ट है कि पूर्व माध्यमिक स्तर के शासकीय एवं अशासकीय विद्यालयों में अध्ययनरत् छात्र/विद्यार्थियों की शैक्षणिक उपलब्धि संबंधी में सांख्यिकीय दृष्टिकोण से सार्थक अंतर है क्योंकि इन दोनो समूहों के लिये प्राप्त क्रांतिक अनुपात के मान क्रमशः 3.82, 3.96 स्वतंत्रता के अंश 98 व 198 पर सार्थकता के 0.01 स्तर के लिए न्यूनतम निर्धारित मान क्रमशः 2.63 व 2.60 से अधिक है। जबकि छात्राओं की शैक्षणिक उपलब्धि संबंधी में सांख्यिकीय दृष्टिकोण से सार्थक अंतर नहीं है। क्योंकि इनके लिये प्राप्त क्रांतिक अनुपात का नाम 1.95 स्वतंत्रता के अंश 98 पर सार्थकता के 0.05 स्तर के लिए न्यूनतम निर्धारित मान 1.98 से कम है।

अतः उपरोक्त परिणामों के आधार पर निष्कर्षतः कहा जा सकता है कि माध्यमिक स्तर के

शासकीय एवं अशासकीय विद्यालयों में अध्ययनरत छात्र/विद्यार्थियों की शैक्षणिक उपलब्धि में सार्थक अंतर पाया गया तथा अशासकीय विद्यालयों में अध्ययनरत छात्र/विद्यार्थियों की शैक्षणिक उपलब्धि, शासकीय विद्यालयों में अध्ययनरत छात्र/विद्यार्थियों से उच्च पाई गई जबकि छात्राओं की शैक्षणिक उपलब्धि संबंधी में सांख्यिकीय दृष्टिकोण से सार्थक अंतर नहीं पाया गया।

निष्कर्षः— माध्यमिक स्तर के शासकीय एवं अशासकीय विद्यालयों में अध्ययनरत छात्र/विद्यार्थियों की शैक्षणिक उपलब्धि में सार्थक अंतर पाया गया तथा अशासकीय विद्यालयों में अध्ययनरत छात्र/विद्यार्थियों की शैक्षणिक उपलब्धि, शासकीय विद्यालयों में अध्ययनरत छात्र/विद्यार्थियों से उच्च पाई गई जबकि छात्राओं की शैक्षणिक उपलब्धि संबंधी में सांख्यिकीय दृष्टिकोण से सार्थक अंतर नहीं पाया गया।

सन्दर्भ ग्रंथ सूची :—

1. Brown R 1981: Goals of Reflection of the need of the learner. In Morris, R. (Ed.) studies in mathematics education UNESCO, Peris,
2. Buch, M.B. (Ed) 1979: Second survey of Research in Education, society for educational research and Development Baroda,
3. Buch, M.B. (Ed.) 1979: Fourth Survey of Research in Education, society for educational research and Development Baroda,
4. Chitriv, U.G 1988: Ausubel Vs Bruner Model for Teaching Mathematics, Himalaya Publishing House, Bombay.
5. Director NCERT (Ed.) 2000: Fifth survey of educational Research and Training. NCERT, New Delhi,.
6. Kapur, J.N 1989: Some aspects of Mathematics Education in India, Arya Book Depot, New Delhi,
7. Kaushik, V.K. and Sharma, S.A 2002.: Modern Method of Teaching Anmole publications Pvt. New Delhi,.
8. Maheshwari B.K. 2005 Ganit Shikshan International Publishing House, Merrut..
9. NCERT 1984: Content- Cum- Methodology of Teaching Mathematics, NCERT. New Delhi,.
10. Pal H.R. 2004 Education Research Madhya Pradesh Hindi Grnath Academy Bhopal..
11. Singh B 1988: Teaching-Learning Strategies and Mathematics Creativity Mittal Publication , Delhi.
12. Thilaka, S. and Rajeshwari H 2005: Simulated Experimental in Biotechnology. Journal of all India Association for education Research. Vol. 17, New Delhi, 3 and.

ISSN : 2394-3580 Swadeshi Research Foundation Vol. – 6, No. - 7 May 2019
A Monthly Journal of Multidisciplinary
International Peer Refereed, Review, Indexing & Impact factor-4.2 Research Journal

स्वतंत्र्योतर हिंदी कविता में राष्ट्रीयता की प्रखर ध्वनि

डॉ.भावना शुक्ल

राष्ट्रीय शब्द के सन्दर्भ में कहा गया है कि राष्ट्रीय शब्द अपने आधुनिक अर्थ में आधुनिक है जिसमें जाति, सम्प्रदाय, धर्म, सीमित भू भाग की संकीर्णता के स्थान पर क्रमशः एक समग्र देश और उसके भीतर निवास करने वाली समस्त जातियों, भिन्न–भिन्न भूखण्डों, सम्प्रदायों और रीति–रिवाजों के लोगों का संदिष्ट, सामूहिक रूप उभरता गया। भारतीय संदर्भ में देखें तो अनेक शताब्दियों से राष्ट्रीयता की भावना का उन्मेष होता आ रहा है। खासतौर पर परतंत्रता के दौर में इसका तीखा अहसास भारतीय जनमानस में रहा है।

जहाँ तक आधुनिक युग का सवाल है ब्रिटिश सत्ता के दमनकारी रवैये से क्षुब्ध हो भारतवासियों में राष्ट्रीयता का नया उन्मेष 1850 तक आते–आते दिखाई देने लगा था, जिसकी प्रखर अभिव्यक्ति 1857 के स्वातंत्रय समर में हुई। उस दौर के तराने और लोकाभिव्यक्तियों में फिरंगियों की 'फूट डालो और राज करो' की नीति की खरी पहचान दिखाई देती है, वहीं गुलामी की जंजीरों को तोड़ने की अकुलाहट भी नजर आती है। उसी दौर में राष्ट्रीयता के अभेद्य और अखंड रूप की नए सिरे से पहचान होने लगी थी, जो भारतीय राष्ट्रीय आंदोलन तक आते–आते और स्पष्ट होती चली गई।

"भारतीय राष्ट्रवाद की भावना देश के सांस्कृतिक जागरण की पृष्ठभूमि में एक विशेष आदर्शवादी रूप धारण कर विकसित एवं प्रस्फुटित हुई है। वास्तव में श्रीरामकृष्ण परमहंस, विवेकानन्द, रामतीर्थ तथा स्वामी दयानन्द सरस्वती आदि अनेक महान जीवन द्रष्टाओं के कारण जो एक सांस्कृतिक नवोत्थान की वृहद् प्रेरणा देश के मानस को मिली, जिससे कि अपने अतीत के गौरव के प्रति लोक मन उद्बुद्ध हो सका–भारत में राष्ट्रीयता की भावना सदैव ही रही है द्यऔर यह राष्ट्रीयता की भावना केवल हिन्दू राष्ट्र की कल्पना ही नही वरन समस्त भारत की सांस्कृतिक स्थिति से है द्यअगर है हिंदी साहित्य पर दृष्टिपात करे तो हम पाएंगे की विभिन्न कालों में अलग दृअलग रूप से राष्ट्रीयता की भावना मुखरित होती रही है द्य देश की जनता के मन में गाँधी जी ने अपने विचारों को एक नई दृष्टि दी जिससे जनता जागरूक हुई और गाँधी की इसी विचार धारा से प्रभावित होकर जन–जन के मन में हमारे कवियों ने राष्ट्रीय स्वर अपनी कविताओं के माध्यम से दिए इनमे महत्वपूर्ण कवि है माखनलाल चतुर्वेदी, मैथिलि शरण गुप्त,प्रसाद जी ,गिरजा कुमार 'माथुर',सोहन लाल द्विवेदी एवं रामधारी सिंह दिनकर , सुभद्रा कुमारी चौहान ,सूर्यकांत त्रिपाठी 'निराला' ,बालकृष्ण शर्मा'नवीनं',नागार्जुन आदि है द्य इन कवियों ने सम्पूर्ण भारत के प्रति आस्था, संस्कृति के प्रति निष्ठा, मानवता के प्रति आग्रह, सामन्तवाद के प्रति आक्रोश, स्वतंत्रता के लिये संकल्प, निर्माण एवं सृजन के लिये प्रेरणा तथा शोषकों के प्रति क्रांति को जन्म देकर साहित्य को एक नयी दिशा दी द्य

इस नए दौर में ईश्वर की प्रार्थनालयों में खोजने की बजाय राष्ट्र के रूप में उसकी पहचान की गई। ईश्वर की नई परिभाषा को गढ़ते हुए माखनलाल जी 'जवानी' का आह्वान करते हैं –

''प्राण अंतर में लिए पागल जवानी

कौन कहता है कि तू विधवा हुई, खो आज पानी?

क्या–जले बारूद? हिम के प्राण पाए,

क्या मिला जो प्रणय के सपने न भाए,

धरा यह तरबूज है, दो फाँक कर दे,

चढ़ा दे स्वातंत्र्य –प्रभु पर अमर पानी।

विश्व माने तू जवानी है, जवानी।''

जयशंकर प्रसाद के ऐतिहासिक नाटक "चन्द्रगुप्त" के प्रसिद्ध गीत "अरुण यह मधुमय देश हमारा जहां पहुंच अनजान क्षितिज को मिलता एक सहारा" में देश के प्रति आत्मभाव को ही अभिव्यक्ति मिली है।

इसी प्रकार ––– हिमाद्रि तुंग श्रृंग से प्रबुद्ध शुद्ध भारती

ISSN : 2394-3580 **Swadeshi Research Foundation** Vol. – 6, No. - 7 May 2019
A Monthly Journal of Multidisciplinary
International Peer Refereed, Review, Indexing & Impact factor-4.2 Research Journal

स्वयं प्रभा समुज्ज्वला स्वतंत्रता पुकारती

'अमर्त्य वीर पुत्र हो, दृढ़– प्रतिज्ञ सोच लो,

प्रशस्त पुण्य पंथ है, बढ़े चलो, बढ़े चलो!'

असंख्य कीर्ति–रश्मियाँ विकीर्ण दिव्य दाह–सी

सपूत मातृभूमि के– रुको न शूर साहसी!

अराति सैन्य सिंधु में, सुवाड़वाग्नि से जलो,

प्रवीर हो जयी बनो – बढ़े चलो, बढ़े चलो!

कवि ने स्वर्णिम अतीत को सामने रखकर मानों एक सोये हुए देश को जागने की प्रेरणा दी जा रही थी।

सुभद्राकुमारी चौहान जी का राष्ट्रवाद के प्रति प्रेम इतना अथाह था जो उनकी कविताओं में उभर कर आता है । इसलिए उनकी कविताओं में राष्ट्रप्रेम और वीर रस का अनूठा संगम देखने को मिलता है । इनकी राष्ट्र प्रेम की कविताओं 'जालियाँवाला बाग में बसंत', 'राखी', 'विजय दशमी', 'लक्ष्मीबाई की समाधि पर', और 'वीरों का कैसा हो बसंत' आदि कविताओं में राष्ट्रप्रेम और राष्ट्रवाद का स्वर मुखर हो उठा द्य राष्ट्रीय कविता की झांकी 'झाँसी की रानी" में दिखलाई पड़ती है इसी कविता के कारण सुभद्रा जी का स्थान शीर्ष पर भारतीय इतिहान में अमर हो गया द्य

सिंहासन हिल उठे राजवंशों ने भृकुटी तानी थी,

बूढ़े भारत में भी आई फिर से नयी जवानी थी,

गुमी हुई आज़ादी की कीमत सबने पहचानी थी,

दूर फिरंगी को करने की सबने मन में ठानी थी।

चमक उठी सन सत्तावन में, वह तलवार पुरानी थी,

बुंदेले हरबोलों के मुँह हमने सुनी कहानी थी,

खूब लड़ी मर्दानी वह तो झाँसी वाली रानी थी।।भारतीय राष्ट्रीयता की भावना के स्वर सब और छा गये । सुभद्रा जी की 'विजयादशमी' कविता हमारे सांस्कृतिक प्रतिमानों की युगोचित व्याख्या कुछ इस तरह करती है–

''दो विजये ! वह आत्मिक बल दो वह हुंकार मचाने दो।

अपनी निर्बल आवाजों से दुनिया को दहलाने दो।

'जय स्वतंत्रिणी भारत माँ' यों कहकर मुकुट लगाने दो।

हमें नहीं इस भू–मण्डल को माँ पर बलि–बलि जाने दो।

छेड़ दिया संग्राम, रहेगी हलचल आठों याम सखी!

असहयोग सर तान खड़ा है भारत का श्रीराम सखी!

भारत लक्ष्मी लौटाने को रच दें लंका काण्ड सखी!''

इस कविता में राष्ट्रीयता को एक नई पहचान मिली है सुभद्रा जी ने आत्मिक बल का संचार किया है द्य

'उनको प्रणाम' कविता में नागार्जुन ने इस मातृभूमि पर देश के बलि वीरों ने आपनी आहुति दी ऐसे वीरों को नमन और स्मरण कराती है यह कविता द्य

'जो नहीं हो सके पूर्ण–काम

मैं उनको करता हूँ प्रणाम।

कृत–कृत नहीं जो हो पाए,

प्रत्युत फाँसी पर गए झूल

कुछ ही दिन बीते हैं, फिर भी

यह दुनिया जिनको गई भूल ! – उनको प्रणाम!

जिनकी सेवाएँ अतुलनीय

पर विज्ञापन से रहे दूर

प्रतिकूल परिस्थिति ने जिनके

कर दिए मनोरथ चूर–चूर! – उनको प्रणाम!

बालकृष्ण 'नवीन', रामधारीसिंह दिनकर, श्यामनारायण पांडे, जगन्नाथप्रसाद मिलिन्द आदि की रचनाओं में जहाँ एक ओर आजादी के आंदोलन की आहट सुनाई देती है, वहीं स्वातंत्र्योत्तर भारत में औपनिवेशिक दासता से मुक्ति की छटपटाहट भी दिखाई देती है। वस्तुतः राष्ट्रीय चेतना

को सामाजिक–सांस्कृतिक चेतना से पृथक् मानना बहुत बड़ी भूल होगी। इन सभी कवियों का संकेत साफ है कि हम राजनीतिक दृष्टि से ही स्वाधीनता न हों, वैचारिक धरातल पर भी स्वातंत्र्य चेतना बनें।, राष्ट्रीय भावना एवं विचारधारा के प्रमुख कवियों में दिनकर का विशिष्ट स्थान रहा है।

''समर शेष है, यह प्रकाश बंदीगृह से छूटेगा।

और नहीं तो तुझ पर पापिनी महावज्र टूटेगा।''

सूर्यकांत त्रिपाठी 'निराला' छायावाद में एक स्तंभ माने जाते है जो एक ऐसी मजबूत कड़ी है द्य उनका राष्ट्रवाद अनेक कविताओं में तेजस्वी रूप से मुखरित होता है।इन्होंने , 'राष्ट्र' को केवल एक राजनैतिक इकाई न मानकर, एक सांस्कृतिक और सामाजिक उन्नयन की इकाई माना गया। स्वर्णिम अतीत की स्मृति हीनता बोध से उबरने का महत्वपूर्ण साधन है। इस संदर्भ में निराला की "जागो फिर एक बार" कविता देखिए–

तुम हो महान, तुम सदा हो महान,

है नश्वर यह दीन भाव,

कायरता, कामपरता,

ब्राह्म हो तुम,

पद–रज–भर भी है नहीं

पूरा यह विश्व–भार

जागो फिर एक बार!

निराला परंपरा के गहरे बोध के कवि हैं। उन्होंने सांस्कृतिक धरातल पर तुलसीदास कविता में नवजागरण के मूल आशय स्वतंत्रता को अभिव्यक्त किया है।

जागो जागो आया प्रभात, बीती वह बीती अंध रात,

झरता भर ज्योतिर्मय प्रपात पूर्वांचल बांधो बांधो किरणें चेतन,

तेजस्वी, हे तम जिज्जीवन। आती भारत की ज्योतिर्धन महिमाबल।।

यहाँ पराधीनता के अंधकार से स्वाधीनता का प्रभात है।

बालकृष्ण शर्मा 'नवीन' को उस जन–गण की चिंता है, जो भूख और अभाव से ग्रस्त हैं। वे नयी सामाजिक संरचना को गढ़ने को जरूरी मानते हैं, जिसके बिना आजादी का कोई अर्थ नहीं रहेगा।

हाय! इन्हीं आँखों से देखे

ज्वाला में लिपटे मानव–तन

होते भस्मीभूत विलोके

मैंने अपने ही सब जन–गण।

आज चतुर्दिक धधक रही है

अति विकराल भूख की होली,

और बनी जन–गण की आँखें

फैली, फटी भीख की झोली!

देखो, छाती पर पत्थर रख,

वह समूह नर–कंकालों का।

देखो, झुण्ड आ रहा है वह

भूखे, नंगे कंगालों का!

यूँ तो वह आ नहीं रहा है,

वह तो रंच लड़खड़ाता है,

सामाजिकता के पिंजड़े में

पंछी तनिक फड़फड़ाता है!

कवि उस समय जो पीड़ा का अनुभव किया उसे व्यक्त किया है द्य

ISSN : 2394-3580 Swadeshi Research Foundation Vol. – 6, No. - 7 May 2019
A Monthly Journal of Multidisciplinary
International Peer Refereed, Review, Indexing & Impact factor-4.2 Research Journal

गिरिजाकुमार माथुर 'पंद्रह अगस्त' को केवल रस्म अदायगी के रूप में नहीं लेते हैं, इसके जरिये वे गहरी सजगता का आह्वान भी करते हैं, जिसकी जरूरत आज ज्यादा महसूस हो रही है –

''आज जीत की रात

पहरुए सावधान रहना

खुले देश के द्वार

अचल दीपक समान रहना

प्रथम चरण है नए स्वर्ग का

है मंज़िल का छोर

इस जन–मन्थन से उठ आई

पहली रत्न हिलोर

अभी शेष है पूरी होना

जीवन मुक्ता डोर

क्योंकि नहीं मिट पाई दुःख की

विगत साँवली कोर

ले युग की पतवार

बने अम्बुधि महान रहना

पहरुए, सावधान रहना!

''ऊँची हुई मशाल हमारी

आगे कठिन डगर है

शत्रु हट गया, लेकिन

उसकी छायाओं का डर है

शोषण से मृत है समाज

कमज़ोर हमारा घर है

किन्तु आ रही नई जिन्दगी

यह विश्वास अमर है

कवि ने बताया है की आजादी तो मिली है पर फिर भी अभी यह डगर कठिन है हमें अभी भी सावधान रहने की जरुरत है द्य

भारतीय राष्ट्र भावना वास्तव में भारतीय आदर्शप्रिय मानस में विश्व चेतना तथा लोक मंगल की भावना बनकर आधुनिक साहित्य में अभिव्यक्त हुई है।" अतः यह स्वयं सिद्ध है कि राष्ट्रीयता एक महत्वपूर्ण प्रत्यय है और साहित्य सृजन का आधार भी। इसका स्वरूप अत्यन्त व्यापक एवं उदात्त है। इसके अनेक पक्ष हैं। इसमें एक महत्वपूर्ण पक्ष राष्ट्र के प्रति पूज्य भाव है। यह पूज्य भाव ही रचनाकार को राष्ट्र आराधन की प्रेरणा देता है और राष्ट्र के निवासियों के मन में राष्ट्र के प्रति न्योछावर होने का भाव जागृत करता है।

स्वामी विवेकानन्द ने सम्पूर्ण भारतवासियों का जो आह्वान किया उसमें इसी भाव की अभिव्यक्ति है। उन्होंने देशत्व में देवत्व की प्रतिष्ठा की है– "आगामी पचास वर्ष के लिए यह जननी जन्मभूमि भारत माता ही मानो आराध्य देवी बन जाय। तब तक के लिए हमारे मस्तिष्क से व्यर्थ के देवी–देवताओं के हट जाने में कुछ भी हानि नहीं है। अपना सारा ध्यान इसी एक ईश्वर पर लगाओ, हमारा देश ही हमारा जाग्रत देवता है। सर्वत्र उसके हाथ हैं, सर्वत्र उसके पैर हैं और सर्वत्र उसके कान हैं।... जब हम इस प्रत्यक्ष देवता की पूजा कर लेंगे, तभी हम दूसरे देव–देवियों की पूजा करने योग्य होंगे अन्यथा नहीं।"

हिंदी की कविताओं में स्वतंत्रता की प्रखर ध्वनि सुनाई देती है द्यबहुत से कवियों ने अपनी कलम के जादू से देश की जनता को राष्ट्र प्रेम और राष्ट्रवाद का संदेश दिया है द्यकविताओं को पढ़कर जीवन्तता के दर्शन होते है द्य

राष्ट्रकवि मैथिलीशरण गुप्त ने राष्ट्रप्रेम की इस धारा को देश भर में प्रवाहित किया था द्य

ISSN : 2394-3580 Swadeshi Research Foundation Vol. – 6, No. - 7 May 2019
A Monthly Journal of Multidisciplinary
International Peer Refereed, Review, Indexing & Impact factor-4.2 Research Journal

"जो भरा नहीं है भावों से जिसमें बहती रसधार नहीं।

वह हृदय नहीं है पत्थर है, जिसमें स्वदेश का प्यार नहीं।"

सन्दर्भ :–

1.साहित्यिक निबंध दृडॉ.गणपति चन्द्र गुप्त

2. झाँसी की रानी –सुभद्राकुमारी चौहान

3. बृहत निबंध

4. नन्द दुलारे वाजपेयी, आधुनिक साहित्य, राजकमल प्रकाशन,

SRF

ISSN : 2394-3580 Swadeshi Research Foundation Vol. – 6, No. - 7 May 2019
A Monthly Journal of Multidisciplinary
International Peer Refereed, Review, Indexing & Impact factor-4.2 Research Journal

जबलपुर जिले के आर्थिक विकास में महिला उद्यमिता की सार्थकता का अध्ययन

सुनीता विश्वकर्मा
शोधार्थी, रानी दुर्गावती विश्वविद्यालय, जबलपुर (म.प्र.)
डॉ. डी.बी. कोष्टा
वरिष्ठ सहायक प्राध्यापक (वाणिज्य), गोविन्दराम सेकसरिया अर्थवाणिज्य, महाविद्यालय (स्वशासी), जबलपुर

प्रस्तावना :— जबलपुर की महिलाओं में उद्यमिता की प्रवृत्ति विद्यमान है। यह पृथक बात है कि इनकी उद्यमिता का प्रयोग सृजनात्मक व रचनात्मक कार्यो में अधिक नहीं हो पा रहा है और यदि हो भी रहा है तो उसका प्रतिफल उन्हें प्राप्त नहीं हो रहा है। महिलाओं की एक मात्र कुंजी उनका आर्थिक स्वालंबन है। अतः सरकार, समाजसेवी संस्थाओं की महिलाओं के प्रति यह जबावदारी है कि वे महिला शक्ति को पर्याप्त मात्रा में रोजगार के अवसर उपलब्ध कराये। महिलाओं की पहल व इच्छा इसमें सहायक हो सकती है।

महिलाऐं साहस, सहनशीलता और धैर्य जैसे मानवीय मूल्यों के चलते विकास की गतिविधियों से स्वरोजगार के माध्यम से महत्वपूर्ण योगदान दे सकती है। इसके लिए द्विस्तीय कार्य योजना का क्रियान्वयन किया जाना आवश्यक है। प्रथम स्तर ऐसे वातावरण के निर्माण से संबंधित है जिसमें महिलाऐं संकोच या पूर्वाग्रह के बिना स्वयं ही स्वरोजगार के लिए पहल करें। इसमें सरकार, समाज तथा समाजसेवी संस्थाओं और परिवार को उनसे जुड़ी महिलाओं को यह विश्वास दिलाना होगा कि महिलाएं समाज का एक महत्वपूर्ण घटक है और वे आर्थिक विकास में पुरूष के बराबर ही योगदान दे सकती है। सरकार को महिला शक्ति के शिक्षण, प्रशिक्षण की व्यवस्था तथा योजनाओं के प्रचार प्रसार की जिम्मेदारी लेनी होगी। समाजसेवी संस्थाओं को शहरो और ग्रामों में आवश्यकतानुसार उद्यमिता जागरूकता शिविर का आयोजन कर महिलाओं को उद्यमियों के गुण, उद्यमिता की महत्ता, उद्योगों के प्रकार, उद्योगों का प्रबंधक औद्योगिक सम्भावनाओं की जानकारी, विपणन प्रबंध व स्वरोजगार संबंध मार्गदर्शन स्थानीय स्तर पर ही दिये जाने की व्यवस्था करनी होगी। इससे महिलाओं में उद्योगों से जुड़ने के प्रति अभिरूचि जागृत होगी। परिवार के सदस्यों द्वारा महिलाओं का मनोबल बढ़ाकर उन्हें नये उद्यम स्थापित करने की ओर प्रेरित करने से सम्पूर्ण समाज में ऐसे गतिशील वातावरण का निर्माण होगा जिसमें अधिक से अधिक महिलाऍ अपना उद्यम स्थापित करने के लिए पहल करने लगेंगी। इस प्रकार जबलपुर जिले में महिलाओं की उद्यमशीलता को प्रोत्साहित करने का वातावरण तैयार होगा।

जबलपुर जिले के कुटीर उद्योगों के विकास हेतु जिला उद्योग केन्द्र का योगदान :— भारतवर्ष जैसे देश में जहाँ अर्थव्यवस्था गाँवों पर आधारित हो समाजवादी समाज की स्थापना की सफलतता मुख्य रूप से संतुलित तथा विकेन्द्रीय औद्योगीकरण से ही संभव है। इसी उद्देश्य को ध्यान में रखते हुए द्वितीय एवं तृतीय पंचवर्षीय योजनाओं में कुटीर उद्योगों को अधिक महत्त्व दिया गया। योजना आयोग की ग्रामीण औद्योगीकरण उच्चाधिकार समिति की संस्तुति पर केन्द्र सरकार द्वारा 1962—63 से ग्रामीण औद्योगीकरण परियोजना कार्यक्रम प्रारंभ किया गया। इसे प्रयोग के बतौर चुने हुए 49 क्षेत्रों में जिनमें 3 से 5 लाख में भी प्रारंभ किया गया। अप्रेल 1970 से यह कार्यक्रम भारत सरकार के विकास आयुक्त, लघु एवं कुटीर उद्योगों के सम्पूर्ण नियंत्रण में कार्य करने लगा।

जिला एवं उद्योग केन्द्र औद्योगिक विकास में महत्त्वपूर्ण योगदान देते हैं, जिससे लोगों की सामाजिक आर्थिक स्थिति में भी बदलाव आता है। इन केन्द्रों की स्थापना का निर्णय जनता सरकार के कार्यकाल में 23 दिसम्बर 1977 को लिया गया था। 23 दिसम्बर 1977 को संसद में नई औद्योगिक नीति को ध्यान में रखते हुए उद्योग मंत्री ने एक समयबद्ध ग्रामीण औद्योगीकरण की आवश्यकता को प्रतिपादित किया। इस नई नीति को लागू करने तथा ग्रामीण लघु एवं कुटीर उद्योगों को प्रोत्साहित करने के उद्देश्य से जिला उद्योग केन्द्र कार्यक्रम को लागू करने का निश्चय किया गया।

जिला उद्योग केन्द्रों के माध्यम से औद्योगिक सामाजिक एवं आर्थिक विकास (महत्त्व) :— जिला उद्योग केन्द्र योजना, उद्योगों के संवर्धन हेतु एक गहन विस्तार कार्यक्रम है। जिला उद्योग केन्द्रों की स्थापना

का निर्णय जनता शासन काल में पूर्व केन्द्रीय उद्योग मंत्री श्री जार्ज फर्नांडीस ने लिया था। 23 दिसम्बर 1977 को संसद में वक्तव्य देते हुए उन्होंने कहा कि पहले ऐसी योजनाओं, अभिकरणों तथा संगठनों की वृद्धि करने की प्रवृत्ति रही है, जिससे औसत दर्जे के लघु एवं कुटीर तथा ग्रामीण क्षेत्र के उद्यमियों को प्रोत्साहन तथा सहायता मिलने की अपेक्षा वह और भी भ्रम में पड़ जाया करता है। अब लघु क्षेत्र एवं कुटीर विकास केन्द्रों को बड़े शहरों व राज्य की राजधानियों से जिले के मुख्यालयों में ले जाने का विचार किया गया है। कुटीर, लघु तथा ग्रामोद्योग की सभी आवश्यकताओं के बारे में कार्यवाही करने के लिए प्रत्येक जिले में एक अभिकरण होगा, जिसे जिला उद्योग केन्द्र कहा जायेगा।

ग्रामीण अंचलों में उपलब्ध साधनों का स्थानीय उपयोग कर स्थानीय लोगों को रोजगार के अधिक अवसर उपलब्ध कराने तथा ग्रामों से शहर की ओर जाने वाले लोगों को उनके ग्रामों में ही काम दिलाकर आबादी को सुनियोजित ढंग से बसाने के उद्देश्य से जिला उद्योग केन्द्र की विचारधारा वर्ष 1978–79 में साकार हुई। इस प्रकार लघु, कुटीर एवं ग्रामीण उद्यमियों को भटकने से बचाने और एक ही छत के नीचे सभी आवश्यक सुविधाएँ उपलब्ध कराने के उद्देश्य से जिला उद्योग केन्द्रों की स्थापना की गई। ये वास्तव में अपने पूर्ववर्ती जिला उद्योग कार्यालय के परिवर्तित रूप हैं। परंतु ये उनसे बहुत अधिक साधन सम्पन्न हैं। केन्द्रीय सरकार ने प्रत्येक जिला उद्योग केन्द्र को कार्यालय भवन के निर्माण हेतु 2 लाख रुपये तक का अनावर्ती अनुदान, फर्नीचर, साज–सज्जा, गाड़ियों आदि हेतु 3 लाख रुपये तक का अनावर्ती अनुदान जो किसी भी दशा में 3.75 लाख रुपये से अधिक नहीं होगा; स्वीकृत किया। ग्रामीण उद्योग परियोजना को जिला उद्योग केन्द्रों में ही समाहित कर दिया गया।

जिला उद्योग केन्द्रों की स्थापना एवं उद्देश्य :– मध्यप्रदेश के सभी 48 जिलों में जिला उद्योग केन्द्र स्थापित हो चुके हैं। जिला उद्योग केन्द्र की विचारधारा 1978–79 में साकार हुई। इसके पूर्व जिलों में औद्योगिक गतिविधियों एवं बौद्धिक विकास के लिए शासन की ओर से ग्रामीण औद्योगीकरण परियोजना कार्यक्रम किया जाता था।

एक जून 1978 के पूर्व राज्य के प्रत्येक जिले में एक जिला उद्योग कार्यालय होता था, जिसका प्रभारी एक उद्योग सहायक संचालक था। अपने सीमित कर्मचारियों एवं सीमित साधनों के कारण उसके समस्त प्रयास प्रशासकीय कार्यकलापों तक ही सीमित रहते थे। उद्योग स्थापना का कार्य मुख्यतः एक विकसित एवं रचनात्मक कार्य है।

उद्योग की स्थापना को अपेक्षित प्रोत्साहन तो तभी मिल सकता है, जबकि उसे बिना परेशान हुए वित्तीय, तकनीक और अन्य सुविधाएँ सरलता से प्राप्त हो जावें। जिला उद्योग केन्द्रों का गठन इसी उद्देश्य की पूर्ति के लिए किया गया है। इस कार्यालय में उद्योगपतियों को तकनीकी और गैर–तकनीकी जानकारी, वित्तीय सहायता, विभागीय सुविधाएँ, विपणन आदि सभी प्रकार की स्वीकृति, मार्गदर्शन तथा सहायता एक ही कार्यालय से उपलब्ध हो जाती है।

जिला उद्योग केन्द्रों की आवश्यकता :– भारत शासन की नई औद्योगिक नीति का लक्ष्य है, लोगों की सामाजिक–आर्थिक स्थिति का विकास करना, गाँवों का औद्योगीकरण करना, कुटीर उद्योगों को बढ़ावा देना। गावों में उद्योग की स्थापना से अनुपयोगी पड़े हुए स्थानीय साधनों का सदुपयोग किया जा सके, स्थानीय लोगों को अधिक रोजगार के अवसर मिल सकें और शहरों की ओर लगातार जाने वाली ग्रामीण आबादी भी गाँव में टिकी रहे। साथ ही साथ इससे उद्योगों का विकेन्द्रीकरण होगा और क्षेत्रीय असंतुलन दूर करके समूचे राज्य का संतुलित विकास हो सकेगा।

जिला उद्योग केन्द्र के कार्य :–

1. वर्तमान परम्परागत तथा नये उद्योगों, कच्ची सामग्री तथा मानवीय संसाधनों का सर्वेक्षण करना, विभिन्न योजनाओं से सम्बंधित बाजार का पूर्वानुमान करना तथा नमूने के बतौर तकनीक, आर्थिक परिसाध्यता का प्रतिवेदन तैयार करना तथा उद्यमियों के लिए विनियोग से सम्बंधित आवश्यक सलाह देना।
2. विभिन्न इकाइयों की कच्ची सामग्री की आवश्यकताओं, उनके स्रोतों तथा मूल्य को निश्चय करना एवं कच्ची सामग्री की बड़ी मात्रा में क्रय की व्यवस्था करना तथा उद्यमियों को इसका वितरण करना।
3. विभिन्न प्रकार के लघु उद्योगों तथा ग्रामीण उद्योगों की मशीन एवं उपकरण से सम्बंधित आवश्यकता का निर्धारण करना तथा इन मशीनों की उपलब्धता के सम्बंध में उद्यमियों को सलाह देना।

4. बैंक तथा अन्य वित्तीय संस्थाओं से सम्पर्क रखना तथा उद्यमियों की वित्तीय सहायता करने के लिए उनके आवेदन पत्रों को स्वीकृत करना।
5. वस्तु के विपणन से सम्बंधित सहायता के लिए उद्यमियों को सलाह देना, क्रय करने वाली शासकीय एजेन्सियों से सम्पर्क रखना, बाजार अनुसंधान करना, बाजार विकास कार्यक्रम संगठित करना।
6. विभिन्न लघु उद्योगों, कुटीर उद्योगों से सम्बंधित प्रशिक्षण देने वाली संस्थाओं से सम्पर्क रखना तथा उद्यमियों के लिए प्रशिक्षण कार्यक्रम आयोजित करना।
7. जिला खादी बोर्ड से सम्बंध रखना तथा खादी एवं ग्रामीण उद्योगों तथा अन्य कुटीर उद्योगों के विकास पर विशेष ध्यान देना तथा प्रशिक्षण कार्यक्रम आयोजित करना।
8. ग्रामीण युवकों एवं महिलाओं को स्वरोजगार योजना के अन्तर्गत कार्यक्रम के संचालन में महत्त्वपूर्ण भूमिका अदा करते हुए समय–समय पर आवश्यक प्रशिक्षण की व्यवस्था करना।

जिले में कुटीर उद्योगों की स्थापना में शासकीय सुविधाएँ :– राज्य शासन द्वारा जबलपुर जिले में स्थापित होने वाले एवं कुटीर उद्योगों को दी जाने वाली सुविधाओं का सारांश निम्नांकित है:–

1. **भूमि एवं शेड** :– उद्योगों हेतु जबलपुर जिले में पट्टे की भूमि आसान अग्रिम शुल्क तथा भू–वाटन पर औद्योगिक क्षेत्र एवं संस्थान में उपलब्ध होती है।
2. **जल–कर** :– जल का उपयोग करने वाले उद्योग जो कि प्रतिदिन कम से कम 5 लाख टन पानी का उपयोग करते हैं, उन्हें कुछ पैसे प्रति एक हजार गैलन की दर से जल उपलब्ध कराया जाता है।
3. **विद्युत अनुदान** :– ऐसे उद्योग जो विभाग में पंजीकृत हैं उनको उत्पादन करने के दिनांक से 5 वर्ष तक के लिए कुल खपत के बिल में से 20 प्रतिशत की छुट दी जाती है; यदि वे प्रतिमाह निर्धारित सीमा तक विद्युत का उपयोग करते हैं।
4. **विक्रय कर अनुदान** :– विक्रय कर अनुदान योजना के तहत उत्पादित वस्तु पर विक्रय कर नहीं लगता है, उसे कर मुक्त रखा जाता है। जिससे उसकी लागत में कमी आती है और वह वस्तु सस्ती पड़ती है।
5. **प्रवेश कर में छूट** :– शासन की घोषित औद्योगिक नीति के तहत ऐसे सभी उद्योगों को जो उद्योग विभाग में पंजीकृत हैं तथा नगरपालिका क्षेत्र में स्थित हैं उनको कच्चा माल खरीदने के दिनांक से 5 वर्ष तक की अवधि तक प्रवेश कर से मुक्ति दी गई है।
6. **ब्याज अनुदान** :– लघु एवं कुटीर उद्योग इकाईयों को राज्य वित्त निगम या राष्ट्रीय बैंकों से प्रदान किये गए ऋण पर 2 प्रतिशत अनुदान के रूप में दिया गया है तथा आदिवासी एवं हरिजन उद्यमियों को ऋण पर दिये जाने वाले अनुदान की राशि 4 प्रतिशत होती है।
7. **विपणन सहायता** :– मध्यप्रदेश के लघु एवं कुटीर उद्योगों द्वारा उत्पादित वस्तुओं की बिक्री में सहायता देने के उद्देश्य से लगभग 160 वस्तुओं को लघु उद्योग क्षेत्र के अन्तर्गत ले लिया है। इन वस्तुओं को लघु उद्योग निगम के माध्यम से विक्रय करने की व्यवस्था भी शासन द्वारा की गई है।
8. **शिक्षित बेरोजगारों को सुविधाएँ** :– बेरोजगारी की समस्या की तरफ सरकार का ध्यान शुरू से ही रहा है तथा सरकार इस समस्या के समाधान के लिए समय–समय पर विभिन्न उपाय करती है। मध्यप्रदेश शासन ने 1980 में एक नीति तैयार की है।
9. **विचार विनिमय** :– जिला उद्योग केन्द्र के महाप्रबंधक लघु उद्योग की स्थापना के उद्देश्य से आये हुए उद्यमियों से विचार विनिमय करते हैं तथा उद्यमियों को उचित उद्योग तथा उसकी स्थापना के उचित स्थान की जानकारी देते हैं।

जिला उद्योग केन्द्रों द्वारा राज्य में उद्योगों के संवर्धन हेतु त्रिस्तरीय व्यवस्था की गई है, जो इस प्रकार है :

(अ) ग्राम स्तर पर :– ग्रामीण समाज की आवश्यकताओं की पूर्ति करने वाले उद्योगों को प्रोत्साहित करना। वर्ष 1978–79 में स्थापित जिला उद्योग केन्द्रों में 1000 से अधिक जनसंख्या वाले और वर्ष 1979–80 में स्थापित जिला उद्योग केन्द्रों में 2000 से अधिक जनसंख्या वाले प्रत्येक ग्राम में कम से कम 5 उद्योग स्थापित करने का प्रयास किया जा रहा है।

(ब) विकास केन्द्र स्तर पर :– प्रत्येक जिले में कुछ ऐसे केन्द्र चुने गये हैं जो महत्त्वपूर्ण मंडियों, राजमार्ग के छोरों, प्रशासकीय केन्द्रों के रूप में समीप के बहुसंख्यक ग्रामों की आवश्यकताएँ पूरी करते हैं।

(स) जिला स्तर अर्थात् औद्योगिक संस्थान क्षेत्रों में :– प्रायः प्रत्येक जिला मुख्यालय पर बड़े परिश्रम और व्यय से औद्योगिक संस्थान विकसित किये गये हैं। इन पर अपरम्परागत तथा हस्तशिल्प के उद्योगों की स्थापना पर विशेष ध्यान दिया गया है।

वर्तमान में जिला व्यापार एवं उद्योग केन्द्र जबलपुर द्वारा विभिन्न स्वरोजगार योजनाएँ कुटीर उद्योगों के बढ़ाने हेतु चलायी जा रही हैं।

जबलपुर में उद्योग भवन

उद्योग भवन :– उद्यमिता विकास केन्द्र मध्यप्रदेश ''सेडमैप'' मध्यप्रदेश शासन के वाणिज्य उद्योग एवं रोजगार विभाग का स्वशासी प्रशिक्षण संस्थान है। संस्थान का मुख्य उद्देश्य प्रदेश के महिलाओं एवं युवाओं में विभिन्न तरह के कौशल का विकास कर उन्हें उद्यमी बनाना है। इसके लिये यहॉं पर विभिन्न प्रकार के प्रशिक्षण कार्यक्रम दिये जाते हैं।

महिलाओं के कुकिंग/केटरिंग खाद्य प्रसंस्करण, टेलरिंग, ब्यूटी पार्लर्स, आर्टीफिशियल ज्वेलरी बैग निर्माण गिफ्ट। टेडी निर्माण बन्देज रंगाई, टाई एण्ड डाई व अन्य चीजों का प्रशिक्षण दिया जाता है।

उद्योग भवन में बहुत सारी इकाईयाँ स्थापित की गयी हैं। सन् 1984–1985 से विभिन्न सारी इकाईयाँ जबलपुर में स्थापित की गई हैं और ये 2015–16 तक इसमें और भी इकाईयों का रजिस्ट्रेशन हुआ है। जबलपुर में कुल 22,170 उद्योग लगे हैं।

रोजगार :– उद्योग भवन में कुल 22,170 उद्योग लगे हैं जिनमें 29,104 लोगों को रोजगार मिला है, सरकार की मदद से बहुत लोगों ने अपना स्वयं का व्यापार शुरू किया है। सरकार की मदद से महिलायें भी भी अपना स्वयं का कार्य शुरू किया है। जिससे उनमें आत्मविश्वास बढ़ा है। महिलायें अपने घर में ही सिलाई, बड़ी, पापड़, अगरबत्ती, बीड़ी, दोना–पत्तल आदि कार्यों से अपनी जीविका चलती है तथा अन्य को भी रोजगार दे रही है।

विनियोग :– उद्योग भवन से प्राप्त जानकारी के अनुसार जबलपुर में लगी विभिन्न इकाईयों में 56,298 लाख का विनियोग किया जा चुका है। यह जानकारी क्ण्ज्ण्प्ण्ब्ण (क्पेजतपबज ज्तंकम प्दकनेजतल ब्मदजतम) से प्राप्त की गई है। जिससे सभी उद्योग इकाईयों को सफलतापूर्वक चलाया जा सके तथा इससे वे लोग जो स्वयं का अपना काम चाहते हैं। उन्हें अपना काम मिला है।

जिला पंचायत कार्यालय जबलपुर :– जिला पंचायत में मुख्यमंत्री स्वरोजगार योजनान्तर्गत कई ईकाई की स्थापना की गयी है। इसमें खादी और ग्रामोद्योग आयोग के कार्यक्षेत्र में बहुत से उद्योग हैं।

पीएमईजीपी :– प्रधानमंत्री रोजगार सृजन कार्यक्रम (पीएमईजीपी) 15 अगस्त 2008 को घोषणा की और आरईजीपी योजना के स्थान पर शुरू किया। यह योजना ग्रामीण और शहरी दोनों क्षेत्रों में रोजगार के लिए शुरू की।

स्फूर्ति :– स्फूर्ति पारंपरिक उद्योग के उत्थान के लिए फण्ड की एक योजना है एमएसएमई मंत्रालय कलस्टर विकास का बढ़ावा देने की दृष्टि से वर्ष 2005 में इस योजना की शुरूआत की है।

योजनाएँ :– एक दृष्टि से अधिक रोजगार के ग्रामीण क्षेत्रों में अवसरों के साथ ही विभिन्न योजनाओं के खादी एवं ग्रामोद्योग आयोग द्वारा शुरू की है। मौजूदा बुनियादी ढॉचे में सुधार उत्पन्न करने के लिए।

ग्रामोद्योग :– ग्रामीण उद्योग या एक ग्रामीण क्षेत्र के उत्पादन माल में स्थित किसी भी उद्योग के सिर एक कारीगर की निवेश या कार्यकर्ता प्रति रूपये से अधिक नहीं करता है। जिससे सेवा प्रदान करता है।

तालिका –1 उद्योग भवन की इकाईयों का प्रतिशत

क्रमांक	वर्ष	रजिस्टर्ड इकाईयों की संख्या	औसत
1.	2010–11	650	4.81
2.	2011–12	621	5.041
3.	2012–13	630	4.96
4.	2013–14	620	5.05
5.	2014–15	610	5.13
योग		3131	24.991 X= 4.982

स्रोत – डी.टी.आई.सी., जबलपुर

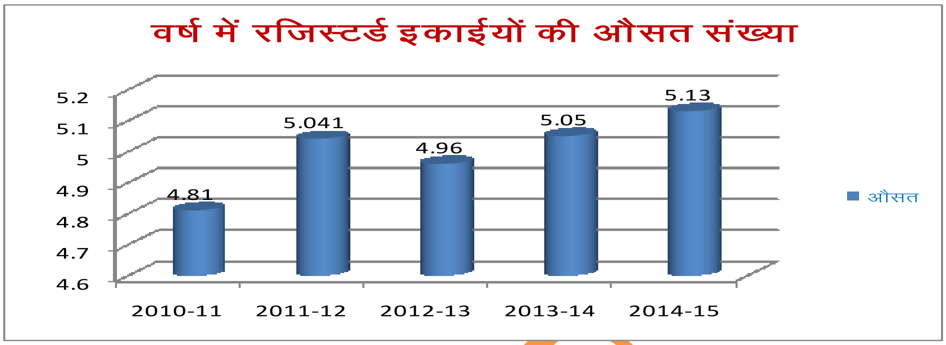

तालिका –2

जबलपुर में कुटीर एवं लघु उद्योग हस्तशिल्प की इकाईयों का प्रतिशत

क्रमांक	उद्योग के प्रकार	इकाईयों की संख्या	औसत
1.	एग्रो बेस्ड	137	10.84
2.	सोडा वाटर	3	495.3
3.	कॉटन टेक्सटाइल	5	297.2
4.	रेडीमेड गारमेंट्स	580	2.56
5.	वुड बेस्ड फर्नीचर	143	10.89
6.	पेपर	69	21.53
7.	केमिकल बेस्ड	84	17.69
8.	रबर बेस्ड	48	30.95
9.	मिनिरल बेस्ड	190	7.82
10.	रिपेयरिंग एण्ड सर्विसिंग	227	6.52
	योग	1486 स्रोत – डी.टी.आई.सी.जबलपुर	901.12 ग्त्र 90ण112

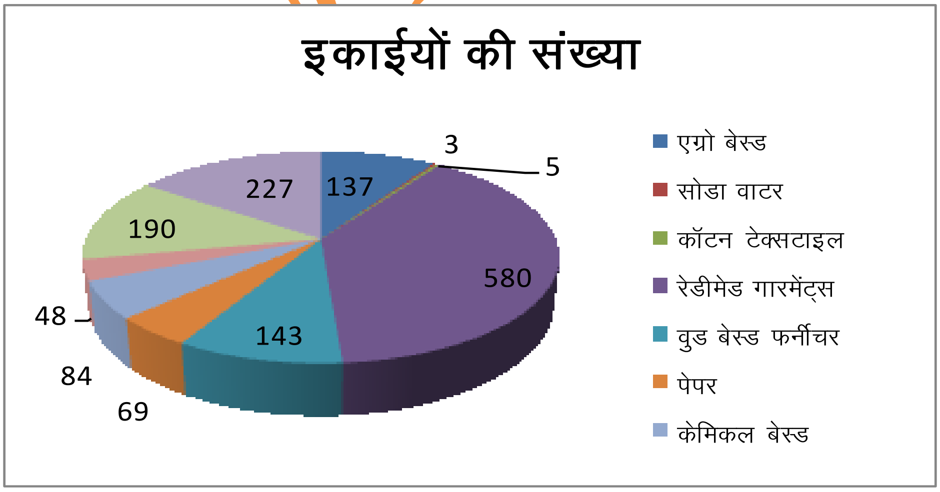

ISSN : 2394-3580 **Swadeshi Research Foundation** Vol. – 6, No. - 7 May 2019
A Monthly Journal of Multidisciplinary
International Peer Refereed, Review, Indexing & Impact factor-4.2 Research Journal

उपयुक्त तालिका जबलपुर के कुटीर एवं लघु उद्योग हस्तशिल्प की इकाईयों की संख्या बतायी गई है। इामें उद्योग के प्रकार व इनकी इकाईयों की संख्या का औसत बताया गया है। एग्रो बेस्ट की इकाई संख्या 137 है तथा औसत (10.84) है। सोडा वाटर इकाई सं. 3 औसत (495.3) कॉटन टेक्सटाइल इकाई सं. 5 औसत (297.2) रेडीमेड गारमेन्ट्स इकाई सं. 580 औसत (2.562) वुड बेस्ट फर्नीचर 143 इकाई सं. (10. 39) पेपर इकाई सं. 69 औसत (21.53) केमिकल बेस्ट इकाई सं. 84 औसत (17.69) रबर बेस्ट इकाई सं. 48 औसत (30.95) मिनरल बेस्ट इकाई सं. 190 औसत (7. 82) रिपेयरिंग एण्ड सर्विसिंग इकाई सं. 227 औसत (6. 54) इस तरह उद्योग भवन की मदद से बहुत से उद्योग चल रहे हैं तथा आगे भी इकाईयों की संख्या बढ़ती जाएगी।

तालिका–3 कार्यालय जिला पंचायत, जबलपुर

मुख्यमंत्री स्वरोजगार योजनान्तर्गत वितरण सूची (2015–16)

क्र.	हितग्राही का नाम	तहसील	उद्योग	दिनांक	ऋण राशि	औसत
1.	कु. आरती गोंड	जबलपुर	सिलाई	21.9.15	35,000	17.00
2.	श्रीमती बंदना गोंड़	जबलपुर	सिलाई	21.9.15	35,000	17.00
3.	श्री रमेश सिंह	कुण्डम	मोटर मेकेनिक	17.12.15	1,40,000	4.25
4.	श्री मंगल सिंह	कुण्डम	आटा चक्की	17.12.15	70,000	8.5
5.	श्रीमती सुनीता दाहिया	पनागर	बड़ी/पापड़		70,000	8.5
6.	कु. अंजना सिंह	पनागर	बड़ी/पापड़	08.08.15	1,40,000	4.25
7.	श्री राजेश चौधरी	मझौली	सेंटिंग कार्य	06.08.15	70,000	8.25
8	श्री सुशील झारिया	पाटन	मसाला चक्की	31.10.15	35,000	17
			योग–		5,95,000	84.75

स्रोत – जिला पंचायत कार्यालय, जबलपुर

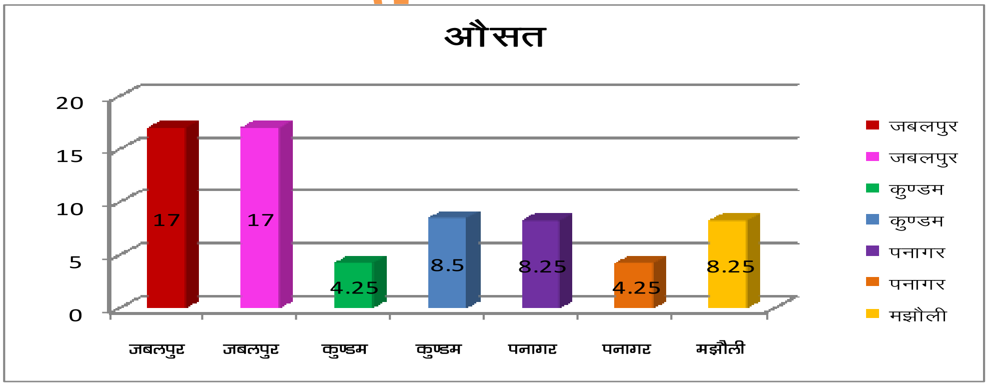

उपर्युक्त तालिका से स्पष्ट होता है कि जबलपुर जिले में अलग–अलग तहसील में कुटीर उद्योग का कार्य चल रहा है। जिसके लिए सरकार ऋण प्रदान करती है। जबलपुर में सिलाई के लिए ऋण दिया जिसका औसत (17) है। कुण्डल में मोटर मेकेनिक व आटा–चक्की के लिए दिया जिसका औसत है (4.25)(8.25) पनागर में बड़ी/पापड़ ने लिए जिसका औसत (8.3) (4.25) है। मझौली में सेंटिंग कार्य के लिए औसत (8.25) पाटन में मसाला चक्की के लिए औसत है (17) इस तरह मुख्यमंत्री स्वरोजगार योजना में बहुत लोगों को ऋण दिए जिससे वे अपना कार्य प्रारंभ कर सके।

निष्कर्ष :– प्रस्तावित शोध अध्ययन द्वारा म.प्र. शासन की लघु एवं कुटीर उद्योगों की योजनाओं की महिला उद्यमिता पर पड़ने वाले प्रभाव का अध्ययन किया जाएगा। लघु एवं कुटीर उद्योगों में निम्न सामाजिक एवं आर्थिक स्थिति के लोग जुड़े हुए है। तथा उद्योगों में प्रोत्साहन की कमी एवं उद्योग से कम आय होने से कई बार लोग दूसरे कार्य करने लगते है। अतः प्रस्तुत शोध में लघु एवं कुटीर उद्योगों में कार्यरत महिलाओं को प्रशिक्षण देकर उनकी सामाजिक और आर्थिक स्थिति बेहतर बनाने हेतु प्रयास किये जायेंगे। इस अध्ययन द्वारा सरकार जो योजना देती है उसके क्रियान्वयन में होने वाली कठिनाईयों को दूर करने में भी मदद मिलेगी।

संदर्भ ग्रन्थ सूची :–

1. कुलश्रेष्ठ आर. एस., (1998) – औद्योगिक अर्थशास्त्र, साहित्य भवन, आगरा पब्लिकेशन।
2. मुकर्जी रवीन्द्रनाथ, (1991) – भारत में सामाजिक परिवर्तन, विवेक प्रकाशन, दिल्ली।
3. डॉ. मुकर्जी रवीन्द्रनाथ, (1991) – सामाजिक सर्वेक्षणस व सामाजिक शोध, विवेक प्रकाशन।
4. लघु कुटीर उद्यासेग कैसे लगायें, उद्यमियों के लिए मार्गदर्शन, उद्योग विभाग म.प्र.शासन।

ISSN : 2394-3580 Swadeshi Research Foundation Vol. – 6, No. - 7 May 2019
A Monthly Journal of Multidisciplinary
International Peer Refereed, Review, Indexing & Impact factor-4.2 Research Journal

कृषि एवं ग्रामीण विकास बैंक द्वारा प्रदत्त वित्तीय एवं विकासात्मक योगदान

डॉ. शिवेन्द्र शर्मा
प्राचार्य, प्रज्ञान महाविद्यालय, कसरावद (म.प्र.)

नाबार्ड सूक्ष्म वित्त संचालन को प्रोत्साहित करने एवं उसके आधार में विस्तार करने हेतु अपने सहभागियों की क्षमता निमार्ण में सहायता करता है और उन्हें वित्तीय मदद प्रदान करता है। अधिक से अधिक संख्या में एसएचजी को बैंकिंग प्रणाली से जोड़ने के अपने प्रयासों में नाबार्ड अपने पार्टनर एजेन्सियों के लिए विभिन्न कार्यक्रमों के माध्यम से उनके प्रशिक्षण एवं जागरूकता कार्यक्रम पर भी ध्यान देता हैं।

नाबार्ड अब भी स्वयं सहायता समूहों के वित्तपोषण हेतु बैंकों को पुनर्वित्त सहायता प्रदान करता हैं। एसएचजी बैंकलिंकेज की इस यात्रा में नाबार्ड ने कई पड़ाव पार किए हैं – जैसे कि दो दशक पहले गरीब ग्रामीणों के 500 पायलट एसएचजी को बैंकों से जोड़ने को लेकर एक वर्ष पहले तक कुल 80 लाख समूहों का गठन करने में सफलता प्राप्त की है। इसी प्रकार से आरंभिक वर्षों में कुछ हजार रूपयों की बचत राशि के कार्पस को आज वर्ष 2012–13 तक 27000 करोड़ तक पहुंचाने, कुछ करोड़ रूपयों की बैंक क्रेडिट को 40000 करोड़ तक बढ़ाने तथा संवितरण को 20000 करोड़ तक पहुंचाने में सफलता प्राप्त की है। देश में इस आंदोलन का भौगोलिक विस्तार भी जो आरंभ में केवल आंध्र प्रदेश–कर्नाटक तक सीमित था, अब देश के कोने–कोने में दूर–दराज फैल रहा है, लगभग साढ़े नौ करोड़ ग्रामीण गरीब परिवार अब इस माइक्रो–क्रेडिट आंदोलन से जुड़ चुके हैं जो एक विश्व रिकार्ड है।

प्रारंभ से सहकारी समितियों के अंतर्गत केवल कृषि साख की व्यवस्था को शामिल किया जाता था। ग्राम पंचायत ग्राम समिति और ग्राम स्कूल को ऐसे संस्थानों के रूप में समझा गया जिनके आधार पर एक आत्मनिर्भर आर्थिक एवं सामाजिक दृष्टि से न्यायपूर्ण सामाजिक व्यवस्था स्थापित की गई। सहकारी समितियाँ शोषण रहित स्वरूप सदस्यता के स्वेच्छ, एक व्यक्ति एक वोट का सिद्धांत अविकेन्द्रीकृत निर्णय प्द्धति और लाभ पर आत्परोपित नियंत्रण कुछ ऐसे लक्षण है जो सहकारी संस्थानों में निजी स्वामित्व और सार्वजनिक हित के गुणों का मिश्रण इन्हें विकास का एक महत्वपूर्ण उपकरण बनाया है।

अल्पकालीन उधार सहकारी समिति :– भारत में सहकारी समितियों का आरंभ मुख्यतः किसानों को कृषि कार्यो के लिए अपेक्षित ऋण कम ब्याज दर पर उपलब्ध कराई जा सके और महाजन के चुंगल से मुक्त किया जा सके। अल्पकाल के लिए जिसकी विवचेना निम्नानुसार की गई है।

प्राथमिक उधार समिति :– सहकारी उधार समिति जिसे सामान्यतः प्राथमिक कृषि उधार समिति कहा जाता हैं। जो एक या अधिक व्यक्तियों से प्रारंभ किया जाता है। सामान्यतः सदस्य एक ही गाँव के स्थानीय होते है। प्रत्येक हिस्से का मूल्य सामान्यतः नाम मात्र का होता है। ताकि गरीब से गरीब किसान भी समिति का सदस्य बन सके। इन सदस्यों का दायित्व असीमित होता है। जिसका तात्पर्य यह है कि समिति के विफल होने पर सम्पूर्ण हानि की प्रतिपूर्ति प्रत्येक सदस्य को करना होता है। समिति का प्रबंध निर्वाचित संस्था के द्वारा की जाती है। जिसके अध्यक्ष सचिव और कोशाध्यक्ष रहते है। प्रबंध मण्डल के सदस्य अवैतनिक होते है। जिसके अध्यक्ष केवल लेखाकार वैतनिक होता है। यह तब होता है जब समिति या आकार बड़ा तथा आवश्यक हो।

कृषि कार्य के लिए सामान्यतः अल्पकालीन ऋण एक वर्ष के लिये दिया जाता है, जिसकी ब्याज दर वैधानिक दृष्टि से कम होती है। लाभ को हिस्सेदारी में लाभांश के रूप में वितरीत नहीं किया जाता बल्कि इसका उपयोग जनकल्याण के कार्यो पर किया जाता है। जैसे– कुंआ, स्कूल बनाने एवं देखभाल करने आदि के लिए उपयोग में लाया जाता है।

ISSN : 2394-3580 Swadeshi Research Foundation Vol. – 6, No. - 7 May 2019
A Monthly Journal of Multidisciplinary
International Peer Refereed, Review, Indexing & Impact factor-4.2 Research Journal

प्राथमिक कृषि उधार समितियाँ

वर्ष	1970–71	1980–81	1990–91	2000–01	2010–11
संख्या हजार में	106	212	161	93	104
दिये गये ऋण करोड़ में	23	202	578	10883	23431

स्त्रोत– भारतीय रिजर्व बैंक वार्षिक रिपोर्ट

भारतीय रिजर्व बैंक द्वारा प्राथमिक सहकारी समितियों के पुनर्गठन तथा पुनरूद्धार का कार्यक्रम प्रारंभ किया गया। कुछ राज्यों जैसे राजस्थान, उड़ीसा, मध्यप्रदेश, केरल, तमिलनाडू तथा गुजरात में पूरा किया गया है। जबकि अन्य राज्यों में प्रगति नहीं हुई जो वर्ष 1990–91 में 161000 थी जिसकी कमी करते हुए वर्ष 2000 में 93000 कर दी गई जो वर्तमान में 104000 है।

खरगौन जिले में सहकारी समितियों का संगठन रिफाइजन तथा शुल्ज–रेलिज के विचारों के आधार पर हुआ है। खरगौन जिले में दो प्रकार की समितियों की प्रधानता है–ग्रामीण क्षेत्रों में प्राथमिक समिति, जिल में केन्द्रीय सहकारी बैंक आदि जिसकी विवेचना तालिका में स्पष्ट किया गया है।

खरगौन जिले में सहकारी समिति की स्थिति

(रूपये करोड़ो में)

क्र.	संस्था के प्रकार	संख्या सदस्य कार्यशील	कुल सदस्य	कार्यशील पूंजी	ऋण के रूप
01	प्राथमिक कृषि सहकारी समिति	124	11063	136.75	90.63
02	गृह निर्माण सहकारी समिति	69	1035	77.12	69.52
03	प्राथमिक सहकारी उपभोक्ता भण्डार	133	29797	88.52	49.25
04	वनोपज सहकारी समिति	29	1782	2.45	2.04
05	दुग्ध उत्पादक सहकारी समिति	291	6984	45.36	38.30
06	मत्स्य पालन सहकारी समिति	36	1044	5.50	2.36
07	कृषि साख/शहरी साख समिति	80	18320	130.75	80.40
08	बुनकर एवं पारवलूम समिति	01	32	0.90	0.35
09	तिलहनउत्पादक सहकारी संस्था	53	2862	25.52	10.25
10	अन्य	192	91072	112.25	29.92
	कुल	1008	163991	624.22	373.02

स्त्रोत– उप आयुक्त सहकारिता जिला खरगौन।

उपर्युक्त तालिका से स्पष्ट है कि कुल 1008 पंजीकृत सहकारी समितियों में अलग–अलग क्षेत्रों में कार्यरत् है। जिसमें पंजीकृत प्राथमिक कृषि साख समिति की संख्या 124 जिसमें 11063 सदस्य सम्मिलित है। जिसकी कार्यशील पूँजी 136.75 करोड़ रूपये है, जिसमें सदस्यों को ऋण के रूप में उपलब्ध करायी गयी राशि 90.63 करोड़ रूपये है। गृह निर्माण सहकारी समिति की संख्या 69 है जिसमे सम्मिलित सदस्यों की संख्या 1035 है। जिसकी कार्यशील 77.12 करोड़ रूपये है जिसमें सदस्यों को उपलब्ध कराई गई राशि 69.52 करोड़ रूपये की रही है। प्राथमिक उपभोक्ता भण्डार की संख्या 133 जिसकी कार्यशील पूँजी 88.52 करोड़ रूपये की रही है जिसमें कुल सम्मिलित 29797 सदस्यों को 49.25 करोड़ रूपये की सुविधा उपलब्ध कराई गई है।

वनोपज सहकारी समिति की संख्या 29 जिसकी कार्यशील पूँजी 2.45 करोड़ रूपये है जिसके 1782 सदस्यो को 2.04 करोड़ रूपये ऋण के रूप में उपलब्ध कराया गया है। दुग्ध उत्पादक सहकारी समिति कुल संख्या 291 है। जो खरगौन जिले में सर्वाधिक कार्यरत संस्था है जिसकी कुल कार्यशील पूँजी 45.36 करोड़ रूपये है जिसके 6984 सदस्यों को 38.30 करोड़ रूपये ऋण के रूप में उपलब्ध कराया गया है। मत्स्य पालन सहकारी समिति की संख्या 36 है जिसकी कुल कार्यशील पूँजी 5.50 करोड़ रूपये की रही है जिसके कुल 1044 सदस्यों को 2.36 करोड़ रूपये की सुविधा उपलब्ध कराई गई है। अकृषि एवं शहरी साख सहकारी समिति की कुल संख्या 80 है जिसकी कार्यशील 130.75 करोड़ रूपये है जिसके 18320 सदस्यों को 80.40 करोड़ रूपये की सुविधा उपलब्ध कराई गई है।

खरगौन जिले में एक मात्र बुनकर एवं पावरलूम सहकारी समिति पंजीकृत है। जिसकी कुल कार्यशील पूँजी 90 लाख रूपये है जिसके 32 सदस्यों को 35 लाख रूपये की सुविधा उपलब्ध कराई गई है। तिलहन उत्पादन सहकारी संस्था की कुल संख्या 53 है जिसकी कार्यशील पूँजी 25.52 करोड़ रूपये रही है जिसके 2862 सदस्यों को 10.25 करोड़ रूपये की सुविधा उपलब्ध कराई गई है। इस प्रकार शेष अन्य सहकारी समितियाँ अलग रूप में कार्यरत् है जिसकी कुल संख्या 192 है जिसकी कार्यशील पूँजी 112.25 करोड़ रूपये जिसमें 91072 सदस्यों को 29.92 करोड़ रूपये की सुविधा उपलब्ध कराई गई है।

अध्ययन अवधि में पाया गया है कि अलग–अलग प्रकार की सहकारी समितियाँ अलग–अलग रूपों में कार्यरत है। प्राथमिक कृषि साख समिति मूलरूप कृषि कार्य के लिए कृषकों को ऋण उपलब्ध कराता है साथ ही रियायती दर पर बीज खाद इत्यादि आवश्यकता अनुसार कृषकों को दिया जाता है। गृह निर्माण सहकारी समिति मूल रूप से आवास उपलब्ध कराने के उद्देश्य से कार्य करती है। सदस्यों को तथा बाहरी व्यक्तियों को रियासती तथा किस्तों पर सीमित ब्याज दर पर उपलब्ध कराया जाता है।

प्राथमिक सहकारी उपभोक्ता भण्डार मूलतः उपभोक्ताओं को सस्ते एवं रियायती दर पर घरेलू सामान उपलब्ध कराया जाता है। जैसे गेहूँ, चावल, शक्कर, केरोसीन कपड़े एवं अन्य अनिवार्य वस्तु सम्मिलित है। वनोपज सहकारी समिति मूल रूप से वनीय उत्पाद का कार्य करते है जिससे जो सदस्य होते है उनसे वनोपज खरीदे जाते है जैसे तेंदू पत्ता, गोंद वनीय जड़ी बुटी इत्यादि को क्रय करके लाभ सदस्यों को बाँट दिया जाता है। दुग्ध उत्पादन सहकारी समिति विशेश रूप से ग्रामीण पशु पालकों से दूध, एकत्र किया जाता है बाजार या बड़ी कम्पनियों को बेचा जाता है यहाँ तक जिनकों भैंस या गाय की आवश्यकता होती है उनको पशु खरीदने के लिये समिति की ओर से ऋण उपलब्ध कराया जाता है। साथ ही पशुओं के इलाज के लिये चिकित्सक तथा पशुओं लिये चारा भूसा उपलब्ध कराया जाता है।

मत्स्य पालन सहकारी समिति की गतिविधि दुग्ध उत्पादन सहकारी समिति की तरह है जिसमें समिति के द्वारा ऐसे सदस्यों को सम्मिलित किया जाता है। जिनके पास तालाब की पर्याप्त भूमि तथा जल उपलब्ध होता है मछली के लिये मछली बीज तथा उत्पादन के साधन उपलब्ध कराये जाते है। सभी सदस्यों से एकत्र कर पैकिंग करके निर्यात या बाजार में विक्रयार्थ भेजा जाता है। इस प्रकार अकृशि तथा शहरी साखसमिति मूल रूप से बैंकिंग व्यवसाय करने वाली संस्था होती है।

बुनकर एवं पावरलूम सहकारी समिति मुख्य रूप से कपड़ा बुनाई का कार्य करता है जो सदस्यों से बुने हुए कपड़े खरीद कर तथा रंगाई करके बाजार या ब्राण्डेड कम्पनी को बेचता है। इसके लिए समिति सदस्यों सभी प्रकार की सुविधा उपलब्ध कराता है। तिलहन उत्पादक सहकारी संस्था मूल रूप से तिलहन की फसलों के साथ तैयार तेलों की पैकिंग कर बाजार में विक्रय करता है इसके लिए समिति के द्वारा सदस्यों को सभी सुविधाये उपलब्ध कराता है। इस प्रकार अन्य सहकारी समिति में उन सभी प्रकार की समितियों को सम्मिलित किया गया है जिससे बैंकिंग थोक व्यवसाय, फलफूल व्यवसाय, खनिज उत्खनन, प्रिटिंग प्रेस इत्यादि व्यवसाय को सहकारी के रूप में कार्य करने के लिए सुविधायें उपलब्ध करवाई जाती है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. उषा मोदी, 1994, 'रिजर्व बैंक का सेवाक्षेत्र दृष्टिकोण' एक समीक्षात्मक अध्ययन।
2. मोहनदास सोमानी, 2005, निमाड़ के आर्थिक विकास में क्षेत्रीय ग्रामीण बैंक का योगदान।
3. लक्ष्मीकांत त्रिपाठी, 2006 'स्वर्ण जयंती शहरी स्वरोजगार योजना के अंतर्गत चुने हुए राष्ट्रीयकृत बैंकों द्वारा प्रदत्त सहायता का आर्थिक विश्लेषण'।
4. धीरज शर्मा, 2003, 'बैंक का लाभदायकता का विश्लेषणात्मक अध्ययन'।
5. संगीता सिद्यानियां 1992, 'इन्दौर जिले में शिक्षित बेरोजगार युवकों के लिए स्वरोजगार योजनाओं का कियान्वन एवं मूल्यांकन'

ISSN : 2394-3580 Swadeshi Research Foundation Vol. – 6, No. - 7 May 2019
A Monthly Journal of Multidisciplinary
International Peer Refereed, Review, Indexing & Impact factor-4.2 Research Journal

प्राचीन भारत में अनुसूचित महिलाओं की स्थिति

डॉ. राधिकेश जोशी
राजनीति विज्ञान, शास. महाविद्यालय, सतवास

भारत के प्राचीन इतिहास की पृष्ठभूमि के अवलोकन से स्पष्ट होता है कि वैदिक काल में भी पंचायतीराज का अस्तित्व था। तत्कालीन राजा पंचायतों के माध्यम से राज कार्य संभालता था। उस दौरान ग्राम का प्रमुख ग्रामिणी होता था जो पंचायत का भी प्रमुख होता था। चाणक्य ने अपने प्रसिद्ध ग्रंथ 'अर्थशास्त्र' में अनेकों बार ग्रामिक शब्द का उल्लेख किया है जो ग्राम का प्रमुख हुआ करता था। पंचायत में ग्रामिक की मुख्य भूमिका होती थी। दसवीं शताब्दी के पूर्वार्द्ध में दक्षिण में पंचायतें पूर्ण अस्तित्व में थी। संपूर्ण शासन का कार्य भारत एक महासभा पर केन्द्रित होता था। जिसका आधार चुनाव प्रणाली होती थी।

पंचायतराज संस्थाओं को जहॉ संवैधानिक दर्जा देकर स्थापित किया गया है, वही महिलाओं, अनुसूचित जाति, अनुसूचित जनजाति और पिछड़ा वर्ग के लोगों को आरक्षण की व्यवस्था की गई है। महिलाओं का आरक्षण 33 प्रतिशत से बढ़ाकर 50 प्रतिशत किया गया है। जिससे एक नया नेतृत्व उभरकर सामने आया है।

मध्य प्रदेश पंचायत राज अधिनियम, 1993 की धारा 17 – छ में व्यवस्था की गई है कि ग्राम पंचायत का सरपंच यदि अनुसूचित जाति या अनुसूचित जनजाति या अन्य पिछड़ा वर्ग का नही है तो उपसरपंच ऐसी जाति या जनजाति या अन्य पिछड़ा वर्ग के पंचों में से निर्वाचित किया जाएगा। खण्ड के भीतर सरपंचों के कुल स्थानों की संख्या के कम से कम 50 प्रतिशत स्थान महिलाओं के लिए आरक्षित किये गये है। वहीं अधिनियम की धारा 23 और 30 में प्रावधान किया गया है कि जनपद एवं जिला पंचायतों में अनुसूचित जाति और जनजाति के लिए भी कुछ पद आरक्षित किए जाएगें। इस प्रकार आरक्षित स्थानों की संख्या का अनुपात उस जनपद या जिला पंचायत क्षेत्र में अनुसूचित जाति या जनजाति की जनसंख्या का उस क्षेत्र की कुल जनसंख्या के साथ है। जिन जनपद पंचायतों में अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति की कुल आबादी के आधे से कम है वहां पर अन्य पिछड़े वर्गो के लिए 25 प्रतिशत आरक्षित किये जाएगे।

अधिनियम की धारा 25 – 32 (2) में प्रावधान किया गया है कि जनपद पंचायत के अध्यक्ष का पद अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति के लिए उसी अनुपात में आरक्षित किया जाएगा जो कि कुल अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति की जनसंख्या तथा कुल जनसंख्या के बीच है।

अंततः आजाद भारत की खुली हवा में पंचायतें विकास के नये दौर में प्रवेश कर पायी। हालांकि आजादी के बाद भारत की सरकार ने बड़ी चर्चाओं और बहसों के पश्चात् इनके लिये नियम कानून बनाये। पचास के दशक में संविधान को अमली जामा में पहुँचाने के समय पंचायतों को राज्यों के निति निर्देशक सिद्धांत के तहत जगह मिली। यानी पंचायतों के कर्त्तव्य और अधिकार के प्रति किसी भी सरकार को न्यायालय में चुनौती नहीं दी जा सकती थी, पंचायतों के बारे में उन्हे स्वेच्छा से निर्णय करना था। इससे यह हुआ कि एक समय तक पंचायतों की प्रगति धीमी हो गयी, हर राज्य की अलग–अलग प्राथमिकता थी और इसके मुताबिक अलग पृथक–पृथक नियम और कायदे। यह कार्य भारत के संविधान के अनुच्छेद 40 में पंचायतों की व्याख्या के अनुरूप नही थे। जिसमें साफ तौर पर लिखा है कि राज्य ग्राम पंचायतों का संगठन करने के लिये कदम उठायेगा और उनको ऐसी शक्तियां और अधिकार प्रदान करेगा जो उन्हें स्वायत्त भासन की इकाईयों के रूप में कार्य करने योग्य बनाने के लिये आव" यक है। इसमें यह विश्वास झलकता है कि राज्य ग्राम पंचातयों को संगठित करने के लिये कदम उठायेगा और शक्तियाँ प्रदान करेगा।

सरकार ने शुरू–शुरू में इन उद्देश्यों को अमल में लाने के लिये गांधी जी के जन्म दिवस 2 अक्टूबर 1952 को सामुदायिक विकास कार्यक्रम आंरभ किया जिसके अंतर्गत खण्ड को एक इकाई मानकर खण्ड के विकास के लिए बैठे सरकारी कर्मचारियों के साथ सामान्य जनता को विकास की प्रक्रिया से जोड़ने का प्रयास किया गया लेकिन इस कार्यक्रम की सबसे बड़ी खामी यह रही की जनता को कोई अधिकार नही दिया गया जिस कारण से यह कार्यक्रम सफल न हो सका। लेकिन इसका फायदा यह मिला की नीतियों में

ISSN : 2394-3580 Swadeshi Research Foundation Vol. – 6, No. - 7 May 2019
A Monthly Journal of Multidisciplinary
International Peer Refereed, Review, Indexing & Impact factor-4.2 Research Journal

कमियों की ओर ध्यान दिया गया। इसी कार्यक्रम की तर्ज पर 2 अक्टूबर 1953 को राष्ट्रीय प्रसार सेवा का आरंभ किया गया लेकिन यह कार्यक्रम भी ज्यादा दिनों तक नही चल सका। सरकार ने इन गलतियों से सबक लेकर सन् 1957 में बलवंतराय मेहता की अध्यक्षता में ग्रामोद्वार समिति का गठन किया। इस समिति ने अपनी सिफारिशे पेश की जिसमें त्रिस्तरीय पंचायतीराज व्यवस्था का सुझाव था। जो जिला स्तर पर जिला पंचायत, तहसील स्तर पर तहसील पंचायत और ग्राम तथा छोटे मोटे गांवों से थोड़ा समृद्ध कस्बों के लिये नगर पंचायतों के रूप में थी। सिफारिशों में ग्राम समूहों के लिये प्रत्यक्ष निर्वाचित पंचायत समितियॉं तथा खंड एवं जिला स्तर पर निर्वाचित और नामित सदस्यों की मांग की गयी। मेहता समिति की सिफारिशों को 1958 में लागू किया गया। इसी समिति को ध्यान में रखते हुये राजस्थान की सरकार ने 2 सितम्बर 1959 को पंचायतीराज अधिनियम पारित किया। 2 अक्टूम्बर 1959 को राजस्थान के नागौर जिले मे पंचायतीराज की नयी व्यवस्था लागू की गयी। राजस्थान वह पहला राज्य था जिसने पंचायतीराज व्यवस्था को तृणमूल स्तर के विकास की परिभाषा के रूप में सिर्फ कागजों पर ही नही सिमट जाने दिया बल्कि जमीनी हकीकत को सुदृढ़ और व्यवस्थित शक्ल दी। यानी आगाज हो गया था तो फिर क्या था। एक के बाद एक राज्य ने पंचायती राज अधिनियम पारित कर व्यवस्था को लागू किया।

आंध्रप्रदेश इन राज्यों की श्रेणी में पहले पायदान पर रहा तो उसके बाद पंजाब, महाराष्ट्र, गुजरात, उत्तरप्रदेश आदि राज्यों ने भी पंचायतों को नयी शक्तियां और अधिकार दिये। बलवंतराय मेहता समिति की सिफारिशें पंचायतीराज के लिये मिल का पत्थर साबित हुयी। इसके बाद कई समितियां आयी।

उदाहरण के तौर पर बलवंतराय मेहता समिति की सिफारिशों को लागू करने के बाद इसमें कई खामियां दिखायी दी। जिन्हें दूर करने के लिये 1977 में अशोक मेहता की अध्यक्षता में 13 सदस्यीय समिति का गठन किया गया। लगभग 150 सिफारिशों के साथ समिति ने 1978 में अपनी रिपोर्ट भारत सरकार को सौंपी।

इसमें विकेन्द्रीकरण का प्रथम स्तर जिला माना गया जिला स्तर के नीचे बीस हजार जनसंख्या और 15–20 गांव वाली मण्डल पंचायत के गठन की मांग की गयी। कार्यकाल 4 वर्ष करने की बात थी लेकिन इस समिति की संस्तुतियों को नाकाफी मानते हुये लागू नही किया गया। तत्प" चात् 1985 में पी.बी. के राव समिति आयी इसने भी कुछ सिफारिशे की। फिर संथानम् समिति आयी जो पंचायतों को राजस्व के साधन सौपने, राज्य सरकारों के द्वारा पंचायतों को वार्षिक अनुदान, विभिन्न प्रकार के कर लगाने की शक्ति देने संबंधी पंचायतीराज वित्त निगम की स्थापना की। वित्तिय सहायता किसानों को मिल सके इसके लिये उनके अपने वित्तिय संस्थान और अधिकार व्यापक रूप से मिल सकें आदि संस्तुतिंया की। इसके बाद आयी सिघंवी समिति ने भी गांवों के पुर्ननिर्माण के लिये वित्तिय संस्थानों की समुचित पहुंच पर जोर दिया। सन् 1988 में गठित पी.के. थुंगन समिति ने पंचायतों को संविधान के नीति निर्देशक सिद्धांतों के स्वप्रेरित खण्ड से पृथक कानून के रूप में जगह देने की मांग की तथा संविधान में पंचायतों के गठन और क्रियान्वयन को बाह्यकारी करने की सिफारिश की थी। संस्तुति के बाद 64 वां संविधान संशोधन लोकसभा में पारित किया गया लेकिन यह विधेयक राज्य सभा में पास न किया जा सका। फिर 74 वां संविधान संशोधन विधेयक लोकसभा के भंग हो जाने पर समाप्त हो गया। फिर 72 वां संविधान संशोधन पारित हुआ जो संयुक्त समिति के पास करने के बाद 73 वे संविधान संशोधन के रूप में 1992 में लोकसभा, राज्यसभा और राज्य विधान सभाओं द्वारा पारित किया गया। 1993 में इसे राष्ट्रपति की अंतिम मंजूरी मिली। भारत में पंचायतीराज के लिये यह कदम ऐतिहासिक तो था ही गौरवान्वित भी कर रहा था। इस संविधान संशोधन से पंचायत में महिला सशक्तिकरण की प्रक्रिया को भी बल मिला। चूंकि इस संशोधन से पूर्व गांवों, कस्बों आदि की अशिक्षित किंतु योग्य महिलाओं को उनका सही स्थान तथा हक नहीं मिल पा रहा था। चूंकि महिलाएँ योग्य तो होती थीं लेकिन रूढ़ीवादी समाज में धीरे–धीरे महिलाओं की स्थिति अत्यंत दयनीय थी। यह सभी महिलाऐं चाहकर भी शिक्षा ग्रहण न कर पाती। कानूनी और प्रशासनिक अधिकार भून्य थे। इसलिये इस संविधान संशोधन में पंचायतों के प्रत्येक स्तर पर महिलाओं को एक तिहाई आरक्षण का प्रावधान किया गया। अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति की महिलाओं को उनकी जनसंख्या के अनुपात में आरक्षण प्रदान किया गया। ग्यारहवीं अनुसूचि का समावेश भी भारत के संविधान में पंचायतों के अधिकारों एवं कर्त्तव्यों के लिये किया

गया। पशुपालन, कृषि सुधार और विस्तार, मतस्य उद्योग, वन उत्पाद, खादी ग्राम और कुटीर उद्योग, ग्रामीण आवास, पेयजल, पशु संरक्षण, प्रसंस्करण उद्योग जैसे व्यापक क्षेत्रों को इस अनुसूचि के द्वारा पंचायतों की शक्तियों के भीतर लाया गया। अब पंचायतों में महिलाओं का स्थान सुरक्षित हो गया। इसलिये महिलाओं ने बहुत से लघु उद्योग में होने वाले महिला शारीरिक और मानसिक उत्पीढ़न के प्रति आवाज उठायी। धीरे–धीरे महिलाओं के वर्चस्व वाले उद्योगो में इन महिला सरपंचों ने उनके व्यक्तिगत और सामुहिक स्वामित्व वाले उद्योगों को प्रोत्साहन देना प्रारंभ किया।

इससे एक तरह तो महिलाएं आर्थिक और राजनीतिक रूप से सक्षम हो गयी। वहीं दूसरी तरफ आने वाली पीढ़ियाँ खासकर बालिकाओं को भी शिक्षा के अवसर मुहैया हो गये। शायद यही कारण है कि बहुत बड़े स्तर पर सही लेकिन कुछ एक गांवो और कस्बों से आज बहुत सी बालिकाओं को शिक्षा, स्वास्थ्य, प्रशासन आदि में झण्डे गाड़ते देखा जा सकता है। वैसे भी जब किसी समाज में किसी उपेक्षित एवं शोषित वर्ग के पास राजनीतिक और आर्थिक शक्ति आती है, तो समाज में उसका दर्जा बढ़ जाता है और यही किसी राष्ट्र या समुदाय के विकास का लक्षण है। इसका एक प्रत्यक्ष उदाहरण है कि बिहार जैसे पिछड़े राज्य की मुसहर जैसी शोषित जाति की गिरिजा देवी संयुक्त राष्ट्र संघ को संबोधित करती हैं। इतना ही नही संयुक्त राष्ट्र संघ के आर्थिक और सामाजिक विभाग द्वारा आयोजित महिला सशक्तिकरण के कार्यक्रम में गिरिजा देवी द्वारा दिये गये सुझावों को विश्व के बड़े–बड़े गैर सरकारी संगठनों ने लागू करने की बात कहकर न केवल इस महिला को बल्कि भारत के पंचायतीराज की सफलता को स्वीकार किया है। गांवों, ग्राम पंचायतों और गांव के कमजोर वर्गो को मजबूत बनाने के लिये आये दिन नये प्रयास भी होते रहते हैं। गांवों में स्वास्थ्य संबंधी बुनियादी जरूरतों को पूरा करने के लिये कुछ नये प्रावधान लाये गये है।

महिला सशक्तिकरण में पंचायतीराज की सबसे महत्वपूर्ण भूमिका है। ग्राम सभा से लेकर संसद तक महिलाओं की भागीदारी दिनोदिन बढ़ती जा रही है। अब स्थति यह है, कि पंचायतों में भागीदारी होने के साथ ही उनकी आत्म निर्भरता भी बढ़ी है तथा अनुसूचित जाति एवं जनजाति की महिलाओं में जागरूकता आयी है और वे छोटे–छोटे स्वसहायता समूहों के जरिये स्वरोजगार अपना रही हैं और विकास में अपना सहयोग दे रही हैं। इस तरह कहना गलत नही होगा कि पंचायतीराज से ही अनुसूचित जाति एवं जनजाति की महिलाओं के राजनीतिक एवं स" ाक्तिकरण अभियान को गति मिली है। जब पंचायतों में उनकी भागीदारी बढ़ी तभी वे हर दिशा में आगे निकल पायी है। अब तो संसद तक में उन्हें आरक्षण दिया जा रहा है।

केन्द्र सरकार लगातार पंचायतीराज संस्थाओं को जमीनी स्तर पर मजबूत बनाने के प्रयास में लगी है। ग्रामीण सरकार केन्द्रों की स्थापना ई–प्रशासन योजना आदि गांवों की तस्वीर बदलने लगे है। इससे जहां लोगों में जागरूकता आयी है, वही लोकतंत्र और मजबूत हो रहा है। पंचायतीराज के सुढ़ड़ होने से राजनीति में नई पीढ़ी का उदय भी हुआ है। सरकार की ओर से पंचायतीराज को और सुद्रड़ करने के लिए उठाये जा रहे नये कदम से लोगों में नया विश्वास जागा है। सबसे निचली पंचायती ग्राम सभा से लेकर संसद तक महिलाओं की भागीदारी बढ़ती जा रही है। अब स्थिति यह है कि पंचायतों में भागीदारी होने के साथ ही अनुसूचित जाति एवं जनजाति की महिलाओं की भागीदारी बढ़ी है। उनमें जागरूकता आयी है और वे छोटे–छोटे स्वसहायता समूहों के जरिए स्वरोजगार अपना रहीं है और विकास में अपना सहयोग दे रहीं है। इस तरह कहना गलत नही होगा कि पंचायत से ही महिलाओं के राजनीति और सशक्तिकरण अभियान को गति मिली है। जब पंचायत में उनकी भागीदारी बढ़ी तभी वे हर दिशा में आगे निकल पायी हैं। अब तो उन्हें संसद तक आरक्षण दिया जा रहा है।

लोकतंत्र को मजबूती प्रदान करने की दृष्टि से पंचायत राज संस्थाओं को भारतीय संविधान में स्वशासन की इकाई की अवधारणा का उल्लेख एक सही कदम है। किंतु ध्यान देने की बात यह है कि यह कार्य राजनीति के साथ–साथ आर्थिक भी है और इसकी व्याख्या होनी चाहिए। इस संदर्भ में ग्राम सभा को एक कृषि औद्योगिक समुदाय की संज्ञा दी जा सकती है। इसके क्षेत्र में आने वाले कार्यक्रमों के संचालन हेतु ग्रामीण महिलाओं के योगदान पर बल देना होगा। जी.बी.के. राव समिति की रिपोर्ट में उल्लेख किया गया है कि विकास कार्यो में गांव के लोगों का स्वेच्छिक सहयोग स्वावलबंन की दिशा में पहला कदम होगा। रिपोर्ट में उल्लेखित है कि तीसरी

पंचवर्षीय योजना के अंत तक सामुदायिक विकास कार्यक्रम में नगद वस्तुओं और सेवाओं के रूप में आमजन का योगदान लगभग 100 करोड़ रूपये के बराबर अनुमानित किया गया था, बाद की योजनाओं में इस कार्य पर कम बल दिया गया। ध्यान रहे कि राज्यों के पंचायत अधिनियमों में ऐसा प्रावधान है कि ग्राम सभा को ही इस जिम्मेदारी को निभाना है कि ग्रामीण विकास के किसी कार्यक्रम के श्रमदान हेतु लोगों को प्रेरित किया जाए। निःसंदेह इसके लिये पंचायतीराज संस्थाओं के स्तर पर एक गतिशील नेतृत्व की आवश्यकता होगी। सभी राज्यों की पंचायतीराज संस्थाओं की कार्यकारणी में महिलाओं को 33 प्रतिशत आरक्षण का प्रावधान है। कुछ राज्यों में महिलाओं हेतु 50 प्रतिशत आरक्षण का प्रावधान लागू है। केन्द्र सरकार ने भी 73 वे संविधान संशोधन अधिनियम 1992 में एक संशोधन द्वारा महिला हेतु 33 प्रतिशत से बढ़ाकर 50 प्रतिशत देने का निर्णय लिया है। यह अध्ययन का विषय है कि आरक्षण का सकारात्मक प्रभाव आम महिलाओं पर पढ़ रहा है या नही। यह ज्ञात होता है कि ग्राम सभा की बैठकों में पुरूषों की तुलना में आम महिलाओं की भागीदारी कम है। यह असमानता महिला सशक्तिकरण की दृष्टि से एक गलत संदेश देती है। आज महिलाओं द्वारा गठित स्वसहायता समूहों का व्यापक स्तर पर विकास हुआ है, किंतु यह अब तक साफ जाहिर नही होता है कि पंचायतीराज संस्थाओं से इन समूहों का संबंध बन पाया है या नही। यदि ग्राम सभा के स्तर पर इन समूहों की महिलाओं की उपस्थिति सुनिश्चित की जाये तो ग्राम सभा में अनुसूचित जाति एवं जनजाति की महिलाओं की भागीदारी बढ़ेगी। इसके अतिरिक्त अनुसूचित जाति एवं जनजाति की महिलाओं को स्वसहायता समूह बनाने की प्रेरणा मिलेगी और यह महिला सशक्तिकरण की दृष्टि से एक सराहनीय कदम होगा।

यह उल्लेखनीय है कि 2011 से केन्द्र सरकार का पंचायतीराज मंत्रालय कुछ नये बिन्दुओं पर विचार मंथन कर रहा है, जिससे पंचायतीराज प्रणाली को मजबूती प्रदान करने हेतु प्रस्तावित संविधान संशोधन विधेयक में शामिल किया जायेगा। इन बिन्दुओं में ग्राम सभा के सशक्तिकरण पर विशेष बल दिया गया है। इस दिशा में तीन बातों पर विचार हो रहा है। पहला बढ़े आकार की पंचायतों में वार्ड स्तर पर वार्ड सभा का भी प्रावधान रखा जाए, जिससे व्यापक रूप से मतदाताओं की भागीदारी होगी। ज्ञातत्य है कि पश्चिम बंगाल, केरल और राजस्थान के पंचायतीराज अधिनियम में वार्ड सभा का प्रावधान मौजूद है। दूसरा ग्राम पंचायत अपने क्रियाकलापों के लिये ग्राम सभा के प्रति उत्तरदायी होगी। तीसरा ग्राम सभा को नये अधिकार दिये जायेगे जो संसद द्वारा पारित पंचायत उपबंध अधिनियम 1996 में वर्णित होगा। इन अनुसूचित क्षेत्रों में वैसे क्षेत्र आते है जो भारतीय संविधान के अनुच्छेद 244 के खण्ड (1) में निहित है। इन संशोधन में भी क्षेत्रों की ग्राम सभाओं को वैसी शक्ति मिल जायेगी जो कार्यपालिका संबंधी विकास कार्यो के लिये होती है। यह संविधान द्वारा बाध्यकारी है और इस प्रावधान से ग्राम सभा की भूमिका बढ़ जायेगी। इस नये प्रावधान से 73 वे संविधान संशोधन में उल्लेखित पंचायतों के लिये स्वशासन की इकाई शब्द का मूल रूप 'ग्रामसभा' में परिलक्षित होगा।

संदर्भ सूची :–

1. मध्य प्रदेश पंचायत राज अधिनियम, 1993 के अनुसार
2. गुडे डब्ल्यू जे.एण्ड स्केट्स पी. 1960 ऐन इन्ट्रोडक्शन टू सोसल रिसर्च, ऐनिजल एण्ड सट्टन हाउस, (प्रा.लि.), नई दिल्ली पृ. 310
3. कुंवरसिंह तिलाश – ग्रामीण समाजशास्त्र, पृष्ठ 272.
4. मथुराप्रसाद दुबे – पंचायतीराज समिति प्रतिवेदन, 1972, पृष्ठ 32.
5. कुंवरसिंह तिलाश – ग्रामीण समाजशास्त्र, पृष्ठ 272.

ISSN : 2394-3580 Swadeshi Research Foundation Vol. – 6, No. - 7 May 2019
A Monthly Journal of Multidisciplinary
International Peer Refereed, Review, Indexing & Impact factor-4.2 Research Journal

सागर–दमोह क्षेत्र 1857 में

मनोज कुमार कुशवाहा
शोध छात्र, इतिहास विभाग, रानी दुर्गावती विश्वविद्यालय, जबलपुर

1857 का विद्रोह इतिहासकारों के बीच विवाद का विषय रहा है। कुछ इतिहासकार सिपाही विद्रोह, कुछ धर्मयुद्ध, कुछ राजाओं द्वारा खोई सत्ता प्राप्त करने, तथा कुछ इतिहासकार इसे प्रथम स्वतंत्रता संग्राम मानते हैं। वस्तुतः 1857 का विद्रोह सिपाही विद्रोह से शुरू होकर एक जनआंदोलन का रूप ले लिया। इस विद्रोह ने ब्रिटिश कंपनी को पहली बार सशक्त राजनीतिक–सैनिक चुनौती प्रस्तुत की। 1857 का विद्रोह सिपाहियों के असंतोश की उपज मात्र नहीं था। वस्तुतः वह कम्पनी के शासन के विरूद्ध जनता की संचित शिकायतों और विदेशी राज के प्रति नापसंदगी का परिणाम था। मध्यप्रदेश भी इससे अछूता नहीं रहा। जिसमें सागर–दमोह क्षेत्र ने इसमें विशेश योगदान दिया।

बुंदेलखण्ड के राजा छत्रसाल द्वारा पेशवा को सागर व दमोह के जिले प्रदान किए गए थे। लार्ड डेस्टिंग्ज ने पेशवा को पद से हटा दिया। पूना संधी के तहत ये जिले सन् 1817 में अंग्रेजी राज्य मिला लिये गये। किंतु मार्च 1818 तक भी यह क्षेत्र कम्पनी के वास्तविक नियंत्रण में नहीं आया। पेशवा के अधीन सागर प्रदेश के अधिकारी की विधवा विनायक राव द्वारा किये गए प्रतिरोध का दमन करने के पश्चात् ही अंग्रेज यहां अधिकार जमा सके। सागर एवं उसके अधिनस्त क्षेत्रों पर जनरल मार्शल ने अधिकार किया। मण्डला के किलेदार को किला न सौंपने का गुप्त आदेश अप्पा साहब ने दे दिया था। किलेदार ने प्रतिरोध किन्तु जनरल मार्सल ने अंततः उस पर कब्जा कर लिया।

सागर में स्वतंत्रता संग्राम :– सागर में किसी भी क्षण उपद्रव प्रारंभ होने के डर से ब्रिग्रेडियर सेज ने, यहां के पुराने किले की किलाबंदी करने का निश्चय किया। उस किले में रसद तथा अस्त्र–शस्त्र का पर्याप्त भंडारण किया जा सकता था तथा वही किला यूरोपियों व ईसाईयों को क्रांति की दशा में सुरक्षा प्रदान कर सकता था। सागर में तैनात बंगाल आर्मी की तृतीय रेजीमेंट ने केवलारी के अंग्रेजों के खिलाफ जुलाई 1857 में विद्रोह कर दिया। 31वीं और 42वीं वी.एन.आई के सैनिक भी उनसे मिल गए। अंग्रेज बिग्रेडियर सेज ने प्रतिरोध न करके किले में सुरक्षित रहना श्रेश्ठ माना। सागर में नेटिव इन्फेन्ट्री के सूबेदार शेख रमजान ने जुलाई में इस्लाम का झण्डा बुलंद किया। नगाड़े बजाकर जनता को विद्रोह के लिए ललकारा। केवलारी के सैनिकों के अतिरिक्त 31वीं बंगाल नेटिव आर्मी के कुछ सैनिकों ने उसका साथ दिया।

ह्यूरोज अपनी फौज के साथ 3 फरवरी 1958 को सागर पहुंचा। तब अंग्रेज बड़ी संख्या जिसमें 173 पुरूष, 57 स्त्रियां तथा 130 बच्चे किले में शरण लिए थे। अक्टूबर 1857 में रेहती दुर्ग पर क्रांतिकारियों ने कब्जा।

शाहगढ़ में स्वतंत्रता संग्राम :– अर्जुन सिंह के समय से ही शाहगढ़ रियासत में सन् 1942 बुंदेला विद्रोह की गतिविधियां प्रारंभ हो गई थी। बखत अली ने इस आशा के साथ कि अंग्रेज उसका खोया हुआ गढ़ाकोटा का क्षेत्र सिंधिया से दिलवा देंगे, उसने बुंदेला विद्रोह के प्रमुख नेता को पकड़वाकर अंग्रेजों के सुपुर्द करवा दिया। किंतु उसे निराश होना पड़ा। अतः गढ़ाकोटा को प्राप्त करने के लिए उसने बानपुर के राज मर्दन सिंह का समर्थन प्राप्त किया। दोनों की संयुक्त शक्ति ने चंदेरी और तालबेहट पर अधिकार कर लिया। इस विजय बखत अली के मनोबल को बढ़ा दिया। उसने 12वीं तथा 42वीं रेजीमेंट के विद्रोही सिपाहियों को अपने यहां नौकरी पर रखा। उसने बांदा के नवाब से सम्पर्क किया। सागर–दमोह क्षेत्र के अनेक जमीदारों, मालगुजारों एवं सरदारों से अंग्रेजों के विरूद्ध विद्रोह के लिए आमंत्रित किया। इस क्षेत्र के लगभग तीन सौ जागीरदार एवं जमीदार विद्रोह के लिए तैयार हो गए। इन सबके समर्थन से बखत अली का हौंसला बुलंद हो गया। उसने डिप्टी कमीश्नर गार्डन से गढ़ाकोटा इलाके की मांग की तथा मांग पूरा न होने पर अंग्रेजी शासन के विरूद्ध विद्रोह का झंडा उठा लिया।

बखत अली ने पंचमगढ़ थाने को 03 जुलाई सन् 1857 को 500 पैदल सिपाहियों से घेर लिया और आक्रमण कर दिया। इस आक्रमण में थाने के तीन बरकन्दाज घायल हुए तथा थाने का सवार हसन खॉं मारा गया। इसे जीतकर बखत अली ने अपने थाने की स्थापना की। आगामी कुछ दिनों में बखत अली और

उनके समर्थकों का कई स्थानों पर कब्जा हो गया। बानपुर के राजा ने खुरई के लम्बरदार और गणेशजू के साथ 07 जुलाई को खुरई थाने पर अधिकार कर लिया। अंग्रेज सैनिक टुकड़ी ने खुरई को विद्रोहियों से किसी प्रकार मुक्त कराया लेकिन विद्रोहियों ने खुरई का किला पुनः विद्रोहियों से छीन लिया। खुमान सिंह ने विनायका थाने पर 08 जुलाई 1857 को अधिकार कर लिया। बखत अली ने पाटन के ठाकुरों के सहयोग से 12 जुलाई को वहां पर कब्जा कर लिया और पाटन के ठाकुरों के जिम्मे कर दिया। फलस्वरूप विद्राहियों को पकड़ने एवं विनायका पर पुनः अधिकार करने के लिए लेफ्टिनेंट हेमिल्टन विनायका आ गया और यहां कब्जा कर लिया।

पाटन निवासी गुलाब सिंह ने बखत अली का साथ दिया था। ब्रिटिश सरकार ने उसे विद्रोही घोशित कर उस पर 200/– रू. का इनाम घोशित किया। 14 जुलाई सन् 1857 को बखत अली ने अपने सहयोगी क्रांतिकारियों के साथ गढ़ाकोटा पर आक्रमण किया। किंतु सफलता नहीं मिली। 22 जुलाई को बोधन दौआ ने नेतृत्व में पुनः आक्रमण कर गढ़ाकोटा पर अधिकार कर लिया गया। इसके पश्चात् विद्रोही रहली में जमा होने लगे तथा वे देवरी पर कब्जा करना चाहते थे। इनका नेतृत्व प्रमुख विद्रोही नेता दुर्जन गोंड कर रहा था। उनके दमन के लिए लेफ्निंट लॉसन को भेजा गया किंतु उसे सफलता नहीं मिली।

रहली में सादिक अली मुसीफ तथा केशव राम प्रतिष्ठित व्यक्ति थे। वे विद्रोहियों की सूचना उच्च अधिकारियों के पास भेजते थे। 14 सितम्बर के पत्र में लिखा गया है कि ''शाहगढ़ के राजा की सेना ने जब रहली पर अधिकार जमाया तबसे राजा ने चतुर दौआ को रहली का किलेदार बनाया। ब्रिटिश सेना के आने की खबर सुनकर चतुर दौआ और कुछ विद्राहियों को पकड़ लिया तथा बंदी बनाकर सरकार के सुपुर्द कर दिया।'' उसके पश्चात् बखत अली और मर्दन सिंह अंग्रेजी सेना को जबाव देने के लिए सौरई में एकत्रित हुए। बखत अली को सूचना मिली कि अंग्रेजी सेना इन्द्रपुरा की ओर आ रही है। बालमुकुंद के नेतृत्व में सेना इन्द्रपुरा के लिए रवाना हुई। दोनों सेनाओं का युद्ध हुआ। बखत अली की सेना पराजित हुई और वह भाग खड़ी हुई। बखत अली भागता हुआ देवरी (सागर) पहुंचा।

10 फरवरी 1858 को गढ़ाकोटा पर अंग्रेजों का कब्जा हो गया था। विद्रोहियों ने शाहगढ़ को अपने अधिकार कर लिया। मुडवारा से विद्रोहियों को खदेड़ते हुए ह्यूरोज आगे बढ़ता आ रहा था। शाहगढ़, बानपुर तथा राहतगढ़ पर अंग्रेजों का कब्जा हो गया। ह्यूरोज ने सागर के अन्य विद्रोही केंद्रों पर भी कब्जा कर लिया। अब बखत अली, मर्दन सिंह और अन्य नेताओं के सामने यही रास्ता था कि वे झांसी की रानी, नाना साहिब पेशवा, तात्याटोपे के साथ सहयोग करके अंग्रेजों से लोहा लें। अतः बखत अली, मर्दन सिंह और उनके साथी सागर छोड़कर तात्याटोपे के साथ शामिल होने के लिए रवाना हो गए। 28 अप्रैल 1858 को झांसी की रानी, तात्याटोपे, बखत अली तथा मर्दन सिंह की संयुक्त सेना कोंच पहुंची। कोंच की लड़ाई में इनकी संयुक्त सेना पराजित हुई। बखत अली एवं मदने सिंह ने असिस्टेंट सुपरिंटेंट के समक्ष आत्म समर्पण कर दिया।

निष्कर्ष :– इस प्रकार हम देखते हैं कि दमोह एवं सागर जिले 1857 के स्वतंत्रता संग्राम में पूर्णतः विद्रोही सेनाओं के अधिकार में थे। दमोह जिले के सभी लोधी शाहगढ़ के विद्रोहियों से मिल गए थे। वे अपनी बनाई बन्दूखों से लेस थे। इन जिलों में पुलिस के सिपाही या तो विद्रोह में शामिल हो गए थे या भाग गए थे। सैकड़ों मालगुजार जन–धन और भोजन से विद्रोहियों की सहायता कर रहे थे। अनेक दिनों तक यातायात ठप्प रहा। इस प्रकार 1857 के अगस्त माह में नर्मदा के उत्तर के लगभग सभी स्थान जबलपुर और मण्डला को छोड़कर विद्रोहियों के अधिकार में पहुंच गए थे। सागर व दमोह की जनता ने 1857 के स्वतंत्रता संग्राम में अनुकरणीय साहस का परिचय दिया था। सैनिक विद्रोह से

शुरू हुआ यह विद्रोह जन आंदालन बन गया।

सन्दर्भ ग्रंथ :–

1. मिश्र, द्वारका प्रसाद, ''म.प्र. में स्वतंत्रता आंदोलन का इतिहास'' ।
2. जैन, सुधा, ''जंग–ए–आजादी में बुंदेलखण्ड को देशी रियासतें''।
3. व्यास हंसा, ''म.प्र. में स्वतंत्रता संग्राम''।
4. नागौरी एस.एल., ''1857 के क्रांतिकारी''।
5. हीरालाल, ''म.प्र. का इतिहास''।
6. मिश्र, सुरेश तथा श्रीवास्तव, भगवान दास, ''म.प्र. के रणवाकुरे''।
7. उद्दे, अमरसिंह, ''म.प्र. में स्वतंत्रता आंदोलन''।
8. लुनिया, बी.एन., ''मध्य भारत में विद्रोही''।

ISSN : 2394-3580 Swadeshi Research Foundation Vol. – 6, No. - 7 May 2019
A Monthly Journal of Multidisciplinary
International Peer Refereed, Review, Indexing & Impact factor-4.2 Research Journal

संस्कृत शिक्षण में दृश्य–श्रव्य सहायक सामाग्रियों का प्रयोग

डॉ. रश्मि जैन
शिक्षाशास्त्र विभाग, डॉ. हरीसिंह गौर केन्द्रीय वि. वि. सागर (म.प्र.)
मनोज कुमार सिंह
(शोधछात्र), शिक्षाशास्त्र विभाग, डॉ. हरीसिंह गौर केन्द्रीय वि. वि. सागर (म.प्र.)

सारांश :– विविधता भरे इस वसुन्धरा पर भाषा भी विविध रूप से विद्यमान रही है। क्षेत्र की दृष्टि से वहॉं की भाषा भी महत्वपूर्ण रही है। इन्हीं भाषाओं में संस्कृत भाषा भी एक महत्वपूर्ण है। संस्कृत भाषा, भारत के लोगों की पूर्व में एक–दूसरे के वातों व विचारों के अभिव्यक्ति का माध्ययम रही है। परन्तु वर्तमान में अनेक कठिनाइयों के चलते यह भाषा संकठ से गुजर रही है। इनमें से शैक्षिक कठिनाइयों को दूर करने व संस्कृत भाषा को जनमानस तक पहुचानें के उद्देश्य से संस्कृत भाषा शिक्षण को सरल रूप देने में दृश्य–श्रव्य सहायक सामग्री महत्वपूर्ण साबित हो सकती है। जिसे इस शोध पत्र के माध्ययम संस्कृत भाषा के उत्थान में दृश्य–श्रव्य सामग्री के प्रयोग का अध्ययन किया गया है।

पृष्ठभूमि :– भाषा संप्रेषण का एक माध्ययम है। ''भाषा मानव के लिए एक अनिवार्य उपकरण माना जाता है। इसके अभाव में मानव जीवन का विकास एवं प्रगति अपूर्ण रहती है।'' भाषा के द्वारा व्यक्ति अपने विचारों को एक–दूसरे से अभिव्यक्त करता है। अभिव्यक्ति के रूप में संस्कृत भाषा पूर्व में महत्वपूर्ण माध्ययम रही है। यह भाषा प्राचीन भाषाओं में से एक है ''लोकमान्य बालगंगाधर तिलक के अनुसार ऋग्वेद के कुछ अंश 6000 ई0पू0 के है। कुछ अन्य पाश्चात्य तथा भारतीय विद्वानों के अनुसार ऋग्वेद का रचनाकाल 2500 ई0पू0 है। भारतीय समाज में धार्मिक एवं सामजिक दृष्टि से संस्कृत भाषा का अपना एक विशेष महत्व रहा है। प्रारम्भ में संस्कृत भाषा को न केवल राज्यश्रय प्राप्त था अपितु उसे सामाजिक मान्यता भी थी। वैदिक कालीन शिक्षण संस्थाओं जैसे गुरूकुल एवं आश्रमों में समाज के प्रबुद्ध वर्ग के लोग अपने बच्चों को विद्याध्ययन हेतु भेजते थे, जहां पर कि शिक्षा का माध्यम संस्कृत भाषा ही होती थी। इस प्रकार संस्कृत भाषा अपने विकासक्रम में अन्य भारतीय भाषाओं की जननी के रूप में जानी जाती है।

ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य में यदि देखा जाये तो हम पाते हैं कि, गुप्त काल तक संस्कृत भाषा भारतीय समाज में अपने चरमोत्कर्ष पर रही, परंतु बौद्ध धर्म के उदय के साथ ही एवं सम्राट अशोक की महान ऐतिहासिक कलिंग विजय ने उसके भ्रम को, मोह–माया को तोड़ दिया फलस्वरूप उसने बौद्ध धर्म स्वीकार किया। बौद्ध धर्म ने संस्कृत भाषा के स्थान पर तत्कालीन भारतीय समाज की जनभाषा पाली और प्राकृत को अपनाया और बौद्ध धर्म का प्रचार प्रसार देश विदेश में पाली व प्राकृत भाषाओं के माध्यम से हुआ, कालान्तर में मुगल आक्रमणों के दौरान व मुगल शासन की स्थापना के साथ ही संस्कृत भाषा का सार्वभौमिक स्वरूप समाप्त होने लगा और उसका स्थान लिया अरबी, फारसी एवं इन दोनों भाषाओं का सम्मिश्रण उर्दू के रूप में हुआ।

मुगल शासन के मध्यकाल में शाहजहां के शासनकाल में अंग्रेज लोग इंग्लैड से व्यापारी के रूप में भारत आए और इसी के साथ आए फ्रांसीसी, डच, पुर्तगली आदि। परन्तु भारतवर्ष के राजाओं की आपसी फूट, बैर, ईर्ष्या, वैमनश्यता का लाभ लेकर मुगल शासन के उत्तरार्द्ध तक भारतवर्ष में अपने को शासन के रूप में स्थापित कर चुके थे। 1857 की क्रांति के विफल होने के बाद अंग्रेज लोग संपूर्ण भारत के एकमात्र शासन हो गए। इसके साथ ही संस्कृत व अन्य प्राच्य हिन्दुस्तानी भाषाओं का विकास भी अवरूद्ध हो गया और आंग्ल भाषा को राज्यश्रय मिलने से वह पूर्ण रूप से विकसित हुई।

स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद और 26 जनवरी 1950 को भारतीय गणतंत्र द्वारा अपना एक संविधान निर्मित, व स्वीकृत करने के बाद पहली बार भारतवर्ष की चौदह भाषाओं को संवैधानिक दर्जा प्राप्त हुआ और इन चौदह भारतीय भाषाओं में से संस्कृत भी एक प्रमुख भाषा है। माध्यमिक स्तर से लेकर विश्वविद्यालयीन स्तर तक संस्कृत भाषा व्यवहारिक अर्थों में अपना स्थान नहीं बना पाई। छात्रों में संस्कृत भाषा अपने प्रति रूचि व आकर्षण विकसित नहीं कर पाई। जिसका प्रमुख कारण संभवतः भाषा संबंधी क्लिष्टता, कड़ी मेहनत और रोजगारोंन्मुखी न होना आदि रहे।

आवश्यकता एवं महत्व :– यद्यपि संस्कृत भाषा जैसा कि कहा जाता है, कि भारतीय भाषाओं की जननी है. संस्कृत भाषा भारतवर्ष के विकास के श्रेष्टतम स्तर की एकमात्र सशक्त गवाह है। जब विश्व के अल्प देश या तो जंगली/आदिम अवस्था में थे या विकासशील होने के मार्ग में प्रयासरत थे। संस्कृत भाषा के प्राचीनतम स्वरूप व महत्व को सांस्कृतिक, सामजिक, राजनीतिक, चिकित्सा, दर्शन धर्म आदि क्षेत्रों में स्वीकार किया गया है। आवश्यकता को लेकर प्रोफेसर हीरेन अपना मत अभिव्यक्त करते हुए लिखते हैं कि, ''संस्कृत साहित्य निर्विवाद रूप से उन उच्चकोटि के सु–संस्कृत लोगों की देन है जिन्हें हम विश्वासपूर्वक पूर्व के सुभिज्ञ व्यक्ति कह सकते हैं। इसका पद्यमय तथा वैज्ञानिक होना एक साथ चलता है'' इसी प्रकार संस्कृत भाषा के साहित्य के महत्व को उजागत करते हुए अमेरिकन प्रोफेसर डॉ. लिडविक स्टरन वैक लिखते हैं कि, ''संस्कृत साहित्य भारतीय संस्कृति का न केवल प्रतीक मात्र है अपितु यह तो समस्त संसार की एक निधि है।''

वर्तमान में संस्कृत को उसका उचित स्थान मिले इसके लिए समय–समय पर शासन की ओर से संगठन की ओर से, शैक्षिक संस्थाओं की ओर से सार्थक एवं आकर्षक प्राप्त प्रयास भी होते रहे हैं, इन्हीं में से एक है उज्जैन मध्यप्रदेश'' में आयोजित होने वाला कालिदास समारोह जो कि महान् कवि एवं साहित्यकार कालिदास की स्मृति में प्रतिवर्ष आयोजित होता है। इस समारोह की समस्त कार्यवाही, कार्यकर्ताओं, प्रबुद्ध वर्ग, विशेषज्ञ, आचार्यगण आदि की सहभागिता, शोधपत्र वाचन, नाट्य–प्रहसन का प्रदर्शन आदि सभी संस्कृत भाषा में ही होता है। महान कवि कालिदास की कृतियों के आधार पर नाट्य मंचन आदि सभी संस्कृत भाषा में ही होता है।

वर्तमान परिदृश्य में यह देखा गया है कि, संस्कृत के प्रति लोगों की रूचियों में कमी सी आ रही है। इस दृष्टि कोण को देखते हुवे भारतीय संस्कृति की पहचान व प्राचीन भाषा के संरक्षित रखने के लिए यह आवश्यक हो गया है कि, इसको अधिक से अधिक सरल व सुगम रूप से लोगों तक पहुचाया जाये जिससे व्यवहारिक रूप में सरलता से लोग सीख सके। इस दृष्टि से संस्कृत के शिक्षण में दृश्य–श्रव्य सहायक सामाग्रि काफी महत्व पूर्ण सावित हो सकती हैं।

संस्कृत शिक्षण :– संस्कृत भाषा के शिक्षण को रूचिकर, आकर्षक, सरल, प्रभावकारी, समयानुकूल एवं उपयोगी बनाने के लिए आधुनिक परिप्रेक्षय में दृश्य–श्रव्य साधनों का शिक्षण सामग्री का प्रयोग, अभ्यास, व्यवहारिक तौर पर लागू करने का प्रयास किया जाए क्योंकि छात्र अध्यापक केंद्रित शिक्षण की अपेक्षा मनोवैज्ञानिक तौर पर प्रभाव डालने वाले तौर तरीके आकर्षित करतें है। यह एक ऐसा उद्दीपक है, जो छात्रों की एक से अधिक ज्ञानेन्द्रियों को सक्रिय करता है। जिससे अधिगम को चिरस्मरणीय बनाने मे मदद करता है।

संस्कृत शिक्षक के उद्देश्य प्रत्येक स्तर पर भाषा विकास के संदर्भ में अलग होते हैं। इन उद्देश्यों की प्राप्ति संस्कृत शिक्षण करने वाले शिक्षक द्वारा सफलतम रूप में तभी संभव हो सकती है, जब वह आवश्यकतानुसार, समयानुसार, छात्रों की आयु, विकासकाल, रूचि व उसके मनोविज्ञान को समझाते हुए अपने अध्यापन कार्य में आकर्षक, व्यवहारिक एवं उपयोगी शिक्षा उपकरणों का उपयोग दृश्य–श्रव्य उपकरण के रूप में उचित रूप में करें। इसके लिए आवश्यक है कि, वह प्रत्येक प्रकार के दृश्य–श्रव्य उपकरण के आकार, प्रकार, स्वरूप एवं उपयोगिता से स्वयं परिचित हो, अनुभवी हो, दृश्य–श्रव्य उपकरणों के उपयोग के दौरान उत्पन्न होने वाली कठिनाइयों का निराकरण करने में सक्षम हो, तभी वास्तविक रूप से या सही अर्थो में उसका शिक्षण कार्य प्रभावशाली हो सकता है।

संस्कृत शिक्षण में दृश्य–श्रव्य सहायक सामाग्री :– संस्कृत शिक्षण में प्रमुख दृश्य–श्रव्य उपकरण का प्रयोग करके संस्कृत को सरल व सुगम बनाय जा सकता है–

श्यामपट :– यह कक्षा शिक्षण का सर्वाधिक प्राचीन, परम्परागत एवं उपयोगी शैक्षिक उपकरण है। यह काले, हरे व नीले रंग में होता है. प्रायः यह कक्षाओं में दीवालों में अलग से आकार देकर स्थायी रूप से बनाया जाता है। बड़ी कक्षाओं के लिए '6 X 3' का और छोटी कक्षाओं के लिए '4 X 2' या अन्य माप का होता है। श्यामपट पर सामान्यतः काली स्याही ब्लैक बोर्ड इंक का उपयोग होता है। कुछ विकसित विद्यालयों में ये श्यामपट कांच के भी होते हैं, जिन पर हरे या नीले रंग के कांच प्रयुक्त होते हैं और दीवाल में लकड़ी के फ्रेम के सहारे इनकों लगाया जाता है। ग्लासबोर्ड श्यामपट पर चाक की सहायता सफेद चाक मिट्टी का प्रयोग किया जाता है। इसके अलावा शिक्षक द्वारा कभी–कभी प्रसंग विशेष के संदर्भ में रंगीन चाक का उपयोग भी

किया जाता है, जो कि छात्रों के लिए आकर्षण का केन्द्र बिन्दु होता है।

श्यामपट में ही लकड़ी के स्टेन्ड पर लकड़ी के काले तख्ते को रखकर भी अध्यापन में प्रयोग किया जाता है. इस प्रकार के श्यामपट आवश्यकतानुसार कक्षा में किसी भी दिशा में रखकर इनका उपयोग किया जाता है। जिसका स्वरूप गत्यात्मक होता है, आसानी से इसको एक कक्ष से दूसरे कक्ष में स्थानंतरित भी किया जा सकता है।

श्यामपट के ही रूप में लपेट श्यामपट जिसे ''रोल–अप बार्ड'' भी कहा जाता है। ये अलग अलग माप के होते हैं– इसमें ऊपर शीर्ष स्थान पर माध्यभाग में टांगने के के लिये रस्सी का उपयोग होता है, इसके उपयोग से शिक्षक का कक्ष विषय में श्यामपट कार्य में लगने वाला समय बचाया जा सकता है। क्यों कि संस्कृत अध्यापक प्रकरण विशेष के संदर्भ में लपेट श्यामपट पर अपने घर से ही लेखन कर सकता है। इसके उपयोग से श्यामपट कार्य में व्यवस्थितपन, स्पष्टता व सुवाच्यता देखने मिलती है, आसानी से बिना किसी श्रम के इसको एक स्थान से दूसरे स्थान पर ले जाया जा सकता है।

चित्र (पिक्चर) :– एक अन्य आकर्षक, उपयोगी प्रभावपूर्ण शैक्षिक उपकरण दृश्य उपकरण के क्षेत्र में चित्र माना जाता है। संस्कृत का अध्यापक विशेष स्तर पर संस्कृत भाषा का अध्यापन करने के लिए प्रसंग विशेष के अनुसार चित्रों का भी प्रयोग करता है। चित्रों का प्रयोग करते समय संस्कृत अध्यापक को इस बात का ध्यान रखना होता है कि, वह संपूर्ण कक्षा के छात्रों के लिए दर्शनीय हो, आकर्षक हो, प्रभावपूर्ण हो और संभव हो सके तो प्रेरणास्पद भी हो। चित्र या चित्रों के निर्माण के समय उसमें प्रयुक्त होने वाले रंगो पर शिक्षक विशेष ध्यान दे क्योंकि छात्रों के व्यक्तित्व विकास पर रंगों का प्रभाव विशेष रूप से पड़ता है। चित्र सामान्यतः कार्डशीट पर बनाये जाते हैं। उसमें भी सफेद रंग की कार्डशीट अधिक उपयुक्त मानी जाती है क्योंकि, सभी रंग आसानी से उचित रूप में प्रयोग होते हैं। कार्डशीट के दोनों छोरों पर अर्थात् ऊपर व नीचे लकड़ी की एक–एक पतली पट्टी या गोल आकार का रूल उपयोग में लाया जाता है जो कि उसे लपेटने व सीधा रखने के काम में आता है। संस्कृत शिक्षण में अध्यापक के लिए यह एक अत्यंत सुविधाजनक दृश्य शैक्षिक उपकरण है, जिसकी सहायता से शिक्षण को प्रभावशाली बनाया जा सकता है।

पत्ते (प्लेइंग कार्ड्स) :– प्राथमिक व माध्यमिक स्तर विशेष पर संस्कृत अध्यापक व्याकरण शिक्षण के क्षेत्र में, काव्य शिक्षण के क्षेत्र में, श्लोक आदि को कंठस्थ करने की दृष्टि से अत्यांक्षरी के खेल माध्यम से, खेल विधि द्वारा पत्तों (प्लेइंग कार्ड्स) का उपयोग कर सकता है। इसमें शिक्षक पत्तों के आकार के कार्ड्स तैयार करेगा। प्रत्येक कार्ड पर प्रसंग विशेष के खण्ड, उपखण्ड आदि लिखेगा, जैसे संधि, के प्रकार, संधि विग्रह, संधि के उदाहरण, समास एवं उसके प्रकार उसके उदाहरण आदि। इस प्रकार ताश के पत्तों की भांति इसको तैयार कर छात्रों को छोटे–छोटे समूहों में विभाजित कर उन्हें खेलने के लिए शिक्षक प्रेरित करेगा। खेलने की शैली, तरीका अध्यापक द्वारा निश्चित किया जावेगा क्योंकि इसमें खेलने के माध्यम से सीखने की उद्देश्य निहित है। छात्र इस खेल के द्वारा सीखने में रूचि लेगा। यद्यपि यह अवकाश के क्षणों का सदुपयोग करने के लिए होगा, अतः इसको कक्षा शिक्षण में प्रोत्साहित करना उचित न होगा। इस दृश्य उपकरण का उपयोग शिक्षक द्वारा छात्रों की पिकनिक के दौरान अध्ययन संबंधी भ्रमण के दौरान यात्रा के क्षणों में आसानी से किया जा सकता है।

चार्ट :– यह दृश्य उपकरण का एक भाग है। यह अधिकार सफेद, गुलाबी, पीले रंग की कार्डशीट पर बनाये जाते हैं। संस्कृत शिक्षक इसका प्रयोग व्याकरण शिक्षण के क्षेत्र में विभिन्न प्रकारणों को लेकर उनकी परिभाषाओं एवं उनसे संबंधित उदाहरणों के संबंध में करते हैं। इस पर अध्यापक प्रायः बड़े आकार के अक्षरों का सहारा लेकर विभिन्न रंगों के प्रयोग द्वारा इसको तैयार करते हैं, ताकि शिक्षक के अध्यापन कार्य की ओर छात्र आकृष्ट होवें एवं सीखने की मात्रा में अपने अपकों योग्य सिद्ध कर सकें।

चलचित्र :– चलचित्र एक ऐसा दृश्य उपकरण है, जो कि, प्रसंगों को सजीव रूप में छात्रों के समक्ष प्रस्तुत करता है। इसमें चित्र 35 एम.एम के पर्दे पर प्रोजेक्टर के माध्यम से प्रस्तुत किये जाते हैं। इस उपकरण के दृश्य एवं श्रव्य का उचित सामंजस्य होता है। संस्कृत भाषा शिक्षण के क्षेत्र में कार्य कर रहे राष्ट्रीय स्तर के शैक्षिक संस्थान/परिषदें इस क्षेत्र में अधिक अच्छा, उपयोगी कार्य कर सकते हैं, जैसे एन.सी.ई.आर.टी, भाषा शिक्षण संस्थान आदि। इन संस्थानों के पास

ISSN : 2394-3580 Swadeshi Research Foundation Vol. – 6, No. - 7 May 2019
A Monthly Journal of Multidisciplinary
International Peer Refereed, Review, Indexing & Impact factor-4.2 Research Journal

विभिन्न स्तर के कक्षाओं विशेष के संदर्भ में आवश्यकतानुसार तैयार किए गए आड़ियों–विजुअल कैसेट्स होते हैं जो कि शिक्षण संस्थाओं को उनके द्वारा प्रस्तुत मांग के आधार पर प्रेषित किए जाते हैं। यद्यपि यह मंहगा दृश्य उपकरण है। यह पूर्ण रूप से विद्युत द्वारा संचालित होता है, परन्तु इसके माध्यम से दिया गया संस्कृत भाषा का ज्ञान छात्रों के लिये अधिक उपयोगी व हितकर होता है। इनसे शिक्षण व अधिगम में सरलता अनुभव होती है और स्मृति में पाठ्याशं लंबे समय तक उपस्थित रहने की संभावना रहती है।

इसके प्रयोग के दौरान संस्कृत शिक्षक को विद्युत संबंधी जानकारी होना उपयोगी होगा. इसके अलावा फिल्म प्रोजेक्टर का संचालन कुशल तरीके से करना भी अध्यापन के क्षेत्र में उसकी व्यवायिक कशुलता का द्योतक होगा।

चलचित्र के माध्यम से शिक्षण करने में शिक्षक को कक्ष की व्यवस्था पर विशेष ध्यान देना होगा. कक्ष को क्या आसानी से अंधेरे कक्ष (डार्क रूम) में परिवर्तित किया जा सकता है, कक्ष की विद्युत व्यवस्था कैसी है, कक्ष में पंखों की व्यवस्था है या नहीं। 35 एम.एम. के पर्दे से कक्ष के प्रथम पंक्ति के छात्रों की दूरी कितनी है, जो कि उनकी देखने की शक्ति को हानि न पहुंचा सके, पीछे बैठे छात्रों को पर्दे पर प्रस्तुत चित्र पाठ्यांश आदि ठीक से दृष्टिगोचर हो रहे हैं या नहीं आदि। यह सब संस्कृत अध्यापक के व्यवसायिक कुशलता से संबंधित है, जिस पर कि उसको ध्यान देना है।

स्लाइड प्रोजेक्टर :– शैक्षिक प्रोद्योगिकी के क्षेत्र में यह दूसरा दृश्य उपकरण है। यह एक छोटा सा प्रोजेक्टर होता है जिसमें सामने ओर एक शक्तिशाली लेंस होता है और लेंस के पास ही एक रोशनी देने वाला बल्ब होता है, इसके पीछे स्लाइड फंसाने के लिए खांचे होते हैं जो कि एक या दो होते हैं। प्रकरण विशेष से संबंधित शिक्षक द्वारा तैयार किए गए स्लाइडों का प्रदर्शन आसानी से शिक्षक द्वारा अपने कक्षा शिक्षण में किया जा सकता है। यह दृश्य उपकरण छोटा होने से इसे आसानी से कहीं भी ले जाया जा सकता है। यह दृश्य उपकरण छोटा होने से इसे आसानी से कहीं भी ले जाया जा सकता है। इसमें प्रयुक्त होने वाले स्लाइडस कांच के चौकोर आकार के छोटे–छोटे टुकड़े होते है, उनको पहले काला कर लिया जाता है, फिर उस पर पाठ्यांश के विभिन्न अंश या चित्र शिक्षक द्वारा लिखे व बनाये जाते हैं और प्रोजेक्टर के माध्यम से दिखलाये जाते हैं।

क्लोज सर्किट टी.व्ही. (सी.सी.टी.वी) :– दृश्य उपकरण के क्षेत्र में शैक्षिक प्रौद्योगिकी एक अन्य नया उपकरण है। इस उपकरण का उपयोग मंहगा होने के कारण बहुत कम शैक्षिक संस्थाओं में देखने को मिलता हैं। इसका उपयोग संस्कृत भाषा शिक्षण, पद्य शिक्षण, रचना शिक्षण, व्यापकरण अध्यापन, आदि के क्षेत्र में श्रेष्ठ एवं विशेष शिक्षकों के संस्कृत भाषा ज्ञान, प्रभावपूर्ण अध्यापन, उत्तम अभिव्यक्ति को एक साथ चार–पांच कक्षाओं के छात्रों को टी.व्ही. सेट के माध्यम से दिखलाया जा सकता है। इसमें एक कक्ष में कैमरा फिट कर दिया है जो कि संस्कृत शिक्षक की अध्यापन शैली, व्यवहार पर केन्द्रित होता है और अन्य कक्षों में रखे टी.वी. सेट इससे संबंधित कर दिए जाते हैं। इस प्रकार एक ही समय में लाभान्वित हो सकते हैं। इस दृश्य उपकरण का उपयोग शिक्षकों की अत्याधिक कम संख्या और छात्रों की अत्याधिक संख्या होने पर करना लाभप्रद हो सकता है।

ओव्हर हेड प्रोजेक्टर :– यह भी शैक्षिक प्रौद्योगिकी के क्षेत्र में सहायक शिक्षण सामग्री के रूप में प्रयुक्त होता है। यह एक चौकोर बक्से के आकार का होता है जिसके ऊपर सतह पर पुस्तक के मुद्रित अंश, चित्र या शिक्षक द्वारा तैयार किए गए चित्र, ग्राफ पाठ्यांश ट्रांसपेरेन्ट शीट पर उतार कर इसके माध्यम से प्रदर्शित किए जाते हैं, इसमें बाक्स के पृष्ठ भाग पर तकरीबन $1^{1/2}$ फुट की ऊंचाई का स्टेन्ड होता है जिसके अग्र भाग पर एक छोटा चौकोर डिब्बा होता है। डिब्बे के निचले भाग पर एक लैंस लगा होता है, जो कि नीचे रखे चित्रों, ग्राफ्स, पाठयांश या ट्रांसपेरेन्ट शीट पर तैयार किएग अशों को अपने में समेंट लेता है और फिर ऊपर के डिब्बे में सामने की ओर लगे लैंस के माध्यम से सामने दीवाल पर या पर्दे पर समेटे हुए अंश/चित्र को छोटे बड़े पैमाने पर प्रस्तुत करता है। यह चित्रों के लिए सीखने की दृष्टि से अत्यंत उपयुक्त यंत्र है। संस्कृत शिक्षण में व्याकरण शिक्षण, संस्कृत भाषा में छात्रों को शुद्ध अंश से परिचित कराने में, लबें, कठिन श्लोकों को पुस्तक के आधार पर प्रदर्शित करने में सहायक सिद्ध हो सकता है। यह उपकरण भी विद्युत द्वारा ही संचालित होता है। संस्कृत भाषा के अध्यापक को इससे संबंधित जानकारी रखना, उपयोग संबंधी प्रक्रिया व सावधानियों के बारे में जानना छात्र हित में

स्वयं के अध्यापन संबंधी कौशलों के संदर्भ मे अधिक उपयोगी होगा।

दूरदर्शन (टी.वी.) :– आज के प्रगतिशील गुण में अत्यंत ही लोकप्रिय, सर्वाधिक रूप से जनसाधारण तक पहुँचने वाला शैक्षिक प्रौद्योगिकी का दृश्य–श्रव्य उपकरण है। यह उपकरण शिक्षण संस्थाओं में शैक्षिक उद्देश्यों की पूर्ति करने छात्रों के व्यक्तित्व विकास को एक निश्चित व नई दिशा देने वाला सशक्त माध्यम है। इस शैक्षिक उपकरण का उपयोग भाषा संस्थान द्वारा निर्मित/रचित संस्कृत शिक्षण के विभिन्न सोपानों/विधाओं यथा गद्य शिक्षण, काव्य शिक्षण, रचना शिक्षण, व्याकरण शिक्षण, कक्षा शिक्षण में शिक्षक–छात्र संवाद भाषा में आदि में, एक उत्तम प्रकार की पाठयोजना तैयार कर विशेषज्ञ, अनुभवी शिक्षकों द्वारा किसी अच्छे स्तर के विद्यालय में इनका व्यवस्थित प्रदर्शन दूरदर्शन के माध्यम से शालेय समय में किया जा सकता है। दृश्य के साथ साथ श्रव्य उपकरण होने से इसके, प्रति छात्रों में उत्सुकता, रूचि बनी रहती है। इसके द्वारा प्राप्त ज्ञान, अनुभूति स्मृति पटल पर स्थायी तौर पर अंकित होती है। ग्रामीण क्षेत्रों में पंचायतों के माध्यम से शैक्षिक संस्थाओं को इसकी पूर्ति की जा सकती है।

प्रतिरूप (माडल्स) :– ये प्रायः ठोस आकार के होते हैं। विषय–विशेष में प्रसंग/प्रकरण विशेष अनुसार इनको तैयार किया जा सकता है। यह संस्कृत शिक्षण करने वाले अध्यापक की योग्यता एवं विवेक शक्ति पर निर्भर करेगा कि वह किस प्रकार के प्रतिरूप तैयार करे। उदारहण स्वरूप व्याकरण शिक्षण में विभिन्न प्रकरणों को लेकर संधि, समाज, प्रत्यय, उपसर्ग, क्रिया कारक रचना आदि के संबंध में एक विभिन्न टुकडों को समन्वित कर एक गेंद बनाई जा सकती है। प्रत्येक टुकड़े पर संधि/समास/प्रत्यय/उपसर्ग/क्रिया/कारक रचना आदि के बावत प्रकार, परिभाषा/उदाहरण आदि का उदाहण रहेगा और छात्रों से उन्हें अलग अलग करने, पुनः जोड़ने का काम करने कहा जावेगा। प्रत्येक क्रिया के साथ उसका लिखा अंश पढ़ना होगा और समग्र रूप से उसका वर्णन करना होगा। इस प्रकार प्रतिरूप निर्माण/रचना के माध्यम से खेल छात्रों को संस्कृत शिक्षण के विभिन्न सोपानों/विधाओं से जोंडने का प्रयास किया जावेगा।

इसी प्रकार अष्टकोणीय आकार की मोटे कागज/कार्डशीट की भी एक गेंद बनाकर इस पर भी ऊपर लिखित प्रक्रिया को व्याकरण शिक्षण के चौकोर भाग पर संस्कृत शिक्षण के विभिन्न प्रकरणों के खण्ड, उपखंडों का वर्णन कर छात्रों को खेल द्वारा सीखने एवं अध्ययन करने हेतु प्रेरित किया जा सकता है।

शब्द कोष (डिक्शनरी) :– भाषा शिक्षण के क्षेत्र में यह भी एक महत्वपूर्ण दृश्य उपकरण/साधन है। इसके माध्यम से संस्कृत शिक्षक, संस्कृत की पाठ्यपुस्तक में वर्णित कठिन शब्दों का अर्थ व उनकी व्याख्या आसानी से कर सकता है। संस्कृत भाषा का अध्यापक अपने छात्रों में यदि संस्कृत कोष को देखने संबंधी क्रिया को प्रोत्साहित करे और स्वंय के पर्यवेक्षण में छात्रों से कोष देखना, कठिन्य निवारण करने और उस आधार पर संस्कृत भाषा के छात्रों में गद्य, पद्य और व्याकरण आदि के शिक्षण में कोष का उपयोग नियमित रूप से करने के लिए प्रेरित किया जावे तो अप्रत्यक्ष रूप से उनमें स्वाध्याय की आदत विकसित होकर शोध प्रवृत्ति जागृत होगी और समस्या निदान के क्षेत्र में स्वयं निर्णय लेने की क्षमता विकसित होगी।

टेपरिकार्डर :– शैक्षिक प्रौद्योगिकी के क्षेत्र में यह एक छोटा सा एवं उपयोगी उपकरण है। टेपरिकार्डर में एजेक्ट का बटन दबाकर केसेट फसाने के लिए ढक्कन खोलना होता है और फिर केसिट फंसाकर ढक्कन को बन्द कर देना पड़ता है। इस कैसेट में विभिन्न प्रकार के कार्यक्रम (प्रोग्राम) तैयार कर भर दिए जाते हैं। कैसेट टेप रिकार्डर में फसाकर ऑन वाले बटन को दबाकर कैसेट को शुरू कर दिया जाता है। तैयार किये हुए कार्यक्रम (प्रोग्राम) की ध्वनि सुनाई पड़ता प्रारंभ हो जाता है। यह उपकरण विद्युत द्वारा संचालित होता है या कभी कभी बैटरी सेल द्वारा भी संचालित होता है।

शैक्षिक प्रौद्योगिकी के क्षेत्र का यह उपकरण संस्कृत शिक्षण में छात्रों की वाचन संबंधी अशुद्धियों को शुद्ध रूप में बदलने की दृष्टि से अत्यंत उपयोगी है। इसके अलावा संस्कृत भाषा में काव्य शिक्षण के क्षेत्र में श्लोकों को शुद्ध रूप में उच्चारित कर कंटस्थ करने के काम भी आता है। व्याकरण के क्षेत्र में भी किसी प्रकरण विशेष को सतत रूप से अभ्यास करने की दृष्टि से भी इसका उपयोग सार्थक रूप में किया जा सकता है।

रेडियो :– रेडियो एक परंपरागत एवं अत्यंत प्राचीन उपकरण है। यह भी श्रवण की दृष्टि से उपयोगी है। दूरदर्शन प्रारंभ होने के पूर्व तक जनसाधरण के बीच

अत्यधिक लोकप्रिय था। संस्कृति शिक्षण के क्षेत्र में रेडियों का उपयोग पाठ्यपुस्तक पर आधारित विभिन्न अध्ययों/प्रकरणों के संदर्भ मे रचनात्मक पाठ तैयार कर विद्यालय समय में इसके माध्यम से प्रसारण किये जा सकतें है। इसके प्रसारण के दौरान छात्रों के पास पाठ्यपुस्तकें उपलब्ध होना उपयोगी व आवश्यक होगा जिससे कि वे रेडियों द्वारा प्रसारित शैक्षिक कार्यक्रम का सीखने की दृष्टि से एवं स्मृति में धारण करने की दृष्टि से उपयोग कर सकेंगे और इस प्रकार ज्ञानात्मक विकास के उद्देश्य को प्राप्त कर सकें।

दूरभाष :– यह भी शैक्षिक प्रोद्योगिकी के क्षेत्र का एक उपकरण है। प्रायः इसका उपयोग शैक्षिक दृष्टि से अत्याधिक कम होता है। वर्तमान में जरूर छात्र–समूहों में परीक्षा के दिनों में महत्वपूर्ण प्रश्न (गैसिंग) पूछने, नोट्स कौन कौन से तैयार हुए आदि की जानकारी प्राप्त करने के काम आता है। परंतु बड़े पैमाने पर शैक्षिक दृष्टि से इसका उपयोग कम ही होता है।

संस्कृत शिक्षण करने वाला अध्यापक आदि चाहे और उसे सुविधा उपलब्ध हो व आर्थिक दृष्टि से अतिरिक्त रूप से भार स्वरूप न हो, तो वह दूरभाष का संस्कृत सीखने वाले छात्रों की कठिनाइयों का निवारण करने अवश्य कर सकता है।

लाउड स्पीकर :– यह एक जाना माना विद्युत श्रवण उपकरण है। इसके दो भाग होते हैं – (1) माइक – जिसके माध्यम से वक्ता अपनी आवाज/विचार दूर बैठे, फेले हुए श्रोताओं तक पहुंचाता है और (2) दूसरा भाग है चौगा। इसका संबंध माइक से रहता है और माइक पर बोलने वाले की आवाज को चोंगे के माध्यम से सुना जाता है। यह तकरीबन 25 फुट से अधिक दूर पर विरूद्ध दिशा में स्थापित किए जाते हैं, ताकि सभी लोग वक्ता की आवाज को स्पष्टता के साथ सुनने में समर्थ हो सकें। यह प्रायः बड़े–बड़े सम्मेलनों, कार्यक्रमों में ही प्रयुक्त किए जाते हैं.।

संस्कृत शिक्षण के क्षेत्र में आदि छात्र संख्या अधिक है और एक शिक्षक की आवाज स्पष्टताः सभी छात्रों तक नहीं पहुंच सकती, तो ऐसी अवस्था में संस्कृत शिक्षक छात्रों के हित में लाउड स्पीकर का उपयोग कर सकता है. छात्रों के लिए भी रूचिकर, आर्कषक व उपयोगी हो सकता है।

श्रवण यंत्र :– यह एक छोटा सा उपकरण होता है और बैटरी द्वारा संचालित होता है. बटन के आकार का एक छोटा सा उपकरण तार द्वारा बैटरी से जोड़ा जाकर कान में उसे बैठा लिया जाता है, जिसे आग्ल भाषा में ईयरफोन भी कहते हैं. इस उपकरण के द्वारा ऐसे छात्र लाभान्वित होते हैं. जिनकी शिक्षा प्राप्त करने में विशेष रूचि है, प्रतिभाशाली हैं. पंरतु श्रवण (सुनने) की दृष्टि से कमजोर व लाचार हैं कम सुनाई पड़ने के कारण सीखने में प्रति अरूचि निर्मित होती है, प्रगति अवरूद्ध होती है, व्यक्तित्व विकास प्रभावित होता है, ऐसे छात्रों को अग्रेंजी भाषा हीयरिंग इम्पेयर्ड कहते है।

निष्कर्ष :– दृश्य–श्रव्य उपकरणों की उपयोगिता का अवलोकन करने के बाद यह धारणा पुष्ट या बलवती होती है कि संस्कृत भाषा जैसी कठिन, दुःसाध्य भाषा के शिक्षण के अकेले शिक्षक केंद्रित शिक्षण से रूचिकर, प्रभावशाली नहीं बनाया जा सकता। इसके लिए आवश्यक है कि संस्कृत अध्यापक अपने अध्यापन को आकर्षक, रूचिकर, उपयोगी, सार्थक एवं व्यावहारिक बनाने के लिए पाठ्यपुस्तक के अलावा प्रसंग/प्रकरण विशेष के संदर्भ में छात्रों के लिए उपयोगी इस दृष्टिकोण से विभिन्न दृश्य–श्रव्य उपकरणों का प्रयोग में समयानुसार साथ साथ करता रहे जो कि उसकी व्यावसायिक विकास का सूचक होगी। इस रूप में संस्कृत भाषा के प्रति उसकी निष्ठा, अध्यापन और अधिगम के क्षेत्र में उसका श्रम व समर्पण एक सार्थक प्रयास होगा।

संदर्भ ग्रन्थ सूची :–

1. जैन, शुध्यात्म प्रकाश (2016). संस्कृत शिक्षण, आगरा : राखी प्रकाशन प्रा.लि.
2. मिश्र, डॉ प्रभाशंकर (1984). संस्कृत शिक्षण, चण्डीगढ़ : हरियाणा साहित्य अकादमी.
3. ऑप्टे,डी.जी. (2000). टीचिंग ऑफ संस्कृत. बॉम्बे : पदमा पॉब्लिकेशन.
4. शुक्ल, देवर्षि कुमार (2016). संस्कृत भाषा शिक्षण. आगरा : राखी प्रकाशन प्रा0 लि0.
5. भाटिया, डॉ. कैलाश (2001). आधुनिक भाषा शिक्षण. नई दिल्ली : तक्षशिला प्रकाशन.
6. अलतेकर, प्रो0 अनंत सदाशिव (2014). प्राचीन भारतीय शिक्षण पद्धति. वाराणसी : अनुराग प्रकाशन.

वाकांटक राजवंश एवं गुप्त राजवंश के साथ सम्बन्ध

प्रमिला डेहरिया
रिसर्च स्कॉलर, बरकतउल्ला विश्वविद्यालय, भोपाल (म.प्र.)

वाकांटक राजवंश का शासन मध्यप्रदेश के भू भाग तथा प्राचीन बरार तक विस्तृत था। इसका प्रथम शासक विन्ध्यशक्ति का नाम वायुपुराण तथा अजंता लेख से प्राप्त होता है। संभवतः विन्ध्य पर्वतीय भाग पर शासन करने के कारण यह राजवंश विंध्यशक्ति की पदवी से विभूषित हुआ। उसका उत्तराधिकारी प्रवरसेन था जिसके शासन काल में वकांटकों की प्रतिष्ठा और अधिक बढ़ गई थी। संभवतः प्रवरसेन ने चौथी शताब्दी के प्रथम चरण में पूर्वदक्षिण भारत, मालवा, गुजरात, काठियावाड पर अधिकार कर लिया था। ऐसा माना जाता है कि वाकाटक राजवंश एवं गुप्तवंश समकालिमक महाशक्ति थे। कई दृष्टियों से नागों व गुप्त वंश से इसका सम्बन्ध रहा होगा। बहुत समय तक इतिहासकार वाकांटकों द्वारा शासित क्षेत्र पर शकों, नागों या कुषाणों का अधिकार मानते रहें, किन्तु प्रवरसेन द्वितीय का एक अभिलेख प्राप्त होने पर प्रथक वाकाटक वंश का परिचय इतिहासकारों को हुआ। इस वंश के बारे में और भी अधिक अजन्ता की गुफा क्रमांक 15 में वत्सगत्स के वाकाटकों का एक अभिलेख का प्राप्त होना था। उसके उपरांत काशी प्रसाद जायसवाल ने इस वंश की ऐतिहासिकता पर प्रकाश डाला। इनके उपरांत अनेक इतिहासकारों ने इस वंश की अधिक जानकारी प्रस्तुत की।

ज्ञात अभिलेखों से स्पष्ट होता है कि विन्ध्यशक्ति नामक शासक वाकाटकों का संस्थापक था। इनका शासन (250 AD से 330AD) था। ऐसा माना जाता है कि प्रवरसेन ने नर्मदा के उत्तर में स्थित नागों की राजधानी पुरिका भोपाल के समीप भेलसा पर आक्रमण कर नागों को पराजित किया था। यह मत सर्वमान्य नहीं है कि उसने पश्चिमी शक क्षत्रपों को पराजित किया था। उसने अपने ज्येष्ठ पुत्र का विवाह पद्मावती के नाम शासक भगवान की पुत्री से किया था और नागों के साथ मित्रतापूर्ण सम्बन्ध स्थापित किए। विवाह के तुरन्त बाद गौतमी पुत्र का निधन होने से उसका पुत्र इन्द्रसेन प्रथम (330–350AD) पुरिका का शासक बना। दूसरी और काका सर्वसेन ने अकोला के निकट वत्सगुल्म (आधुनिक – वशीय) में वाकाटकों की द्वितीय शाखा की स्थापना की। यह माना जाता है कि रूद्रसेन प्रथम गुप्तकालीन सम्राट समुद्रगुप्त का समकालीन था। रूद्रसेन प्रथम का उत्तराधिकारी प्रथ्वीषेण प्रथम (350–400 AD) था, पृथ्वीसेन के पुत्र रूद्रसेन द्वितीय का विवाह गुप्त सम्राट चंद्रगुप्त विक्रमादित्य की पत्नी कुबेरनामा से उत्पन्न कन्या प्रभावती गुप्त से सम्पन्न हुआ था। रूद्रसेन द्वितीय सन (400–405AD) तक ही शासन कर पाया।

रूद्रसेन द्वितीय के दो पुत्र दिवाकर सेन एवं दामोदर सेन में से अपने अल्पवयस्क पुत्र दिवाकर सेन की संरक्षिका के रूप में प्रभावती गुप्त ने राज्य संभाला था।

प्रभावती प्रत्यक्ष या परोदा रूप से अपने पिता चंद्रगुप्त विक्रमादित्य के सहयोगार्थ शासन थलाने में समर्थ थी। दिवाकर सेन की मृत्यु के उपरासंत प्रभावती गुप्त ने दामोदरसेन की संरक्षिका बन कर उसको प्रवरसेन द्वितीय के नाम से गद्दी पर बैठा दिया।

प्रवरसेन द्वितीय के दानपात्रों, गुप्त का पूना ताम्रपत्र, प्रवरसेन द्वितीय की चमक प्रशस्ती, हरिषेण का अजन्ता गुहालेख से ज्ञात होता है कि मध्यप्रदेश के अधिकांश क्षेत्र में उनका राज्य था प्रवरसेन ने राजधानी प्रवरपुर आधुनिक (पवनार) बनाई वह 450AD तक शासन कर सका।

प्रवरसेन द्वितीय के पश्चात नरेन्द्रसेन (450AD) शासक बना। उसके राज्यकाल में नलवंशी शासकों ने वाकटकों के कई क्षेत्रों पर अधिकार कर लिया था। बालाघाट अभिलेख से पता चलता है कि नरेन्द्रसेन के पश्चात प्रथ्वीषेण द्वितीय (450AD470AD) शासक बना। नलों की प्रथ्वीषेण के हाथों पराजित होना पड़ा।

पांचवी सदी के अंतिम दशक में वाकाटकों की यह मूल शाखा उत्तराधिकारी विहीन होने के कारण वत्सगुल्म शाखा के शासक हरिषेण के अधिकार में चला गया। हरिषेण 476AD-500AD) का अभिलेख अजंता

से प्राप्त होता है जिसमें उसका अवन्ति प्रदेश पर अधिकार माना गया है। किन्तु यह कथन एकदम अविश्वसनीय है क्योंकि उस समय वह क्षेत्र गुप्तों और औलिकरों के स्वामित्व में था।

स्पष्ट है कि विदर्भ क्षेत्र में अतिप्रभावशाली वाकाटक वंश के राजाओं ने मध्यप्रदेश में प्रवेश कर अपनी सैनिक, राजनैतिक एवं सांस्कृतिक भूमिका अदा की थी। यह कहने में संकोच न होगा कि वाकाटकों और गुप्तों के सम्बन्धों की मजबूत कड़ी प्रभवती गुप्त थी वह जितने शासकों की संरक्षिका रही स्पष्टतः उसका राज्य एवं शासन चंद्रगुप्त द्वितीय विक्रमादित्य के पद चिन्हों पर चल रही थी। प्रत्यक्ष रूप से न सही परन्तु यह स्पष्ट है कि कई वर्षों तक वाकाटक शासक गुप्तों की अधीनता में उनकी नीतियों एवं सहयोग से शासन करते रहे।

अप्रत्यक्ष रूप से ही सही गुपतों की सत्ता वाकाटकों पर उनके स्वतंत्र राज्य की तरह न होकर सामंतों की भांति रही होगी क्योंकि गुप्त साम्राज्य में सामंती व्यवस्था अपने चर्मोत्कर्ष पर थी। गुप्तों को सामंती व्यवस्था के आधार पर भी अपना राज्य विस्तार करना उत्तम लगा गुप्तों के सामंतों में उच्चाकल्प (बघेलखण्ड) परिव्राजक बुन्देलखण्ड, मेकल के पाण्डुवंशी परमावर्ती के नाम मालवा के औल्कर, बाघ(धार) के शासक विदिशा के परवर्ती भाग आदि प्रमुख हैं।

उपर्युक्त सामंत पूर्णतः गुप्तों की आधीनता में थी। वाकाटकों द्वारा गुप्तों या नाग वंश के साथ वैवाहिक संबंध या युद्ध उनके आपसी संबंधों को स्पष्ट करते हैं। गुप्तों ने अपने शासन काल में प्रत्यक्ष और परोक्ष रूप से भात के अधिकांश भू–भाग पर सत्ता स्थापित की थी। संभवतः वाकाटक सामंत व्यवस्था संबंधी समझौतों के अनुसार गुप्तों की अधीनता में रहे होंगे।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. शर्मा, डॉ. राजकुमार, मध्यप्रदेश का इतिहास खण्ड – 1 प्राचीनकाल वैज्ञानिक तथा तकनीकी शब्दावली आयोग, मध्यप्रदेश हिन्दी ग्रंथ अकादमी, भोपाल
2. निगम, श्यामसुन्दर मालवा के इतिहास व संस्कृति के कतिपय पहलू पृष्ठ 12–15
3. Jain, k c madhya pradesh through the ages, p-255
4. गुप्त डॉ परमेश्वरी लाल गुप्त साम्राज्य, विश्वविद्यालय प्रकाशन चौक, वाराणसी
5. राय, उदयनारायण – गुप्त साम्राज्य और उनका लोक भारती प्रकाशन (इलाहाबाद, नई दिल्ली, पटना।)
6. उपाध्याय वासुदेव – गुप्त साम्राज्य का इतिहास खण्ड 1
7. त्रिपाठी डॉ. रमाशंकर – प्राचीन भारत का इतिहास मोतीलाल बनारसीदास पब्लिशर्स
8. गणेशन डॉ. आर भारतीय संग्रहालय एवं जनसंपर्क विश्वविद्यालय, प्रकाशन वाराणसी
9. सिंह डॉ. (सुश्री) शरद, प्राचीन, भारत का सामाजिक एवं सांस्कृतिक इतिहास

ISSN : 2394-3580 Swadeshi Research Foundation Vol. – 6, No. - 7 May 2019
A Monthly Journal of Multidisciplinary
International Peer Refereed, Review, Indexing & Impact factor-4.2 Research Journal

मैत्रेयी पुष्पा के साहित्य में नारी विमर्श

आकांक्षा चौरसिया
शोधार्थी, शोध केन्द्र–रानी दुर्गावती विश्वविद्यालय, जबलपुर

हिन्दी साहित्य जगत में मैत्रेयी पुष्पा का नाम बड़े आदर व सम्मान के साथ लिया जाता है। मैत्रेयी पुष्पा का सम्पूर्ण साहित्य नारी विषयक साहित्य है। मैत्रेयी पुष्पा एक सशक्त लेखिका के रूप में साहित्य जगत में अवतरित हुई।

मैत्रेयी पुष्पा एक आँधी की तरह हिन्दी कथा साहित्य में प्रविष्ट हुई, और साहित्य जगत में अपना अलग वर्चस्व स्थापित किया। मैत्रेयी पुष्पा ने अपने लेखन कार्य द्वारा साहित्य को एक नई दिशा प्रदान की व साहित्य में एक नवीन धारा का प्रवाह किया, जिसका प्रभाव समाज में दिखने लगा। परिणामस्वरूप लोगों के विचारों में धीरे–धीरे ही सही किन्तु परिवर्तन होने लगा।

स्त्रियों ने अपने अस्तित्व को बनाये रखने के लिये तथा अपनी पहचान को स्थापित करने के सभी संभव और असंभव दिशा व मोर्चो पर लड़ाई लड़ी। आंदोलन किये। जिसके कारण उन्होंने अपने जीवन में भोगे हुए यथार्थ को अपने साहित्य के माध्यम से प्रस्तुत करने का संकल्प लिया। जिससे कि वह अपने अस्तित्व को व्याख्यायित कर सकें। साहित्य जगत में सन् 1960 में स्त्री लेखन में अनेक महिला लेखिकाएँ उभर कर सामने आई, जिनमें से मैत्रेयी पुष्पा का नाम व पहचान सबसे अलग लेखिका के रूप में प्रतिस्थापित हुआ।

मैत्रेयी पुष्पा ने निडर होकर, भय त्याग कर, पूर्ण साहस के साथ अपनी कृतियों का निर्माण किया। मैत्रेयी पुष्पा सदैव से समाज की गलत मान्यताओं का विरोध करती आई। समाज की वह मान्यतायें जो स्त्री का विरोध करती है या जो स्त्री को इंसान न समझती हो, उन्होंने ऐसी ही कुप्रथाओं, कुरीतियों, रीति–रिवाजों, पाखण्डों, अंधविश्वासों का विरोध किया। यह विरोध उनकी रचनाओं में साफ रूप से स्पष्ट होता हैं। इसलिये वह मानती है कि ''सृर्जनात्मक अपेक्षाओं और दबावों को मद्देनजर रखकर श्लीलता और अश्लीलता की सीमा रेखा ? यह कैसी सीमा रेखा होगी और फिर वह किस तरह की रचनात्मकता के तहत आयेगी ? लेखक भी इन सीमा रेखाओं को माने तो समाज के लिये किस नयी दिशा का निर्माण करेगा ? सृजन दबावों और अपेक्षाओं की आधार भूमि पर नहीं होता। वह होता है, कसावटों, छटपटाहटों, दबावों के बर–अक्स।''1

मैत्रेयी पुष्पा का उन साहित्यकारों में विशिष्ट स्थान है, जिन्होंने स्त्री को केन्द्र मानकर तथा स्त्री को स्त्रीत्व का बोध कराकर अपना संपूर्ण साहित्य स्त्री को समर्पित किया हैं। मैत्रेयी पुष्पा ने अपने सृजन में 'नारी चेतना' को जागृत कर एक नई दिशा प्रदान की हैं। मैत्रेयी पुष्पा ने अपनी कृतियों में स्त्री जीवन की लगभग सभी समस्याओं को उजागर करने की कोशिश की हैं। जैसे दहेज प्रथा, बाल–विवाह, अनमेल विवाह, अंर्तजातीय विवाह, संबंध विच्छेद, वैधव्य समस्या, यौन उत्पीड़न, बलात्कार, दाम्पत्य जीवन की परेशानियाँ, बाँझपन, नंपुसकता, स्त्री के प्रति हीन भावना आदि।

मैत्रेयी पुष्पा के लेखन का वैशिष्ट यह है कि उन्होंने स्त्री के मन की सभी परतों को उखाड़कर भीतरी दरवाजों को खोल दिया है। स्त्री मन की उदासी, अलगाव, आस्था–अनास्था सभी पर लेखन कार्य करते हुए उसे सजीव रूप में चित्रित किया हैं। इसके साथ ही ग्रामीण–शहरी जीवन की घुटन भरी जिन्दगी राजनीतिक प्रभावों, यौन स्वंछन्दता, अहंकार, वासना, भावनाओं आदि को अपनी रचनाओं के माध्यम से व्यक्त किया हैं। स्त्री के सच्चे मन को प्रस्तुत करने की कोशिश की। सदियों से दबी नारी की जुबान को आवाज देने का प्रयास किया हैं।

मैत्रेयी पुष्पा जी ने स्त्री जाति पर होने वाले अत्याचारों के बहुरूपों का जो वर्णन अपनी रचनाओं में किया, वह वर्णन अपने आप में संपूर्ण व अद्वितीय हैं। मैत्रेयी पुष्पा के सम्पूर्ण साहित्य में एक ही स्वर की प्रधानता हैं तथा एक ही केन्द्र बिन्दु हैं। वो है स्त्री और स्त्री विषयक समस्याएँ, क्योंकि बचपन से लेकर अपने लेखन कार्य के आस–पास का जो वातावरण उन्होंने देखा व महसूस किया, उसका वैसा ही सजीव चित्रण उन्होंने अपनी रचनाओं के माध्यम से किया।

मैत्रेयी पुष्पा ने न केवल स्त्री शोषण की गाथाओं का वर्णन अपनी रचनाओं में किया है, अपितु स्त्री मुक्ति, स्त्री जागरूकता, स्त्री संघर्ष के सपनों के अक्स को भी प्रस्तुत किया हैं। इसके साथ है मैत्रेयी पुष्पा का कथा साहित्य अपने आप में अद्वितीय व अविस्मरणीय हैं। कथा साहित्य के विषय में कहा भी गया है कि ''महिलावादी चेतना का उभार आधुनिक बौद्धिक विमर्श से संभव हुआ हें। यह स्वाभाविक है कि बौद्धिक चेतना का पोषण कथा साहित्य के माध्यम से हुआ। इसी कारण हिन्दी महिला लेखन का आधार कथा साहित्य बना हैं। कथा साहित्य की परिवर्तनशीलता और महिला चिंतन का बदलता परिपेक्ष्य परस्पर गुथकर गतिमान हैं।''[2]

मैत्रेयी पुष्पा ने सदैव से स्त्री समानता तथा स्त्री अधिकारों की बात कहते हुए स्त्री मुक्ति की कामना की है। यह हर उस शक्स, उन गतिविधि, रीति–रिवाज का विरोध करती हैं, जो स्त्री जाति के विरुद्ध हैं। मैत्रेयी पुष्पा का सम्पूर्ण कृतित्व स्त्री जाति को समर्पित हैं। मैत्रेयी पुष्पा अपने नाम के पूर्ण अनुरूप हैं। धीरेन्द्र वर्मा के अनुसार ''मैत्रेयी याने ज्ञान का भंडार है। याज्ञवलब्य ऋषि की पत्नी का नाम मैत्रेयी था, जो अपने पति से कोई संपदा नहीं माँगती। केवल ज्ञान एवं विवेक का वरदान माँगती है। ऐसा उनके नाम का संदर्भ हैं।''[3]

हिन्दी कथा साहित्य नयी पीढ़ी में ईमानदार, सज्जन, संवेदनशील लेखिका के रूप में मैत्रेयी पुष्पा उभरकर सामने आई हैं। इन्होंने स्त्री से संबंधित अनेक रचनाओं की रचना की हैं, जिसमें स्त्री जीवन की सच्चाईयों को अत्यंत विश्वसनीय ढंग से प्रस्तुत किया गया हैं। इसकी कथाओं के पात्रों के आपसी संबंध, उनके चरित्र, दुख–दर्द, आशा–निराशा, भाव–विचार पाठकों को अत्यन्त विश्वसनीय लगते हैं। ''मानवीय सच्चाईयों की विश्वसनीयता तथा मार्मिक पहचान के लिये जो गहरी जीवनाशक्ति जरूरी हैं। जीवन के प्रति आस्था जरूरी है। क्षुद्र और साधारण की महत्ता के विवेक के लिये जीवन यथार्थ की जो समझ जरूरी हैं। अपनी सीमाओं में मैत्रेयी से अपनी कृतियों में यह दी हैं। इसमें संदेह नहीं है।''[4]

नारी सशक्तीकरण, नारी विषयक या स्त्री विमर्श व स्त्री संबंधी भावनाओं, पीड़ाओं, वेदनाओं आदि से संबंधी समस्याओं को अपनी कलम से आवाज देने वाली सशक्त लेखिका मैत्रेयी पुष्पा जिन्होंने अपने निजी अनुभवों व संघर्षमयी जीवन से प्रेरित होकर साहित्य का सृजन किया। इसके साथ ही इन्होंने स्त्री जीवन की नाना प्रकार की समस्याओं को आंतरिक द्वन्द, संघर्ष, अत्याचार, घुटन व पीड़ा को विश्लेषित कर साहित्य के माध्यम से चित्रित करने का कठिन कार्य किया है। अतः मैत्रेयी पुष्पा स्त्री लेखन साहित्य के क्षेत्र में सशक्त लेखिका के रूप में अवतरित हुई है।

संदर्भ ग्रन्थ सूची :–

1. डॉ. शोभा यशवन्ते, मैत्रेयी पुष्पा के कथा साहित्य में नारी जीवन, पृ.सं. 36
2. डॉ. ओमप्रकाश शर्मा, समकालीन महिला लेखन, पृ. सं. 177
3. धीरेन्द्र वर्मा, आधुनिक हिन्दी शब्द कोश ज्ञान मंडल प्रकाशन वाराणसी, पृ.सं. 200
4. डॉ. शोभा यशवन्ते, मैत्रेयी पुष्पा के कथा साहित्य में नारी जीवन, पृ.सं. 53

ISSN : 2394-3580 Swadeshi Research Foundation Vol. – 6, No. - 7 May 2019
A Monthly Journal of Multidisciplinary
International Peer Refereed, Review, Indexing & Impact factor-4.2 Research Journal

भील समाज में महिलाओं की स्थिति

मनीष पांडेय
विषय–समाजशास्त्र, देवी अहिल्या विश्वविद्यालय, इन्दौर

भील समाज पुरुष प्रधान समाज है। पितृ सत्तात्मक एवं पितृ वंशीय समाज है। संपत्ति एवं सत्ता का हस्तांतरण पिता से पुत्र को होता है, यही कारण है कि विवाह के पश्चात् लड़की अपने पति के घर पर निवास करती है। किसी भी समाज में स्त्रियों की स्थिति का आकलन किसी भी ग्राफ से नहीं हो सकता, अपितु वह महिलाओं के प्रति पुरुषों के दृष्टिकोण से आंकी जाती है।

परिवार में महिलाओं का महत्व उनकी पारिवारिक गतिविधियां, दायित्व एवं समाज द्वारा उनका मूल्यांकन किस प्रकार किया जाना है, इस बात पर निर्भर करता है कि समाज में महिलाओं ने कितनी उन्नति एवं प्रगति की है। **एक विद्वान ने** कहा है कि 'आप मूझे आपके देश में महिलाओं की स्थिती बताएं,मैं आपको बता दूंगा कि वह समाज व देश कितना प्रगतिशील है।'

इस संदर्भ में यह एक विचारणीय प्रश्न है कि भील महिलाओं की स्थिति कैसी है? क्या वह अपने परिवेश में उत्पीड़ित है अथवा नहीं? यदि हां तो भील समाज में महिलाएँ भील पुरुषों द्वारा किस प्रकार के हथकंडों का उत्पीड़न के लिए इस्तेमाल करते हैं? उत्पीड़न की स्थिति कैसी है? उसका स्वरूप क्या है? यह विचारणीय प्रश्न है।

भील समाज का सूक्ष्म अध्ययन इस बात का प्रमाण है कि भील महिलाओं को अनेक प्रकार की स्वतंत्रता प्राप्त हैं। जैसे विधवा पुनर्विवाह, वैवाहिक जीवन सुखमय ना होने पर दूसरे विवाह की सामाजिक मान्यता भील समाज में स्त्रियों की स्वतंत्रता का परिचायक है। आवाजाही, सजने–धजने, नाचने–गाने आदि की स्वतंत्रता भी भील समाज में देखने को मिलती है। विवाह पूर्व यौन संबंधों में एक ओर खुलापन है, तो दूसरी ओर पकड़े जाने पर समाज द्वारा अत्यंत कठोर सजा दी जाती है।

ऐसे ही स्वेच्छा से विवाह की स्वतंत्रता भी भील समाज में होती है। इन प्रभाव को देखने पर महसूस होता है कि भील महिलाओं की स्थिति अन्य ग्रामीण एवं सभ्य समाज की महिलाओं की स्थिति से अच्छी है एवं इन समाजों को भी भील समाज से सीख लेना चाहिए।

वहीं दूसरी ओर भील समाज में महिलाओं की दयनीय स्थिति का अंदाज/अनुमान इस बात से लगाया जा सकता है कि इनके साथ हुए हर जुर्म, अपराध, दुर्घटनाओं, उत्पीड़न आदि का समाधान भील समाज पैसे लेकर कर देता है। जैसे किसी वस्तु की टूट–फूट पर भरपाई की जाती है। इस प्रकार भील समाज में सामाजिक संबंधों में भी क्षतिपूर्ति का सिद्धांत लागू होता है। एक तरफ विधवा पुनर्विवाह की स्वतंत्रता है और दूसरी तरफ विधवा महिला को अशुभ माना जाता है।

भील पुरुष अपनी महिला को जहां सजने–संवरने की स्वतंत्रता देता है, वहीं थोड़ी–सी शंका मात्र से ही उसकी जान लेने पर हावी हो जाता है। इस प्रकार दो विपरीत मान्यताएं समान्तर दिशाओं में चल रही हैं। भील पुरुष परिवार के कामकाजों से संबंधित छोटी–छोटी गलतियों पर पत्नी को बुरी तरह दंडित करना अपना अधिकार समझता है। निःसंतान होने पर उसे वान्टी बोलकर एवं अशुभ मान कर अपमानित किया जाता है।

वधु मुल्य के प्रचलन के कारण भील समाज में वधू को कई बार खरीदी हुई वस्तु समझकर उसके साथ दासी जैसा व्यवहार किया जाता है। क्योंकि वधू मूल्य में वर पक्ष कन्या को पत्नी बनाने के लिए कन्या के माता–पिता की मांग को पूरा करता है। जिसका आशय वर पक्ष के द्वारा वधू पक्ष को दी गई राशि से है। भील समाज में महिला विशेष को समाज द्वारा डाकन घोषित कर दिया जाता है, जिससे महिला का गांव व समाज में रहना मुश्किल हो जाता है तथा ऐसी महिलाओं को कई बार समाज द्वारा दंडित करते हुए उसकी जान तक ले ली जाती है। भीलो में में दो पत्नियों को रखने की प्रथा है, जो भील महिलाओं के लिए प्रताड़ना का कारण है।

अधिकतर अशिक्षा, अज्ञानता, गरीबी आदि कारणों से न तो यह जागरूक रहती है और ना ही इनके परिवार। भील महिलाएं खुद अपने स्वास्थ्य के प्रति लापरवाह रहती है, जिसका मुख्य कारण कार्य का अत्यधिक बोझ है। जिसे वह बोझ न मानकर अपना कर्तव्य समझती है और जानवरों जैसी दिन–रात कार्य में लगी रहती है।

आदिवासी महिलाओं के स्वास्थ्य की स्थिति निम्न होने के कई कारण है :– जैसे अत्यधिक कार्य का बोझ एवं साफ–सफाई के अभाव के साथ–साथ भील महिलाएं अपनी व्यक्तिगत स्वच्छता के प्रति उदासीन रहती है। न तो ठीक प्रकार से दांतों की सफाई करना, ना ही नियमित रूप से नहाना जिससे उनके स्वास्थ्य पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है एवं अनेक व्याधियां जन्म लेती है तथा कई प्रकार के संक्रमणों से ग्रसित हो जाती हैं। आदिवासी महिलाओं की दयनीय–पोषण की स्थिति और अत्यधिक श्रम के कारण उनका पोषण स्तर प्रसव उपरांत बहुत ही घट जाता है।

भील महिलाएँ घर के पारिवारिक कार्यों के साथ–साथ आर्थिक कार्यों में भी बराबरी की हिस्सेदारी होती हैं। भील पुरुषों के मद्य पान एवं आलस्य वाले स्वभाव के कारण कई जगहों पर महिलाएँ ही परिवार की संपूर्ण आर्थिक जिम्मेदारियों का निर्वहन करती हैं। सामान्य रूप से भील महिलाएँ संतानोत्पत्ति, उनका पालन–पोषण, कृषि कार्य, पालतु जानवरों की देखभाल, प्रकृति प्रदत्त वस्तुओं से सृजनात्मक निर्माण तथा उनसे एवं कृषि मजदूरी से आर्थिक उपार्जन कर आदि इनके प्रमुख कार्य है। किंतु इसके बावजूद भी वे अपने उपार्जित धन का अपनी इच्छा से उपयोग नहीं कर सकती, क्योंकि उसकी मेहनत की कमाई पति या घर के मुखिया के पास रहती है। अधिकांश जगहों पर सीधे भू–स्वामी द्वारा मजदूरी पति या सास को ही दी जाती है। याने वह अपनी मेहनत की कमाई को देख भी नहीं पाती है।

उसके कठिन परिश्रम की कमाई को भील पुरुष मद्यपान में खर्च कर देते हैं। पत्नी के आनाकानी या मना करने पर जबरदस्ती से उसके धन को छीन लिया जाता है और उसे उत्पीड़ित किया जाता है। इस प्रकार भील जनजाति में महिला उत्पीड़न का प्रमुख कारण पुरुषों की मद्य पान की आदत का परिणाम है।

भीलों में प्रायः यह धारणा रहती है कि पत्नी का जितना शोषण किया जाए वह भागने में असमर्थ रहेगी। क्योंकि वह जानती है कि उसके पिता द्वारा लिया गया वधू मूल्य वर पक्ष को वापस लौटाना पड़ेगा। जिसकी हैसियत उसके पिता की नहीं होती है। इस कारणवश वह अपने पति के अत्याचारों को सहती रहती है। भील लड़कियों को पैतृक संपत्ति पर कोई अधिकार नहीं होता है। इतना ही नहीं वह केवल अपने पति के शोषण का शिकार नहीं होती, अपितु अन्य लोगों द्वारा भी उसका उत्पीड़न किया जाता है। जो उनका कार्यक्षेत्र है भील महिलाएँ मजदूरी के लिए दूसरों के खेतों या निर्माण कार्यों पर काम करने जाती है। वहां भी भू–स्वामी एवं कार्यरत साथी उसका दैहिक शोषण करने से बाज नहीं आते। साथ ही साथ भू–स्वामी उसे कम मजदूरी देकर पुरुषों की तुलना में अधिक घंटो तक कार्य करवा कर उसका आर्थिक शोषण भी करते हैं।

इस संदर्भ में प्रायः सभी समाजों में यह धारणा फैली है कि आदिवासी समाज महिलाओं के लिए अप्रतिबंधित समाज है। जिसकी खुली हुई सामाजिक व्यवस्था महिलाओं को स्वतंत्रता देती हैं। महिलाओं पर किसी भी प्रकार का अंकुश नहीं है और यह समस्त स्वतंत्रता का उपभोग करती है। आए दिन अखबारों में आदिवासी महिलाओं के साथ उत्पीड़न की खबरें प्रकाशित होती है, जैसे 2 अप्रैल, 2016 नई दुनिया, टांडा थाना अंतर्गत भूतिया के पटेलपुरा में रोटी देर से बनाने पर रेमसिंह ने पत्नी रायबाबाई को एक पत्थर उठाकर छाती पर दिया जिससे उसकी मौत, 1 अप्रैल, 2012 बदनावर नई दुनिया, विधवा से छः दिनों तक सामूहिक दुष्कृत्य, 2 जनवरी 2013 धामनोद नई दुनिया धामनोद में गैगरेप, 25 फरवरी 2013 धामनोद नई दुनिया नाबालिग से दुष्कर्म, 14 फरवरी 2014 बदनावर नई दुनिया चरित्र शंका पर पत्नि की नाक काटी। 2 अप्रैल 2016 बाग नई दुनिया घर का काम न करने पर पत्नी की हत्या की। 4 अक्टूबर 2016 धार दैनिक भास्कर डाकन बताकर महिला एवं पति पर हमला। इन खबरों से सहज ही उनकी स्वतंत्रता पर प्रश्नचिन्ह लग जाता है। इस प्रकार की घटनाएं भील महिलाओं की स्वतंत्रता का खुला उपहास करती है। तब वे सुख का भोग करती है या उत्पीड़न का सामना करती है। इस तथ्य पर विचार करना एक गंभीर मुद्दा है।

ध्यान से आत्मदर्शन

डॉ. लालजीत पचौरी
पी.एच.डी. योग, सहा. प्राध्यापक, रविन्द्रनाथ टैगौर वि.वि., जिला–रायसेन (म.प्र.)

ध्यान श्रेष्ठ जीवन एवं उच्च जीवन की कला है। या यू कहे कि यह एक तकनीक या विज्ञान है। जीवन में इसका उचित उपयोग किया जाये तब वह साधक मानव से महामानव या देवमानव या अवतार होकर समस्त सम्पदाओं के यथा आध्यात्मिक सम्पदा पारलौकिक सम्पदा की प्राप्ति तो सहज है ही बल्कि आत्मसत्ता का ईश्वरीय सत्ता से साक्षात्कार या आत्मिक ऊर्जा का ब्रम्हाण्डिय ऊर्जा से तादात्म है। एकाग्रता ध्यान की पहली सीढ़ी आवश्यक है, लेकिन उस दिव्य चेतना अर्थात ईश्वरीय चेतना की अनुभूति करना या स्वयं के सवरूप का विसर्जन कर परमात्म उपलब्धि इसकी अन्तिम परिधि है। ध्यान कोई कर्मकाण्ड नहीं है जो किसी आसन विशेष पर बैठकर आँख बंद करके अल्प समय में ही पूर्ण हो जाता हो, मंत्र जाप भी ध्यान नहीं है। ईष्ठ चिंतन भी ध्यान नहीं है। और स्वयं के व्यक्तित्व की पूर्ण जानकारी प्राप्त कर लनो भी ध्यान नहीं है। क्योंकि ये गहन विचारों द्वारा प्राप्त किये गये जीवन के अंश है। बल्कि मन विचारों का समूह है। मन में सभी प्रकार के अच्छे बुरे विचार निवास करते है और उचित वातावरण प्राप्त कर प्रकट हो जाते है और मनुष्य इन्हीं विचारों के अनुरूप कार्यों में प्रवृत्त होता है। यदि उत्पन्न विचारों पर नियंत्रण कर लिया जायेतब मनो निग्रह आसान हो जाता है। विचारों पर नियंत्रण करने की कला में साधक सहज और शांत भाव से बैठकर विचारों के प्रवाह पर साक्षी भाव से अर्थात् दृष्ठा भाव से अवलोकन करता रहे। और यह अनुभव करे कि यह विचार मन के है। मेरे नहीं है, मैं इनसे पृथक हूँ मैं आत्मा हूँ मेरा इनसे कोई सम्बंध नहीं है। ये विचार तो पूर्व जन्मों में किये ये कर्मो या इसी जन्म में किये गये कर्मों के परिणाम से संबंधित है। मेरा इन से कोईसंबंध नहीं है। इस प्रकार प्रवाहित विचार स्वयं ही शांत हो जाते है। विचारों के प्रवाह में अवरोध तो नहीं, तो वह अचेतन मन में पूर्ण प्रविष्ट होकर कुछ उपद्रव्य करेंगे। इनके सतत प्रवाह के अन्तिम अवस्था से मन निर्मल हो जायेगा और इस क्रिया के पश्चात् आप स्वयं मन के स्वामी बन जाओगे और आप मन को अपनी इच्छा अनुसार चला सकोगे। यह साधन की सर्वोच्च अवस्था है। इसके निरन्तर अभ्यास से किसी प्रकार के कुतशित विचार यदि उठते है तो वे सभी पूर्व जन्मों से संग्रहित है। इन्हें भी रोकना घबराना नहीं है और ना ही इनके अनुसार चलना है, इन संग्रहित विचारों से कई प्रकार से शारीरिक उत्तेजनाएं भी निहित है अर्थात् (क्रोध, द्रव्य, प्रतिशोध, वासना की भावना आदि है। ऐसे स्थिति यदि उत्पन्न भी होती है तब आप शरीर को नियंत्रण में रखिये, इनका वेग स्वयं ही लुप्त हो जायेगा और इनके रेचन से मन हल्का हो जायेगा। क्योंकि जब अचेतन की ग्रथियाँ प्रसफिटित (खुलती है) तब ऐसा होना स्वभाविक है।

मन के स्पंधन का मुख्य कारण उसकी प्राण शक्ति है। और प्राण आत्मा का अभिन्न तत्व है। जिसके बिना न आत्म चेतना का जागृत होता है और न स्पंधन अर्थात् समस्त शारीरिक क्रिया का आधार उसकी प्राण शक्ति है जो ब्रम्हाण्ड में सर्वत्र व्याप्त है। प्राण की स्थिरता मन को निश्छल बना देती है और मन की निश्चलता आत्म चिंतन में समाहित हो जाती है। साधक को यह सब घटित जब होता है जब वह अपने जीवन को योग को समर्पित कर देता है। प्राण योग का प्रधान है। क्योंकि जीवन प्राण के बिना मात्र कल्पना है। ब्रह्माण्ड में सर्वत्र व्याप्त प्राण उसी प्राण को साधक योकग की विशेष विधि के द्वारा ग्रहण कर या रेचन कर निरोध करता है। तभी आत्मिक ऊर्जा में वृद्धि होती है। साथ ही संग्रह किये हुए प्रा से ही शरीर के समस्त अंग प्रतिअंग अपना कार्य सूचारू रूप से करते है। और जब हम प्राण का निरोध करते है।

उस समय शरीर एवं मन की समस्त क्रियाएँ शांत हो जाती ह। गहरे श्वास प्रश्वास से मन में स्थिरता का उदय होता है। वही साधना में विवेक का प्रयोग कर नित्य अनित्य सत और असत्य के भेद को समझकर नित्य और सत को ग्रहण करना और असत और अनित्य का परित्याग करना यह साधक के विवेक जागृति पर ही सम्भव होता है, साथ ही मन पर नियंत्रण होता है। या यू कहे कि मन केन्द्रीत होता है। ध्यान में सतसंग का एक अपना महत्व है। क्योंकि मन पर

नियंत्रण के लिए प्रकृति के गुणों में साधना के माध्यम से परिवर्तन लाना आवश्यक है। यदि हम प्रकृति के गुणों में परिवर्तन न ला सके तब मन पर नियंत्रण सम्भव न होगा। इसलिए मन पर नियंत्रण के लिए श्रेष्ठ उपाय के रूप में शास्त्रों में सतसंग का महत्व एवं जीवन में उसकी आवश्यता बताई गयी है। इसमें आवश्यक नहीं है कि व्यक्ति योग्यताधारी हो या योग के यम नियम, तीर्थों में जाना, यज्ञ इत्यादि करना, वेद मंत्रों का पाठ करना, त्याग और तप को अपनाना, सतसंग एक ऐसा प्रभावशाली गुण है जो गुरू के निकट स्थित होकर ज्ञानार्जन करने से उस गुरू की ऊर्जा का प्रवेश साधक के अन्दर अपना स्थान बनाता है। जिससे साधक के मानसिक विकार दूर होकर सूचिता का भाव स्थिर होता है। यदि साधक को सतसंग किसी कारणवश उपलब्ध न हो सके तब अन्तः करण की सूचिता के लिए दूसरे माध्यम के रूप में निरंतर स्वाध्याय करते रहना चाहिये। स्वाध्याय और सत्संग का एक ही मूल मंत्र है। साधक के अन्दर सत और असत का विवेक जागृत करना इसकी प्राप्ति से साधक की अगली साधना सहज और सुगम हो जाती है। क्योंकि विषयों की वासना ज्यों ज्यों छुटती जाती है त्यों त्यों आत्म प्रकाश प्रकाशित होता है। और साधक आत्म स्थित होकर आत्मा को ही अपना स्वरूप जान लेने पर मन का नाश हो जाता है। इसी का नाम आत्म उपलब्धि है। ऐसी स्थिति के प्राप्त होने पर मन का अवशान हो जाता है। अर्थात् मन आत्मलीन हो जाता है। इसके पश्चात् मन पर किसी भी प्रकार के नियंत्रण की आवश्यकता नहीं रह जाती क्योंकि इच्छा रहित जीवन ही या वासना का नाश हो जाना ही मनो निगृह कहलाता है।

यदि मानव का मन इस स्थति में पहुंचने के पश्चात् पनः सांसारिक भोगों या इच्छा अर्थात् कामना युक्त होने लगता है तब ऐसा मन खण्डित हो जाता है और वह फिर बस में नहीं रहता, क्योंकि सांसारिक भोग में लिप्त मन ही अविध्या युक्त है और इसी से शरीर इन्द्रिय तथा अनात्म पदार्थों के प्रति में और मेरा भाव जागृत रहता है। और यही जीव के कष्ट का कारण है। इस माया से जीव को स्वयं की साधना से या आत्म अनुभूति से दूर कर ही मन को नियंत्रित किया जा सकता है। क्योंकि मनोनिगृह में विभिन्न बाधाएँ उत्पन्न होती है और सबसे प्रमुख बाधा दृढ़ इच्छा शक्ति का अभाव है। दूसरी बाधा के रूप में अनिव्यता प्रमाद मन की चंचलता इसलिए मन को संयमित करने के लिए सनह–सनह योगांगो का प्रयोग करना चाहिये। देखा यह जाता है कि मानव राग, द्वेष, घर्णा, क्रोध, ईर्ष्या की स्थिति में यदि साधना करता है तो वह अभ्यास उसके लिए हानिकारक सिद्व होता है क्योंकि अनैतिक जीवन यापन करने वालों के द्वारा किया गया मन पर नियंत्रण जीवन के प्रवाह को विचलित कर देता है। और दूसरों को कष्ट पहुंचाने की नियत से भी मन का नियंत्रण गलत परिणाम लाने वाला ही होता है। लोक में प्रचलित प्रथा में देखा जाता है कि और सुना भी जाता है कि मन को शांत करने के लिए नशीली वस्तुओं का सेन अधिक प्रभाव शाली है।

मेरा ऐसा मानना है कि अव्यवस्थित, असंयमित, असन्तुलित जीवन जीने वाले अभ्यासी लौकिक नशीली वस्तुओं के प्रयोग से पृथक रहे। ओर साधना में अपने आप को संलग्न करे। साथ ही मन को मारने के लिए अनावश्यक शरीर को तृणा देने वाले या अर्थहीन चिंतन करने वाले या जिनके हृदयम ईर्ष्या, साम्प्रदायिक द्वेष ऐसे अपराध की स्थिति निर्मित यदि हो तो वह आत्मसाधना अभ्यास न करे, क्योंकि सहज, सरल और स्वभाविक चित्त की अवस्था के साधक ही मन को मन के द्वारा ही नियंत्रित करते है। कृतम प्रणालियों से वह नियत्रित नहीं होता। प्रायः देखा जाता है कि शरीर को यातनाएँ लोग इस बहाने से देते है कि हम मन को नियंत्रित कर रहे हैं। खाली पेट रहना दैनिक उपयोगी पदार्थों का त्याग करना, सर्दी गर्मी सहन करना मेरा मानना यह है कि इत्यादि से मन नियंत्रित होने का कोई सम्बंध नहीं है। मन तो एक ऐसा यंत्र है जो बहुत ही नाजुक है। इसे तो सावधानी पूर्ण व्यवहार, उपासना की विभिन्न विधियों, सार्वभौमिक संस्कारों को ग्रहण कर अपने मार्ग पर लाना होगा क्योंकि इसकी उत्पत्ति कर्मो के लिए हुई है। और यह कर्मो का अधिष्ठाता है। शरीर इन्द्रिय इसके अधीन है। यह ऐसा अधिकार प्राप्त सबल शासक है कि वर्षों क्रिया गया श्रेष्ठ श्रम एक क्षण में यह व्यर्थ कर देता है। इसको पहचाने से पता चलता है कि यह तुम्हारे जन्मों जन्म का साक्षी है। इसे तुम अल्प समय में शांत या नाश नहीं कर सकते। मन की कोई अवस्था नहीं होती ना ही यह प्रारंभिक अवस्था वाला न ही युवा अवस्था वाला एवं न ही यह वृद्धि होता है। इसकी सेवानिवृत्ति की कोई आयु नहीं है, जीव के जीवन के साथ ये अपना नया रूप लेकर प्रकट होता है। इसलिए इसे जीवन साथी सहयोगी एवं संगी भी कहते है इसलिए इसके साथ अन्याय करने पर यह प्रतिशोध अवश्य लेता है। इसलिए सोच समझकर

विवेकयुक्त होकर इससे काम लेना चाहिये। मन के तीन स्तर है चेतन, अवचेतन, अतिचेतन, यह इसकी क्रियाशीलता के अनुसार विभाजित किये गये है क्योंकि चेतन स्तर का मनुष्य अपनी सम्पूर्ण क्रियाएँ अहम भाव से करता है। और वही अहम भाव से लुप्त मनुष्य अवचेतन मन का स्वामी होता है तथा अतिचेतन में भी अहंकार की भावना विलुप्त हो जाती है। इस स्थिति में पहुंच कर व्यक्ति समाधिस्त हो जाता है। इसी अवस्था को मन का परिस्कार व आत्मा का सामिप्य होना बताया गया है। मनोनिग्रह का सम्बंध केवल चेतन स्वर से ही है, सर्वप्रथम इसी पर नियंत्रण किया जाता है।

इसके पश्चात् अवचेतन पर नियंत्रण शास्त्रों में क्रियात्मक मन की चार अवस्था का वर्णन मिलता है मन, बुद्धि अहंकार चित्त और इन चारों के समूह को शास्त्रों में अन्तःकरण कहा गया है। मन अन्तःकरण की उस वृत्ति को कहते है जो किसी विषय के पक्ष और विपक्ष में संकल्प और विकल्प करती है, वही निश्चय करने वाली वृत्ति को बुद्धि के नाम से जाना जाता है और स्मरण करने वाले वृत्ति को चित्त कहा जाता है अहम भाव से मुक्त वृत्ति को अहंकार कहते है। वाह सम्वेदना के साथ ये चारों ही वृत्तियाँ संलग्न रहती है। इन वृत्तियों की गुणों के आधार पर मन पाँच अवस्थाओं में प्रकाशित होता है। क्षिप्त, मूढ़, विक्षिप्त, एकाग्र और निरूद्ध। क्षिप्त अवस्था में अन्य चार अवस्थाएँ बिखर जाती है क्योंकि इसमें कर्म वासना की प्रबलता होती है और सुख दुःख की भावना अत्यधिक पायी जाती है वह मूढ़ अवस्था तमोगुण से युक्त है जिसमें मन की भावना दूसरों का अनिष्ठ करने के लिए प्रबल होती है। मन की तृतीय विक्षिप्त अवस्था उसको केन्द्र की ओर ले जाने का प्रयत्न करती है। और चतुर्थ अवस्था में मन निरूध होने के लिए यत्न करता है। और यह निरूद्ध अवस्था एकाग्रता से मुक्त होने से साधक को समाधी में ले जाती है।

यह अवस्था ही योग साधना में स्वीकार है क्योंकि मनोनिगृह का यही प्रयोजन है। मन की इसी एकाग्र अवस्था में जीवन के उन्नती का व्यापार होता है। प्रत्येक विषय का साधक अपने अपने विषयों में महारथ हासिल करता है। वही मन की पंचम अवस्था निरूद्ध नाम से जानी जाती है। इस अवस्था में मन की समस्त क्रियाएँ शांत हो जाती है जिससे वह अति चेतन में प्रवेश कर आत्म अनुभूति प्राप्त करता है यही इस विषय की अन्तिम अवस्था है। इसे ही जीवन का परम लक्ष्य या त्रुटि अवस्था तथा यही समाधी की अवस्था है। क्योंकि चेतना का इस अवस्था में पूर्ण प्रकाश होता है और इस प्रकाश की प्राप्ति कर मानव माहामानव बन जाता है और वह समस्त सिद्धयाँ का स्वामी और मनो कामना से युक्त होकर उसका समस्त रूपान्तरण हो जाता है।

यही मानव के ज्ञान के चरम अवस्था है और इसे प्राप्त कर वह समस्त कर्म बन्धनों से मुक्त हो जाता है क्योंकि कर्म का आधार मन ही है औरजब मन अमन हो जाता है। यही मनुष्य का पूर्णतः का बोध है। मन और संसार एक दूसरे से भिन्न नहीं है। इन दोनों को ही एक दूसरे का पर्याय भी कह कहते है क्योंकि मन के बिना संसार हो नहीं सकता और संसर के बिना मन का कोई महत्व नहीं है यह विचित्रता देखीये कि मन के शांत होने पर संसार लुप्त हो जाता है। इसी को प्रलय की अवस्था कहा जाता है। श्रृष्ठी का एक ही आदी स्त्रोत है आर वह चेतन्य ब्रम्ह है, जब वह अपनी शांत अवस्था में रहता है तब उसे आत्मा ईश्वर ब्रम्ह आदि शब्दों से सम्बोधित किया जाता है किन्तु जब उससे मन की उत्पत्ति होती है तब उसमें हलचल प्रारंभ हो जाती है और इस परिवर्तन या हलचल का नाम ही संसार है। इसलिए संसार और ब्रम्ह भिन्न नहीं है और ब्रम्ह शांती का नाम हलचल संसार का नाम और जिसका मूल कारण मन है। हम यह भी समझ सकते है कि समुद्र की शांत अवस्था का नाम ब्रम्ह है और उसकी लहरे संसार। जबकि लहरे और समुद्र भिन्न नहीं है और ना ही उन्हें एक दूसरे से अलग किया जा सकता है। सृष्ठी का एक ऐसा ही स्वरूप है शरीर में आत्मा का भी वही स्वरूप है जो सृष्ठी में ब्रम्ह का है। शरीर में चेतन शक्ति जब शांत अवस्था में रहती है। तब उसे आत्मा नाम से जाना जाता है।

कुछ विद्वानों का यह मत है कि चेतन आत्मा के सहयोग के कारण ही जल प्रकृति मे हलचल उत्पन्न होती है जिससे वह विभिन्न रूप धारण कर श्रेष्ठ रचना करती है किन्तु यही अद्वेत वादियों का ऐसा मत है कि प्रकृति उस चेतन की हलचल से उत्पन्न उसी का रूप है। यह उससे भिन्न नहीं है। अर्थात् सृष्ठी रचना एवं इसकी कार्य प्रणाली इसी हलचल का परिणाम है इसका मूल कारण मन है और मन के कारण ही हलचल उत्पन्न होती है। और मन को शांत होने पर समस्त हलचल समाप्त होकर केवल आत्मा ही शेष रहती है। इसी आत्म अनुभव, आत्म ज्ञान, आत्म साक्षात्कार, और

यही जीवन का उत्कर्ष है और इसे ध्यान के माध्यम से प्राप्त कर जीवन के परम लक्ष्य को प्राप्त किया जा सकता है। पर यह योग मार्ग के अनुगमन से ही सम्भव है।

संदर्भ ग्रंथ :–

(1) श्रीमद् भगवत गीता – गीताप्रेस
(2) हठ प्रदीपिका – डॉ. चमनलाल गोतम
(3) धारणा ध्यान समाधि – आचार्य श्रीराम शर्मा
(4) योग महाविज्ञान – डॉ. कमाख्या कुमार

SRF

ISSN : 2394-3580 Swadeshi Research Foundation Vol. – 6, No. - 7 May 2019
A Monthly Journal of Multidisciplinary
International Peer Refereed, Review, Indexing & Impact factor-4.2 Research Journal

'मन की बात' और सांस्कृतिक चेतना का संचार

सुरेश कुमार वर्मा
शोधार्थी, जनसंचार विभाग, (महात्मा गांधी अंतर्राष्ट्रीय हिंदी विश्वविद्यालय, वर्धा महाराष्ट्र)

प्रस्तावना :— विजयादशमी की शुभकामनाओं, व 'स्वयं की बुराइयों पर विजय' के सन्देश से प्रारम्भ माननीय प्रधानमंत्री के रेडियो प्रसारण 'मन की बात' ने पिछले पांच वर्षों में भारतीय संस्कृति के विविध पक्षों को लोगों तक पहुँचाया है। इस कार्यक्रम ने सरल भाषा में ओजस्वी शब्दों, रोचक कथाओं, कविताओं, महापुरुषों के कथनों, सूक्तियों को चर्चा व दृष्टांत के माध्यम से देश के ग्रामीण और शहरी बाल से किशोर, युवा से वृद्ध के मस्तिष्क को छुआ है, मन की संवेदनशीलता को बढ़ाया है। ,क शताब्दी से रेडियो ने विश्वभर में सांस्कृतिक सरंक्षण, विकास, प्रचार, व प्रसार में अपनी अहम भूमिका अदा की। जनसंचार के शक्तिशाली साधन के रूप में इसकी छवि उभरी जिसमें दुनिया के हर कोने में बैठे व्यक्ति तक इसकी पहुँच का सामर्थ है। रेडियो ने शिक्षा, कला, सूचना, संगीत, सामाजिक व आर्थिक विकास तथा ग्रामीण समुदाय में परिवर्तन के क्षेत्र में विश्व को हमेशा उम्मीद दी है। रेडियो ने शक्तिशाली सोपान का कार्य ही नहीं किया, बल्कि विकासशील देशों में सबसे सक्षम, सरल, सस्ते व सर्वसुलभ जनसंचार के माध्यम के रूप में भी खुद को स्थापित किया है। मन की बात कार्यक्रम ने लोगों में सांस्कृतिक चेतना जागरण का काम किया है।

भारत में रेडियो स्टेशन से प्रसारण का इतिहास 92 वर्ष पुराना है जब पहला रेडियो प्रसारण 23 जुलाई 1927 को मुम्बई से प्रारंभ हुआ। भारतीय रेडियो प्रसारण उद्योग की गणना भाषा, व्यापकता, सामाजिक व सांस्कृतिक विविधता के आधार पर विश्व के अग्रणी संगठनों में की जाती है। भारत में आकाशवाणी 479 रेडियो स्टेशनों से 99 प्रतिशत जनसँख्या तक अपनी पहुँच रखता है। आकाशवाणी के उन कार्यक्रमों की चर्चा इस शोध पत्र में की गयी है जिन्होंने सांस्कृतिक धरोहर को संरक्षित किया है। परम्परागत व शास्त्रीय संगीत, औपचारिक व अनौपचारिक शिक्षा, व स्वस्थ मनोरंजन को ग्रामीण जीवन तक पहुँचाने में विकासात्मक संचार को नयी दिशा प्रदान की है। रेडियो किसी भी राष्ट्र का 'सांस्कृतिक राजदूत' होता है जो न केवल अतीत की यादों को स्वयं में संजोता है, बल्कि अपने महापुरुषों, संतों, कवियों, कलाकारों, नेताओं को याद कर उनके दर्शन से भी श्रोताओं को अवगत कराता है ताकि हम उनके दशा, मार्ग व पद चिन्हों का अनुसरण कर सकें। आज भी महानगरीय जनता अपनी यात्रा का समय रेडियो के साथ ही बिताना पसंद करती है।

आकाशवाणी विश्व के विशालतम प्रसारण संगठनों में से है। यह 471 रेडियो स्टेशनों के द्वारा भारत के 92 प्रतिशत भूभाग तक पहुंच और 125 करोड़ देशवासियों तक पहुँचने का बेहतर संसाधन है। खास बात यह है कि 23 भाषाओं तथा 176 बोलियों में अपनी बात कहने में इसका कोई प्रतियोगी नहीं है। अपने विदेश प्रसारण सेवा में यह 11 भारतीय भाषाओं में 16

विदेशी भाषाओं में 100 देशों तक अपनी पहुँच रखता है। ऑल इंडिया रेडियो की सांख्यिकी पर यदि दृष्टि डालें तो 20 सितम्बर, 2018 तक आकाशवाणी के 471 केंद्र हैं जिनमें से 134 बड़े स्टेशन, 86 स्थानीय रेडियो स्टेशन, 5 सामुदायिक रेडियो स्टेशन व 246 रिले स्टेशन शामिल हैं। आकाशवाणी के 667 ट्रांसमीटर हैं जिनमें से 139 मीडियम वेव, 48 शॉर्टवेव तथा 480 FM ट्रांसमीटर हैं। यही नहीं आकाशवाणी अपने 37 कैप्टिव अर्थ स्टेशन, 228 स्टूडियो, 47 क्षेत्रीय समाचार यूनिट, 39 डीटीच चैनल तथा 17 लाइव स्ट्रीमिंग चौनेल से भी दिन रात अथक सेवा, प्रदान करता है। इसकी पहुँच 82 प्रतिशत जनता तक है।

शोध प्रश्न :–

- क्या मन की बात कार्यक्रम सांस्कृतिक संचार में सक्षम है?
- क्या जन भागीदारी लाने में संस्कृति कोई भूमिका अदा कर सकती है?
- क्या सांस्कृतिक चेतना से सामाजिक विकास की गति बढाई जा सकती है?

मन की बात :– 3 अक्तूबर, 2014, रविवार प्रातः 11 बजे आकाशवाणी जब पहली बार 'मन की बात' रेडियो कार्यक्रम का प्रसारण हुआ तब किसी ने यह कल्पना भी नहीं की थी कि प्रधानमंत्री अपने व्यस्त समय में से हर महीने इस कार्यक्रम को 50वीं कड़ी के पार तक ले जाएंगे। इसे न केवल ऑल इंडिया रेडियो के सभी चैनल से प्रसारित किया गया बल्कि दूरदर्शन ने भी इसे अपने सभी चैनेलों से रिले किया। रेडियो जगत के लि, ये न केवल सम्मान की बात थी, बल्कि इस कार्यक्रम ने रेडियो की शक्ति को भी स्थापित करने की दिशा में अनूठा योगदान दिया। 27 जनवरी, 2015 को अमेरिका के राष्ट्रपति बराक ओबामा ने भी इस कार्यक्रम में भाग लिया जिसकी चर्चा पूरे विश्व में हुई। 'मन की बात' कार्यक्रम में प्रधानमंत्री मोदीजी द्वारा कई बार किसी विषय पर विशेष श्रोता समूह को संबोधित किया जाता है और इसकी पहुँच दूर दराज के किसानों, विद्यार्थियों, सैनिकों, खिलाडियों तक होती है। मन की बात अकेला रेडियो का ही कार्यक्रम नहीं है। इसे अनेक माध्यमों से सुना जाता है जैसे टीवी पर, सेटलाइट रेडियो, मोबाइल रेडियो, एप, इन्टरनेट तथा वेबसाइट पर। नयी तकनीकी से श्रोताओं की संख्या में अनेक प्रकार से वृद्धि हुई। 125 करोड़ की आबादी वाले इस देश की 68 प्रतिशत जनता आज भी गावों में निवास करती है। उन तक पहुँचने की शक्ति जिस माध्यम में है, वो है– रेडियो। इस पूरी व्यवस्था का प्रयोग मन की बात के बहुभाषी प्रसारण में भी किया जा रहा है। मन की बात के हर अंक में सामाजिक, आर्थिक, सांस्कृतिक, शैक्षिक व नैतिक विषयों को प्रमुखता के साथ सरल भाषा में बातचीत की शैली में प्रधानमंत्री हर महीने के अंतिम रविवार सुबह 11 बजे लगभग आधे घंटे आकाशवाणी के सभी चैनल से प्रसारित किया जाता है। इसमें पत्र भेजकर, ईमेल, वाइस मेल तथा मोबाइल से जन भागीदारी होती है।

सांस्कृतिक चेतना और समाज :– संस्कृति को परिभाषित करते हु, प्रसिद्ध मानवशास्त्री टायलर ने लिखा है– 'संस्कृति वह जटिल पूर्णता है जिसमें उन सब ज्ञान, विश्वास, कला, नैतिकता, नियम, रीति–रिवाज और इसी प्रकार की अन्य क्षमताओं और आदतों का समावेश है, जिन्हें मनुष्य समाज के सदस्य के रूप में सीखता है' रहन–सहन, खान–पान की विधियां, व्यवहार, प्रतिमान, आचार–विचार, रीति–रिवाज, कला–कौशल, संगीत–नृत्य, भाषा–साहित्य, आदर्श–विश्वास व मूल्य जैसे तत्व सम्मिलित रूप से संस्कृति का निर्माण करते हैं। संस्कृति के दो महत्वपूर्ण घटक बताये जाते हैं –

1– **भौतिक** – भौतिक संस्कृति मानव द्वारा निर्मित सभी मूर्त स्वरूप अर्थात मकान, आभूषण, मशीन, वस्त्र इत्यादि का प्रतिनिधित्व करती है।

2– **अभौतिक** – अभौतिक संस्कृति के अंतर्गत मानव जीवन के अमूर्त स्वरूप यथा– धर्म, भाषा, कला, संगीत, साहित्य, रूढ़ियाँ, जन रीतियाँ, प्रथा, संस्कार इत्यादि आते हैं।

संस्कृति में सीखे हुए, व्यवहार के उत्पाद के सतत परिवर्तनशील प्रतिरूपों का समावेश रहता है। संस्कृति जन्मजात न होकर अर्जित होती है तथा समाज के सदस्यों की परस्पर क्रिया के फलस्वरूप अर्जित की जाती है। संस्कृति में निरंतरता विद्यमान होती है अर्थात इसमें निरंतर परिवर्तन होते रहते हैं। संस्कृति के भौतिक पक्षों में तीव्र गति से और अभौतिक पक्षों में मंद गति से परिवर्तन होता है।

मन की बात कार्यक्रम में सांस्कृतिक प्रसार :– विश्वभर में विकसित व विकासशील देशों के विकास में केवल प्राकृतिक सम्पदा का ही योगदान महत्वपूर्ण नही होता, बल्कि उससे अधिक महत्व होती है मानव सम्पदा। मानव सम्पदा में शिक्षा का योगदान तो होता ही है परन्तु उसके साथ ही उसकी विरासत, साहित्य, संगीत, पर्व, भाषा, लोक कला, नृत्य, नाटक आदि का भी ,क पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी स्थानांतरण होता रहता है। अनौपचारिक शिक्षा की यह विधा दुनिया के हर देश में रही परन्तु कुछ देश परिवर्तन की तेज धारा में इसे बचा नहीं पा, और कुछ राष्ट्रों ने उन्हीं परम्पराओं को संजो कर नई तकनीक भी विकसित कर ली। इस धरोहर को सुरक्षित, संरक्षित रख कर उनका संवर्धन करने और उन्हें प्रचारित व प्रसारित करने में मीडिया का योगदान अत्यंत महत्वपूर्ण है। भारतीय संस्कृति की विश्व में अपनी अनूठी पहचान है यहाँ के त्यौहारों के कारण। त्यौहार यहाँ के सामाजिक, सांस्कृतिक, आध्यात्मिक, धार्मिक व आर्थिक क्षेत्र से जुड़े हु, हैं जो साल भर जनसाधारण में उत्साह का संचार करते हैं। कुछ चंद्रमा से जुड़े हैं तो कुछ सूर्य की गति से परन्तु आर्थिक जगत भी इन्हीं से प्रभावित होता है। भारतीय संस्कृति में भौतिक वस्तुओं में भी भावनाओं के दर्शन होते हैं जैसे धरती को माँ पुकारना, गौ माता कहना, नदियों में देवी के दर्शन, वृक्षों को काटना पाप मानना आदि। प्रधानमंत्री ने मन की बात कार्यक्रम में समय–समय पर यह सब बातें कहीं हैं।

प्रसारण माह	मुख्य बिंदु	उदबोधन
अप्रैल, 2015	दुनिया की सबसे पुरानी सभ्यता की संस्कृति की तारीफ करते हुए कहा	मैं पिछले दिनों विदेश में जहाँ भी गया, एक बात के लिए बहुत बधाइयाँ मिली, और वो था यमन में हमने दुनिया के करीब 48 देशों के नागरिकों को बचाया था। चाहे अमेरिका हो, यूके हो, फ्रांस हो, रशिया हो, जर्मनी हो, जापान हो, हर देश के नागरिक को हमने मदद की थी। और उसके कारण दुनिया में भारत का ये “सेवा परमो धर्मः”, इसकी अनुभूति विश्व ने की है। --- वैसे भी भारत का एक गुण, भारत के संस्कार बहुत पुराने हैं।
मई, 2015	योग के सांस्कृतिक महत्व को बताते हुए उन्होंने कहा	वसुधैव कुटुम्बकम की हमारे पूर्वजों ने जो कल्पना की थी, उसमें योग एक कैटलिटिक एजेंट के रूप में विश्व को जोड़ने का माध्यम बन रहा है। कितने बड़े गर्व की, ख़ुशी की बात है। ---- योग दिल और दिमाग को जोड़ता है, योग रोगमुक्ति का भी माध्यम है, तो योग भोगमुक्ति का भी माध्यम है और अब तो मैं देख रहा हूँ, योग शरीर मन बुद्धि को ही जोड़ने का काम करे, उससे आगे विश्व को भी जोड़ने का काम कर सकता है।
अगस्त, 2015	भारत की सूफी परम्परा के विषय में अपने अनुभव को साँझा करते हुए उन्होंने कहा	'उनके शब्दों का चयन, उनका बातचीत का तरीका, यानि सूफ़ी परम्परा में जो उदारता है, जो सौम्यता है, जिसमें एक संगीत का लय है, उन सबकी अनुभूति इन विद्वानों के बीच में मुझे हुई। मुझे बहुत अच्छा लगा। शायद दुनिया को इस्लाम के सही स्वरुप को सही रूप में पहुँचाना सबसे अधिक आवश्यक हो गया है। मुझे विश्वास है कि सूफ़ी परम्परा जो प्रेम से जुड़ा हुआ है, उदारता से जुड़ा हुआ है, वे इस संदेश को दूर-दूर तक पहुँचायेंगे, जो मानव-जाति को लाभ करेगा, इस्लाम का भी लाभ करेगा।
दिसम्बर, 2015	योग को प्रचारित करने में सभी की भूमिका की तारीफ करते वे कहते हैं-	दुनिया ने जब ‘अन्तरराष्ट्रीय योग दिवस’ मनाया और पूरा विश्व जुड गया तब हमें विश्वास पैदा हो गया कि वाह, ये तो है न हिन्दुस्तान। ये भाव जब पैदा होता है न, ये तब होता है जब हम विराट रूप के दर्शन करते हैं। यशोदा माता और कृष्ण की वो घटना कौन भूलेगा, जब श्री बालकृष्ण ने अपना मुँह खोला और पूरे ब्रह्माण्ड का माता यशोदा को दर्शन करा दिये, तब उनको ताक़त का अहसास हुआ। योग की घटना ने भारत को वो

		अहसास दिलाया है।
जनवरी, 2016	खादी से कैसे बदलाव आ रहे हैं, इस पर चर्चा करते हुए मोदीजी कहते हैं	खादी के संबंध में सरदार पटेल ने कहा है, हिन्दुस्तान की आज़ादी खादी में ही है, हिन्दुस्तान की सभ्यता भी खादी में ही है, हिन्दुस्तान में जिसे हम परम धर्म मानते हैं, वह अहिंसा खादी में ही है और हिन्दुस्तान के किसान, जिनके लिए आप इतनी भावना दिखाते हैं, उनका कल्याण भी खादी में ही है। सरदार साहब सरल भाषा में सीधी बात बताने के आदी थे और बहुत बढ़िया ढंग से उन्होंने खादी का माहात्म्य बताया है।
मार्च,2016	कवित्री महादेवी वर्मा की पंक्तियाँ याद करते वे कहते हैं	हिन्दी की महान कवि महादेवी वर्मा वो पक्षियों को बहुत प्यार करती थीं। उन्होंने अपनी कविता में लिखा था - तुझको दूर न जाने देंगे, दानों से आंगन भर देंगे और होद में भर देंगे हम मीठा-मीठा ठंडा पानी। आइये महादेवी जी की इस बात को हम भी करें। मैं अभि को अभिनन्दन भी देता हूँ और आभार भी व्यक्त करता हूँ कि तुमने मुझको बहुत महत्वपूर्ण बात याद कराई।
मार्च,2016	भ्रमण की संस्कृति को बढ़ावा देते हुए उन्होंने कहा	**'A traveller without observation is a bird without wings'** 'शौक-ए-दीदार है अगर, तो नज़र पैदा कर'। भारत विविधताओं से भरा हुआ है। एक बार देखने के लिए निकल पड़ो जीवन भर देखते ही रहोगे, देखते ही रहोगे! कभी मन नहीं भरेगा और मैं तो भाग्यशाली हूँ मुझे बहुत भ्रमण करने का अवसर मिला है।
अप्रैल, 2016	मेलो में भी परिवर्तन का सन्देश देना होगा, मोदीजी ने कहा-	मैं मानता हूँ, ये 'कुंभ मेला' भले धार्मिक-आध्यात्मिक मेला हो, लेकिन हम उसको एक सामाजिक अवसर भी बना सकते हैं। संस्कार का अवसर भी बना सकते हैं। वहाँ से अच्छे संकल्प, अच्छी आदतें लेकर के गाँव-गाँव पहुँचाने का एक कारण भी बन सकता है। हम कुंभ मेले से पानी के प्रति प्यार कैसे बढ़े, जल के प्रति आस्था कैसे बढ़े, जल-संचय का संदेश देने में कैसे इस 'कुंभ मेले' का भी उपयोग कर सकते हैं, हमें करना चाहिए।
अप्रैल, 2017	संत रामानुजाचार्य के विषय में कहा-	हम इतिहास को, हमारी संस्कृतियों को, हमारी परम्पराओं को, बार-बार याद करते रहें। उससे हमें ऊर्जा मिलती है, प्रेरणा मिलती है। इस वर्ष हम सवा-सौ करोड़ देशवासी संत रामानुजाचार्य जी की 1000वीं जयंती मना रहे हैं। किसी-न-किसी कारणवश हम इतने बंध गये, इतने छोटे हो गये कि ज्यादा-ज्यादा शताब्दियों तक का ही विचार करते रहे। दुनिया के अन्य देशों के लिये तो शताब्दी का बड़ा महत्व होगा। लेकिन भारत इतना पुरातन राष्ट्र है कि उसके नसीब में हज़ार साल और हज़ार साल से भी पुरानी यादों को मनाने का अवसर हमें मिला है। एक हज़ार साल पहले का समाज कैसा होगा? सोच कैसी होगी? थोड़ी कल्पना तो कीजिये।

अप्रैल, 2017	महात्मा बुद्ध के विषय में कहा	कुछ दिन के बाद हम बुद्ध पूर्णिमा मनायेंगे। विश्वभर में भगवान बुद्ध से जुड़े हुए लोग उत्सव मनाते हैं। विश्व आज जिन समस्याओं से गुज़र रहा है हिंसा, युद्ध, विनाशलीला, शस्त्रों की स्पर्द्धा, जब ये वातावरण देखते हैं तो तब, बुद्ध के विचार बहुत ही **relevant** लगते हैं। और भारत में तो अशोक का जीवन युद्ध से बुद्ध की यात्रा का उत्तम प्रतीक है। मेरा सौभाग्य है कि बुद्ध पूर्णिमा के इस महान पर्व पर **United Nations** के द्वारा **vesak day** मनाया जाता है।
मई ,2017	मन की बात में साम्प्रदायिक एकता का अद्भुत मिश्रण दिखता है	'रमज़ान में **prayer, spirituality** और **charity** को काफी महत्व दिया जाता है। हम हिन्दुस्तानी बहुत ही भाग्यवान हैं कि हमारे पूर्वजों ने ऐसी परंपरा निर्माण की कि आज भारत इस बात का गर्व कर सकता है, हम सवा-सौ करोड़ देशवासी इस बात का गर्व कर सकते हैं कि दुनिया के सभी सम्प्रदाय भारत में मौजूद हैं। ये ऐसा देश है जो, ईश्वर में विश्वास करने वाले लोग भी और ईश्वर को नकारने वाले लोग भी, मूर्ति पूजा करने वाले भी और मूर्ति पूजा का विरोध करने वाले भी, हर प्रकार की विचारधारा, हर प्रकार की पूजा पद्धति, हर प्रकार की परंपरा, हम लोगों ने एक साथ जीने की कला आत्मसात की है। और आखिरकार धर्म हो, सम्प्रदाय हो, विचारधारा हो, परंपरा हो, हमें यही सन्देश देते हैं – शान्ति, एकता और सद्भावना का। ये रमज़ान का पवित्र महीना शान्ति, एकता और सद्भावना के इस मार्ग को आगे बढ़ाने में ज़रूर सहायक होगा।
अगस्त,2017	त्योहारों की चर्चा करते हुए भारतीय संस्कृति में अहिंसा एवं क्षमा की सुंदर व्याख्या की	सबसे पहले मैं आप सबको मिच्छामि दुक्कड़म कहना चाहूँगा। जैन समाज में कल संवत्सरी का पर्व मनाया गया। जैन समाज में भाद्र मास में पर्युषण पर्व मनाया जाता है। पर्युषण पर्व के आखिरी दिन संवत्सरी का दिन होता है। ये सचमुच में अपने आप में एक अद्भुत परम्परा है। संवत्सरी का पर्व क्षमा, अहिंसा और मैत्री का प्रतीक है। इसे एक प्रकार से क्षमा.वाणी पर्व भी कहा जाता है और इस दिन एक दूसरे को मिच्छामि दुक्कड़म कहने की परंपरा है। वैसे भी हमारे शास्त्रों में' क्षमा वीरस्य भूषणम् यानि क्षमा वीरों का भूषण है। क्षमा करने वाला वीर होता है।ये चर्चा तो हम सुनते ही आए हैं और महात्मा गाँधी तो हमेशा कहते थे – क्षमा करना तो ताकतवर व्यक्ति की विशेषता होती है।
अगस्त,2017	खेलों के महत्व की चर्च करते हुए मोदीजी कहते हैं	29 अगस्त को पूरा देश राष्ट्रीय खेल-दिवस के रूप में मनाता है| ये महान hockey player और हॉकी के जादूगर मेजर ध्यानचंद जी का जन्मदिवस है| हॉकी के लिए उनका योगदान अतुलनीय था| मैं इस बात का स्मरण इसलिए करा रहा हूँ कि मैं चाहता हूँ कि हमारे देश की नई पीढ़ी, खेल से जुड़े | खेल हमारे जीवन का हिस्सा बने| अगर हम दुनिया के युवा देश हैं तो हमारी ये तरुणाई खेल के मैदान में भी नज़र आनी चाहिए| Sports यानि physical fitness, mental alertness, personality enhancement मैं समझता हूँ कि इससे ज्यादा क्या चाहिए ? खेल एक प्रकार से दिलों के मेल की एक बहुत बड़ी जड़ी-बूटी है|

ISSN : 2394-3580 Swadeshi Research Foundation Vol. – 6, No. - 7 May 2019
A Monthly Journal of Multidisciplinary
International Peer Refereed, Review, Indexing & Impact factor-4.2 Research Journal

अक्टूबर 2017	मोदीजी ने दो आदर्श चरित्रों के जन्मदिन पर उनके आदर्शों पर चलने का सन्देश दिया। पहले गुरु नानक देव जी के बारे में फरमाया	गुरु नानक देव जी, सिक्खों के पहले गुरु ही नहीं बल्कि वो जगत-गुरु हैं। उन्होंने पूरी मानवता के कल्याण के बारे में सोचा, उन्होंने सभी जातियों को एक समान बताया। महिला सशक्तिकरण एवं नारी सम्मान पर ज़ोर दिया था। गुरु नानक देव जी ने पैदल ही **28** हज़ार किलोमीटर की यात्रा की और अपनी इस यात्रा के दौरान उन्होंने सच्ची मानवता का सन्देश दिया। उन्होंने लोगों से संवाद किया, उन्हें सच्चाई, त्याग और कर्म-निष्ठा का मार्ग दिखाया। उन्होंने समाज में समानता का सन्देश दिया और अपने इस सन्देश को बातों से ही नहीं, अपने कर्म से करके दिखाया। उन्होंने लंगर चलाया जिससे लोगों में सेवा-भावना पैदा हुई। इकट्ठे बैठकर लंगर ग्रहण करने से लोगों में एकता और समानता का भाव जागृत हुआ। गुरु नानक देव जी ने सार्थक जीवन के तीन सन्देश दिए – परमात्मा का नाम जपो, मेहनत करो – काम करो और ज़रुरतमंदों की मदद करो। गुरु नानक देव जी ने अपनी बात कहने के लिए 'गुरबाणी' की रचना भी की। आने वाले वर्ष **2019** में, हम गुरु नानक देव जी का **550**वाँ प्रकाश वर्ष मनाने जा रहे हैं। आइए, हम उनके सन्देश और शिक्षा के मार्ग पर आगे बढ़ने की कोशिश करें।
जनवरी, 2018	भारतीय समाज में नारी शक्ति के योगदान की महिमा करते हुए मोदीजी कहते हैं	'प्राचीन काल से हमारे देश में महिलाओं का सम्मान, उनका समाज में स्थान और उनका योगदान, यह पूरी दुनिया को अचंभित करता आया है। भारतीय विदुषियों की लम्बी परम्परा रही है। वेदों की ऋचाओं को गढ़ने में भारत की बहुत-सी विदुषियों का योगदान रहा है। लोपामुद्रा, गार्गी, मैत्रेयी न जाने कितने ही नाम हैं। आज हम 'बेटी बचाओ, बेटी पढ़ाओ' की बात करते हैं लेकिन सदियों पहले हमारे शास्त्रों में,स्कन्द-पुराण में,कहा गया है:- दशपुत्र, समाकन्या, दशपुत्रान प्रवर्धयन्। यत् फलं लभतेमर्त्य, तत् लभ्यं कन्यकैकया।। अर्थात, एक बेटी दस बेटों के बराबर है। दस बेटों से जितना पुण्य मिलेगा एक बेटी से उतना ही पुण्य मिलेगा। यह हमारे समाज में नारी के महत्व को दर्शाता है।
मार्च 2018	त्योहारों की विविधता की चर्चा करते हुए मोदीजी कहते हैं-	'अगले कुछ दिनों में कई त्योहार आने वाले हैं। भगवान महावीर जयंती, हनुमान जयंती, ईस्टर, वैसाखी। भगवान महावीर की जयंती का दिन उनके त्याग और तपस्या को याद करने का दिन है। अहिंसा के संदेशवाहक भगवान महावीर जी का जीवन,दर्शन हम सभी के लिए प्रेरणा देगी। समस्त देशवासियों को महावीर जयंती की शुभकामनाएँ। ईस्टर की चर्चा आते ही प्रभु ईसा मसीह के प्रेरणादायक उपदेश याद आते हैं जिन्होंने सदा ही मानवता को शांति, सद्भाव, न्याय, दया और करुणा का सन्देश दिया है। अप्रैल में पंजाब और पश्चिम भारत में वैसाखी का उत्सव मनाया जाएगा, तो उन्हीं दिनों, बिहार में जुड़शीतल एवं सतुवाईन, असम में बिहू तो पश्चिम बंगाल में पोइला वैसाख का हर्ष और उल्लास छाया रहेगा। ये सारे पर्व किस खलिहानों-खेत हमारे में रूप किसी-न-रू के उपज हम से माध्यम के त्योहारों इन हैं। हुए जुडे से अन्नदाताओं और में मिलने वाले अनमोल उपहारों के लिए प्रकृति का धन्यवाद करते हैं।'

अप्रैल 2018	रवीन्द्र संगीत के प्रति आकर्षण बताते हुए मोदीजी ने रेडियो के अपने अनुभव पर भी प्रकाश डाला-	मैं बांग्ला भाषा तो नहीं जानता हूँ, लेकिन जब छोटा था मुझे बहुत जल्दी उठने की आदत रही – बचपन से और पूर्वी हिंदुस्तान में रेडियो जल्दी शुरू होता है, पश्चिम हिंदुस्तान में देर से शुरू होता है तो सुबह मोटा-मोटा मुझे अंदाज़ है; शायद 5।30 बजे रबीन्द्र संगीत प्रारंभ होता था, रेडियो पर और मुझे उसकी आदत थी। भाषा तो नहीं जानता था सुबह जल्दी उठ करके रेडियो पर रबीन्द्र संगीत सुनने की मेरी आदत हो गई थी और जब आनंदलोके और आगुनेर, पोरोशमोनी- ये कविताएँ सुनने का जब अवसर मिलता था, मन को बड़ी ही चेतना मिलती थी। आपको भी रबीन्द्र संगीत ने, उनकी कविताओं ने ज़रुर प्रभावित किया होगा। मैं रबीन्द्र नाथ ठाकुर को आदरपूर्वक अंजलि देता हूँ।
मई, 2018	एक फोन कॉल में पारम्परिक खेलो को अपनाने की बात का जबाब देते हुए मोदीजी ने इसकी संस्कृति, विविधता व संजोने की विधि पर सुंदर प्रकाश डाला	जो खेल कभी गली-गली, हर बच्चे के जीवन का हिस्सा होते थे, वे आज कम होते जा रहे हैं। ये खेल ख़ासकर गर्मी की छुट्टियों का विशेष हिस्सा होते थे। कभी भरी दोपहरी में, तो कभी रात में खाने के बाद बिना किसी चिंता के, बिल्कुल बेफिक्र होकर के बच्चे घंटो-घंटो तक खेला करते थे और कुछ खेल तो ऐसे भी हैं,जो पूरा परिवार साथ में खेला करता था – पिट्ठू हो या कंचे हो, खो-खो हो,लट्टू हो या गिल्ली-डंडा हो, न जाने...।।अनगिनत खेल कश्मीर से कन्याकुमारी, कच्छ से कामरूप तक हर किसी के बचपन का हिस्सा हुआ करते थे। हाँ, यह हो सकता है कि अलग-अलग जगह वो अलग-अलग नामों से जाने जाते थे, जैसे अब पिट्ठू ही यह खेल कई नामों से जाना जाता है। कोई उसे लागोरी, सातोलिया, सात पत्थर, डिकोरी, सतोदिया न जाने कितने नाम हैं एक ही खेल के। परंपरागत खेलों में दोनों तरह के खेल हैं। out door भी हैं, indoor भी हैं। हमारे देश की विविधताके पीछे छिपी एकता इन खेलों में भी देखी जा सकती है। एक ही खेल अलग-अलग जगह, अलग-अलग नामों से जाना जाता है। मैं गुजरात से हूँ मुझे पता है गुजरात में एक खेल है, जिसे चोमल-इस्तो कहते हैं। ये कोड़ियों या इमली के बीज या dice के साथ और 8×8 के square board के साथ खेला जाता है। यह खेल लगभग हर राज्य में खेला जाता था। कर्नाटक में इसे चौकाबारा कहते थे, मध्यप्रदेश में अत्तू। केरल में पकीड़ाकाली तो महाराष्ट्र में चम्पल, तो तमिलनाडु में दायाम और थायाम, तो कहीं राजस्थान में चंगापो न जाने कितने नाम थे लेकिन खेलने के बाद पता चलता है, हर राज्य वाले को भाषा भले न जानता हो – अरे वाह! ये खेल तो हम भी करते थे। हम में से कौन होगा, जिसने बचपन में गिल्ली-डंडा न खेला हो। गिल्ली-डंडा तो गाँव से लेकर शहरों तक में खेले जाने वाला खेल है। देश के अलग-अलग भागों में इसे अलग-अलग नामों से जाना जाता है। आंध्रप्रदेश में इसे गोटिबिल्ला या कर्राबिल्ला के नाम से जानते हैं। उड़ीसा में उसे गुलिबाड़ी कहते हैं तो महाराष्ट्र में इसे वित्तिडालू कहते हैं। कुछ खेलों काअपना एक season होता है। जैसे पतंग उड़ाने का भी एक season होता है। जब हर कोई पतंग उड़ाता है जब हम खेलते हैं, हम में जो unique qualities होती हैं, हम उन्हें freely express कर पाते हैं। आपने देखा होगा कई बच्चे, जो शर्मीले स्वभाव

		के होते हैं लेकिन खेलते समय बहुत ही चंचल हो जाते हैं। team spirit कैसे पैदा होना, परस्पर सहयोग कैसे करना। पिछले दिनों मैं देख रहा था कि Business Management से जुड़े हुए training programmes में भी overall personality development और interpersonal skills के improvement के लिए भी हमारे जो परंपरागत खेल थे, उसका आजकल उपयोग हो रहा है और बड़ी आसानी से overall development में हमारे खेल काम आ रहे हैं।'
मई, 2018	पारम्परिक खेलों के महत्व को बताते हुए प्रधानमंत्री ने कहा	कभी-कभी चिंता होती है कि कहीं हमारे यह खेल खो न जाएँ और वह सिर्फ खेल ही नहीं खो जाएगा, कहीं बचपन ही खो जाएगा और फिर उस कविताओं को हम सुनते रहेंगे – यह दौलत भी ले लो, यह शौहरत भी ले लो, भले छीन लो मुझसे मेरी जवानी, मगर मुझको लौटा दो बचपन का सावन, वो कागज की कश्ती, वो बारिश का पानी यही गीत हम सुनते रह जाएँगे और इसीलिए यह पारंपरिक खेल, इसको खोना नहीं हैआज आवश्यकता है कि स्कूल, मौहल्ले,युवा-मंडल आगे आकर इन खेलों को बढ़ावा दें। crowd sourcing के द्वारा हम अपने पारंपरिक खेलों का एक बहुत बड़ा archive बना सकते हैं। इन खेलों के videos बनाए जा सकते हैं, जिनमें खेलों के नियम, खेलने के तरीके के बारे में दिखाया जा सकता है। Animation फ़िल्में भी बनाई जा सकती हैं ताकि हमारी जो नई पीढ़ी है, जिनके लिए यह गलियों में खेले जाने वाले खेल कभी-कभी अज़ूबा होता है – वह देखेंगे, खेलेंगे, खिलेंगे।
मई,2018	अंतर्राष्ट्रीय योग दिवस को एकजुट होकर मनाने का आवाह्न करते हुए कहते हैं	संस्कृत के महान कवि भर्तृहरि ने सदियों पहले अपने शतकत्रयम् में लिखा था – धैर्यं यस्य पिता क्षमा च जननी शान्तिश्चिरं गेहिनी सत्यं सूनुरयं दया च भगिनी भ्राता मनः संयमः। शय्या भूमितलं दिशोऽपि वसनं ज्ञानामृतं भोजनं एते यस्य कुटिम्बिनः वद सखे कस्माद् भयं योगिनः।। सदियों पहले ये कही गई बात का सीधा-सीधा मतलब है कि नियमित योगा अभ्यास करने पर कुछ अच्छे गुण सगे-सम्बन्धियों और मित्रों की तरह हो जाते हैं। योग करने से साहस पैदा होता है जो सदा ही पिता की तरह हमारी रक्षा करता है। क्षमा का भाव उत्पन्न होता है जैसा माँ का अपने बच्चों के लिए होता है और मानसिक शांति हमारी स्थायी मित्र बन जाती है। भर्तृहरि ने कहा है कि नियमित योग करने से सत्य हमारी संतान, दया हमारी बहन, आत्मसंयम हमारा भाई, स्वयं धरती हमारा बिस्तर और ज्ञान हमारी भूख मिटाने वाला बन जाता है। जब इतने सारे गुण किसी के साथी बन जाएँ तो योगी सभी प्रकार के भय पर विजय प्राप्त कर लेता है। एक बार फिर मैं सभी देशवासियों से अपील करता हूँ कि वे योग की अपनी विरासत को आगे बढ़ायें और एक स्वस्थ, खुशहाल और सद्भावपूर्ण राष्ट्र का निर्माण करें।

ISSN : 2394-3580 **Swadeshi Research Foundation** Vol. – 6, No. - 7 May 2019
A Monthly Journal of Multidisciplinary
International Peer Refereed, Review, Indexing & Impact factor-4.2 Research Journal

जनवरी 2019	संत रविदास की जयंती पर नमन करते हुए मोदीजी कहते हैं	संत रविदास जी ने अपने संदेशों के माध्यम से अपने पूरे जीवनकाल में श्रम और श्रमिक की अहमियत को समझाने का प्रयास किया। ये कहा जाए तो गलत नहीं होगा कि उन्होंने दुनिया को श्रम की प्रतिष्ठा का वास्तविक अर्थ समझाया है। वो कहते थे “मन चंगा तो कठौती में गंगा” अर्थात यदि आपका मन और हृदय पवित्र है तो साक्षात् ईश्वर आपके हृदय में निवास करते हैं।संत रविदास जी के संदेशों ने हर तबके, हर वर्ग के लोगों को प्रभावित किया है। चाहे चित्तौड़ के महाराजा और रानी हों या फिर मीराबाई हों, सभी उनके अनुयायी थे।
जनवरी,2019	खेलो में गावों के बच्चो की उत्कृष्ट प्रतिभा के योगदान की चर्चा करते हुए मोदीजी कहते हैं-	मै हमेशा कहता हूँ, जो खेले वो खिले और इस बार के खेलो इंडिया मेंढ़र सारे तरुण और युवा खिलाड़ी खिल के सामने आए हैं। जनवरी महीने में पुणे में खेलो इंडिया यूथ गेम्स में 18 गेम्स में करीब 6,000 खिलाड़ियों ने भाग लिया।जब हमारा sport s का l ocal ecosyst em मजबूत होगा यानी जब हमारा base मजबूत होगा तब ही हमारे युवा देश और दुनिया भर में अपनी क्षमता का सर्वोत्तम प्रदर्शन कर पाएंगे। जब l ocal l evel पर खिलाड़ी best प्रदर्शन करेगा तब ही वो gl obal l evel पर भी best प्रदर्शन करेगा।इस बार ‘खेलो इंडिया’ में हर राज्य के खिलाड़ियों ने अपने-अपने स्तर पर अच्छा प्रदर्शन किया है। मेडल जीतने वाले कई खिलाड़ियों का जीवन ज़बर्दस्त प्रेरणा देने वाला है।

आंकड़ों का विश्लेषण :— मन की बात कार्यक्रम में संस्कृति और संस्कृति से जुड़े शब्दों की आवृत्ति निम्नवत है।
संस्कृति – (संस्कृति, भारत माँ 125, माता 86, सद्भावना 12, संतों 5, संत 31, महात्मा 77, शांति 54, शान्ति 26 culture 8 सांस्कृतिक 13)

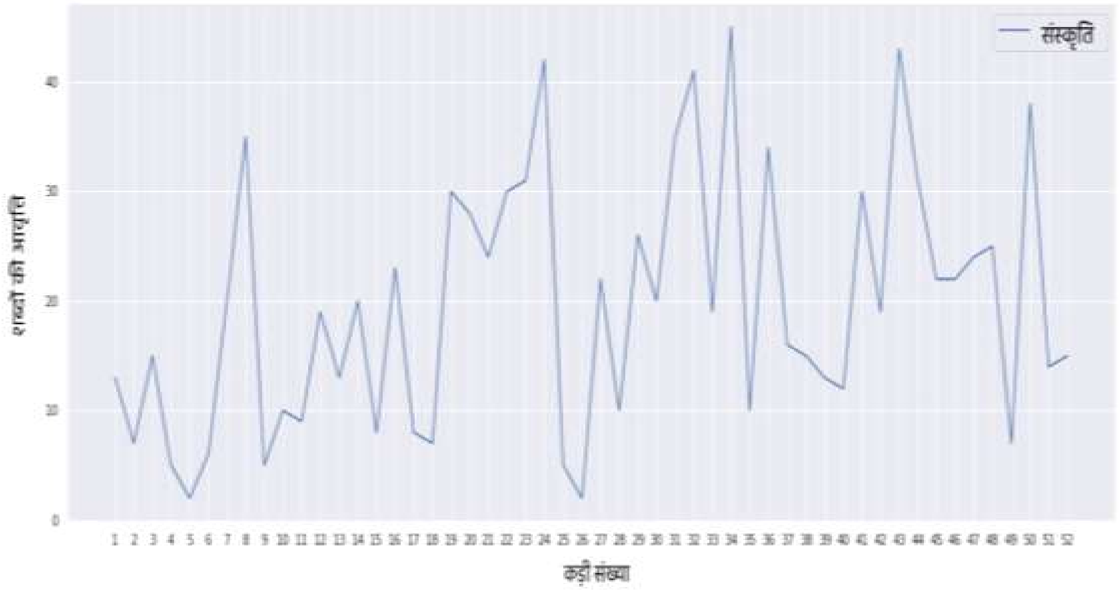

ISSN : 2394-3580 Swadeshi Research Foundation Vol. – 6, No. - 7 May 2019
A Monthly Journal of Multidisciplinary
International Peer Refereed, Review, Indexing & Impact factor-4.2 Research Journal

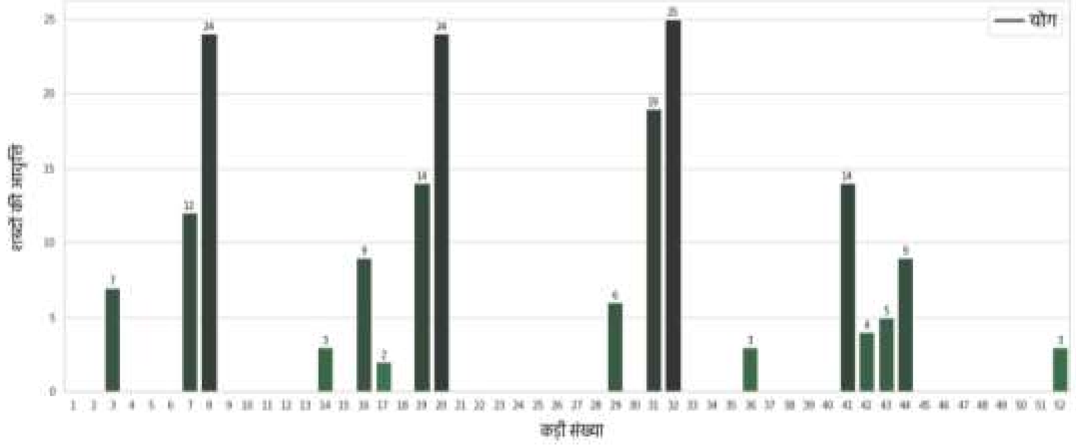

योग

त्यौहार – (सम्मेलन 2, मेले 10, त्योहार 74, उत्सव 98, उत्सवों 15, महोत्सव 12, मिजपअंस 10, पर्व, 116)
संत व महात्मा जयंती (जयंती 68, पुण्यतिथि 8, दिवस 126, day 53)
खेल (खेल 162 खिलाडी 31, खिलाडियों 7, पदक 26, मैडल 40)
सम्मान (पुरस्कार 25, सम्मान 46, सम्मानित 9)

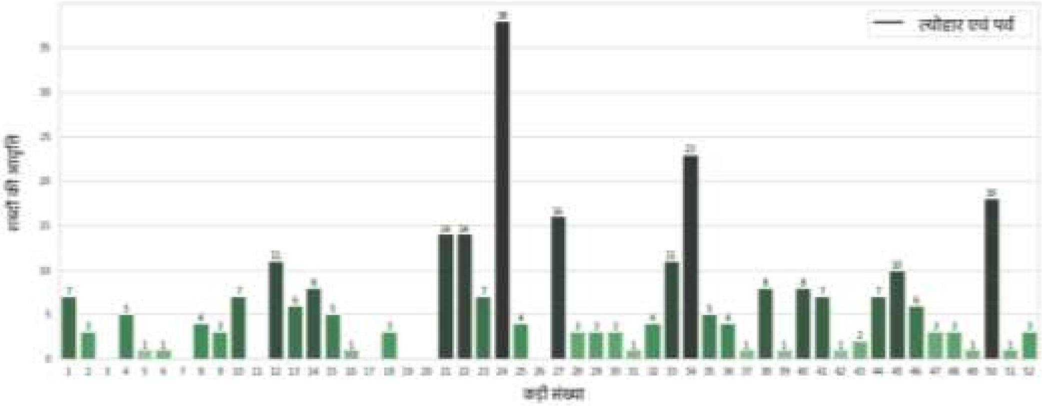

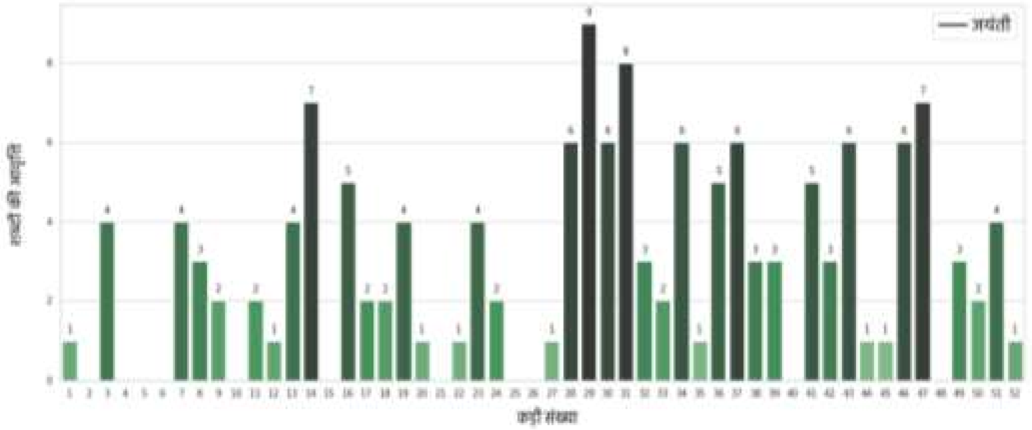

ISSN : 2394-3580 Swadeshi Research Foundation Vol. – 6, No. - 7 May 2019
A Monthly Journal of Multidisciplinary
International Peer Refereed, Review, Indexing & Impact factor-4.2 Research Journal

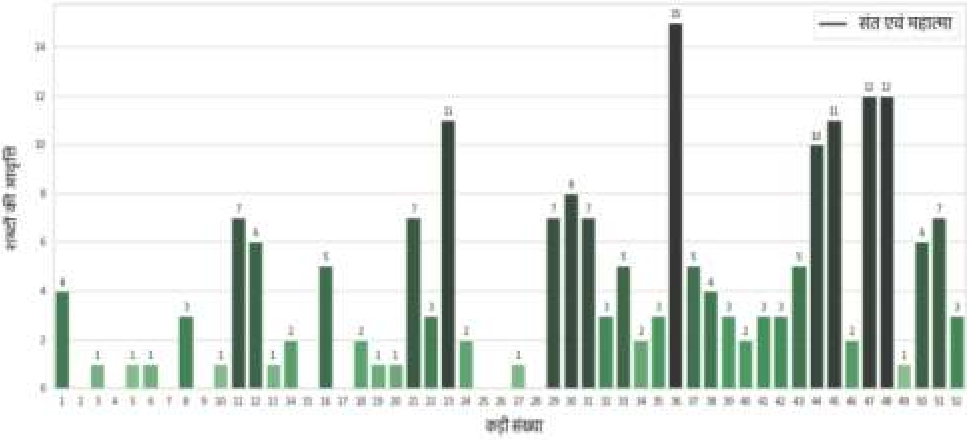

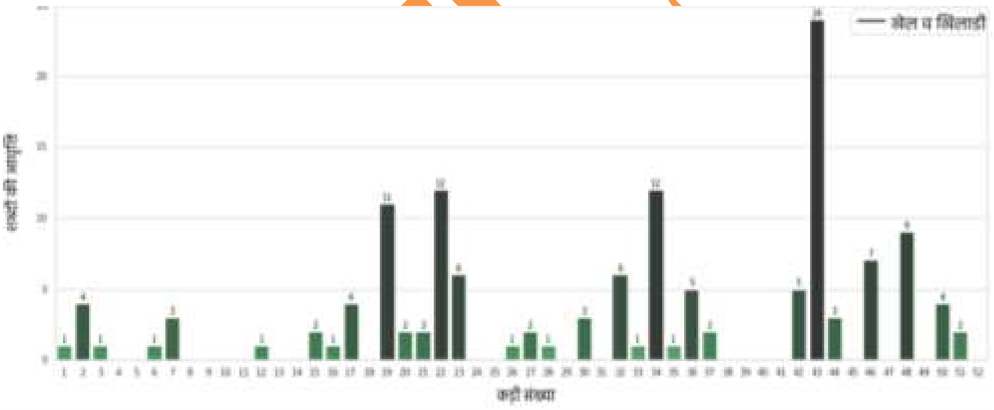

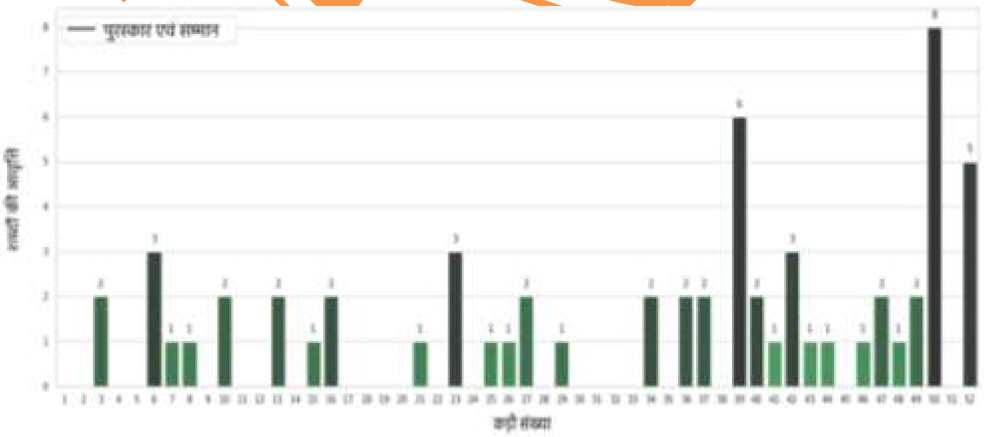

निष्कर्ष :– हमारे ग्रन्थ वेद, पुराण व् उपनिषद आदि में सदियों से अर्जित ज्ञान को अत्यंत गूढ़ रीति से वर्णित किया गया है जिसे जनमानस तक उनकी शैली, बोली व भाषा में रेडियो अवलोकित करता है। मात्र ध्वनि का माध्यम आकाशवाणी के माध्यम से अपने 52 महीनों के जीवनकाल में 'मन की बात' ने भारतीय संस्कृति के विविध पक्षों को छुआ है। इतिहास की अनेक घटनाओं की चर्चा की। इस राष्ट्र की कला, संस्कृति, विरासत, लोकगीतों, शिक्षा, विज्ञान, टेक्नोलोजी, संगीत, भाषा, पर्व व मेलों, साहित्य व दर्शन आदि के साथ उसका मीलों का लम्बा सफर है। विविध कार्यक्रमों का प्रसारण सरल भाषा में जनमानस को शिक्षा देने, सूचित करने, प्रेरित कर व्यवहार परिवर्तन करने के साथ साथ सभी का मनोरंजन करने के लक्ष्य को मन की बात ने भी महात्मा बुद्ध के महावाक्य 'बहुजनहिताय बहुजनसुखाय' को

चरितार्थ किया है। उपरोक्त सन्दर्भों के आधार पर हम निम्नलिखित निष्कर्ष पर पहुच सकते हैं।

मन की बात कार्यक्रम में भारतीय संस्कृति के तमाम तत्वों को शामिल किया गया है और इसकी नियमित चर्चा की गई है। इस आधार पर यह कहा जा सकता है की मन की बात सांस्कृतिक संचार में सक्षम है।

मन की बात कार्यक्रम में लोगों ने पत्रों, इमेल आदि के जरिये प्रतिभाग किया और सांस्कृतिक मुद्दों के प्रति उत्सुकता दिखाई। जिससे यह स्पष्ट होता है की सांस्कृतिक संचार से सामाजिक विकास की गति बढाई जा सकती है।

सांस्कृतिक चेतना से सामाजिक विकास की गति को बढ़ाया जा सकता है, यह बात मन की बात ने स्थापित की है। मन की बात के प्रसारण के बाद से भारत ने खेलों के प्रति अभूतपूर्व सकारात्मक बदलाव देखने को मिला है। जिससे राष्ट्रीय और अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर खिलाड़ियों की नई पीढ़ी सामने आई है।

सहायक संदर्भ ग्रन्थ :–

- दुबे, श्यामचरण. (2012). शविकास का समाजशास्त्र। दिल्ली: लिटिल बुक्स
- Bluekraft Digital Foundation & LeÛis NeÛis (2017)- Man Ki Baat A Social Revolution on Radio] Gurgaon : LeÛis NeÛisI
- गौतम, सिद्धार्थ शंकर। (2018) मन की बात सामाजिक चेतना का अग्रदूत। दिल्ली : प्रभात प्रकाशन।
- https://www-pmindia-govAin/en/mann&ki&baat/
- https://pmonradio-nic-in/
- http://prasarbharati-gov-in/AIR/indeÛAphp

वर्तमान साहित्य में मूल्यों के संरक्षण की चुनौतियाँ

प्रीती सिंह
शोधार्थी, बुन्देलखण्ड विश्वविद्यालय, झाँसी

काव्यमीमांसा में आचार्य राजशेखर कहते हैं–

'शब्दार्थयोर्यथावत्सहभावेन विद्या साहित्य विद्या।'

अर्थात् शब्द और अर्थ के यथावत् सहभाव को बताने वाली विद्या साहित्य–विद्या कहलाती है। वहीं आचार्य कुन्तक का मानना है– सौंदर्य द्वारा प्रशंसा को प्राप्त करने के लिए, शब्द और अर्थ की अपकर्ष और उत्कर्ष से रहित (समान रूप से विद्यमान), रमणीय यह कोई (अलौकिक) अवस्थिति, 'साहित्य' कही जाती है।

आचार्य महावीर प्रसाद द्विवेदी के अनुसार – 'ज्ञान–राशि के संचित कोश ही का नाम साहित्य है' तो आ0 हजारी प्रसाद द्विवेदी का कथन है– 'साहित्य का मुख्य उद्देश्य सहज भाषा में ऊँचे विचारों और श्रेष्ठ जीवन मूल्यों को अनायास ग्राह्य बनाना है। प्रेषण–धर्मिता उसका मुख्य गुण है।' वहीं वे आगे कहते हैं– 'साहित्य सामाजिक मंगल का विधायक है। यह सत्य है कि वह व्यक्ति विशेष की प्रतिभा से ही रचित होता है, किन्तु और भी अधिक सत्य यह है कि प्रतिभा सामाजिक प्रगति की ही उपज है।' आ0 हजारी प्रसाद द्विवेदी जी महान साहित्य को रेखांकित करते हुए कहते हैं कि जो साहित्य मनुष्य को उसकी समस्त आशा–आकांक्षाओं के साथ, उसकी सभी सबलताओं और दुर्बलताओं के साथ, हमारे सामने प्रत्यक्ष ले आकर खड़ा कर देता है, वही महान साहित्य है।

प्रगतिशील लेखक संघ के लखनऊ अधिवेशन में सभापति पद से भाषण देते हुए सुप्रसिद्ध उपन्यासकार प्रेमचन्द, जिनका नाम स्वयं ही कथा साहित्य का पर्याय है ने स्पष्ट कहा था–

'जिस साहित्य से हमारी सुरुचि न जागे, आध्यात्मिक और मानसिक तृप्ति न मिले, हममें शक्ति और गति न पैदा हो, हमारा सौन्दर्य – प्रेम न जाग्रत हो – जो हम में सच्चा संकल्प और कठिनाइयों पर विजय पाने की सच्ची दृढ़ता न उत्पन्न करे, वह आज हमारे लिए बेकार है, वह साहित्य कहाने का अधिकारी नहीं।'

इसी भाषण में वे आगे कहते हैं– 'हमारी कसौटी पर वही साहित्य खरा उतरेगा, जिसमें उच्च चिन्तन हो, स्वाधीनता का भाव हो, सौन्दर्य का सार हो, सृजन की आत्मा हो, जीवन की सचाइयों का प्रकाश हो– जो हममें गति और बेचैनी पैदा करे, सुलाये नहीं, क्योंकि अब और ज्यादा सोना मृत्यु का लक्षण है।'

साहित्य समाज के आगे चलने वाली मशाल है, सोते हुए को जाग्रत करने का मंत्र है यह बात प्रेमचंद स्वतंत्रता प्राप्ति के लगभग 10–11 वर्ष पूर्व कह रहे थे। यह तथ्य आज भी प्रासंगिक है क्योंकि साहित्य का स्वभाव देश, काल और वातावरण के अनुसार परिवर्तित तो हो सकता है, लेकिन मूल स्वर नहीं बदलता, बदल भी नहीं सकता क्योंकि साहित्य किसी भी देश की सांस्कृतिक विरासत को इतिहास के गर्त में खोने से बचाता है, अनुभवों को सदैव जीवन्त बनाये रखने के लिए साहित्यकार समय की शिला पर चित्र उकेरता है, समय से आगे की सोचता है तभी गोस्वामी तुलसीदास कहते हैं–

'कीरति भनिति भूति भल सोई।
सुरसरि सम सब कहँ हित होई।'

सुरसरि के समान सबका हित चाहने वाला साहित्य अपनी पूरी सामर्थ्य के साथ समाज को रास्ता दिखाता है, मूल्य निर्धारित करता है और मूल्यों का संरक्षण भी करता है। 'सामाजिक मूल्य' एक सापेक्ष मुहावरे की भाँति प्रयोग होने वाला पद है। मूल्यों की कसौटी पर साहित्य जाँचा–परखा जाता है और सुप्रसिद्ध साहित्यकार जैनेन्द्र कुमार जी के शब्दों में–

'साहित्य की कसौटी वह संस्कारशीलता है, जो हृदय–से– हृदय का मेल चाहती और एकता में निष्ठा रखती है। सहृदय का चित्त मुदित करता है वह साहित्य खरा संकुचित करता है वह खोटा।'

यह 'खरा–खोटा' होना ही साहित्य का मूलस्वर है और इसी स्वर को मुखर करने का दायित्व साहित्यकारों का होता है। साहित्य समय की सीमाओं को लाँघकर निरन्तर गतिशील रहता है और समाज को मार्गदर्शन देने का कार्य भी करता है। कोई भी समाज मूल्यों की आधार भूमि पर टिका होता है, मूल्यों को संरक्षित करने का कार्य साहित्य का होता है। 'मूल्य' एक सापेक्षिक शब्द है। 'मूल्य विशेष' किसी समाज के

लिए महत्वपूर्ण हो सकता है तो दूसरे समाज के लिए पुरातन–पंथी, रूढ़ीवादी।

साहित्य में समयानुकूल अनेक परिवर्तन देखने को मिलते हैं, और ये परिवर्तन अनिवार्य भी हैं। हम समाज का प्रतिबिम्ब साहित्य में देखते हैं और इस प्रतिबिम्ब में मूल्यों की छाया भी दृष्टिगत होती है। मूल्य क्या हैं? इस पर अलग–अलग मत हो सकते हैं। मेरा मानना है मूल्य हमारे जीवन के वे सिद्धान्त हैं जिनसे हमारा जीवन अनुशासित होता है। हम इन्हीं मूल्यों को जीते हुए अपने समाज का निर्माण करते हैं और धरोहर के रूप में यही मूल्य अपनी संतति, भावी पीढ़ी को सहर्ष सौंपकर इस संसार से विदा लेते हैं, इस विश्वास के साथ कि हमारे बाद हमारे ये जीवन–मूल्य जीवित रहेंगे, संरक्षित होंगे और आगे की पीढ़ियों को हस्तान्तरित भी होंगे।

यह सच भी है, जब जीवन–मूल्य हमें बताये जाते हैं, तब वे हमें बोझ लगते हैं, लेकिन जब वही जीवन मूल्य हम अंगीकार कर लेते हैं, तो वे सहज ही हमारे जीवन का हिस्सा बन जाते हैं। यही परम्परा है और यही सामाजिक दायित्व भी परिवार के साथ समाज और समाज के साथ संसार में व्यवहृत जीवन मूल्य निरन्तर परिवर्तनशील हैं। वैश्वीकरण, आधुनिक संचार तकनीकी, हमारी शिक्षा और खुली मानसिकता ने मूल्यों में बहुत परिवर्तन किया है। आज से सौ वर्ष पूर्व जिन बातों के लिए सोचना भी कठिन था आज वे सब हमारे जीवन का हिस्सा हैं। पहले परिवार का एक सदस्य कमाता था और पूरा परिवार उसके अनुसार जीवन–यापन करता था, आज समय बदला है अब परिवार का हर सदस्य कमाता है और अपने–अपने अनुसार जीवन जीना चाहता है, इसीलिए मनुष्य जीवन में सहजता के स्थान पर अनेक विसंगतियाँ प्रवेश कर गयी हैं, जिन्होंने मूल्यों का क्षरण भी किया है और नये मूल्य विकसित भी किये हैं।

आधुनिक साहित्य ने परिवर्तन के अनेक दौर देखे हैं। साहित्य की लगभग सभी विधाओं में परम्परा से अलग हटकर लेखन होने लगा है। यदि हम सौ वर्ष पूर्व लिखी गयी कहानियों की कसौटी पर आज की कहानी को परखना चाहेंगे तो हमें निराशा ही होगी क्योंकि वर्तमान कहानी का स्वरूप कुछ और ही है। ये बात कविता, उपन्यास, निबन्ध, डायरी, रिपोतार्ज, संस्मरण, यात्रा संस्मरण सभी विधाओं के साथ समान रूप से रेखांकित की जा सकती है।

राष्ट्रकवि मैथिलीशरण जी कहते हैं कि साहित्य का कार्य केवल मनोरंजन ही नहीं होना चाहिए उसमें ज्ञान का भी मर्म निहित होना चाहिए। लेकिन वर्तमान संदर्भों में साहित्य यथार्थ के अधिक निकट है, उसमें कल्पना का समावेश कम से कम है, यथार्थ के चित्रण में कभी–कभी साहित्य इतना एकांगी हो जाता है कि उसमें साहित्य रस का अभाव दिखायी देने लगता है। यद्यपि वह यथार्थ समाज के 1 या 2 प्रतिशत लोगों का सच होता है लेकिन उसको साहित्य में इस प्रकार प्रस्तुत किया जाता है कि वही मूल धारा या मूल विचार है समाज का। इन परिवर्तनों के बीच मूल्यों का संरक्षण एक बड़ी चुनौती है जो कलमकारों को उद्वेलित करती है उनसे बढ़कर पाठकों के लिए कि वे कैसा साहित्य पढ़ें। नग्न यथार्थ से जुड़ा साहित्य या तुलसीदास जी की उक्ति पतित पावनी गंगा के समान सबका हित चाहने वाला साहित्य।

हम क्यों लिखते हैं, स्वान्तःसुखाय के लिए, पाठकों के लिए, समाज के लिए। मुझे नहीं लगता नग्न यथार्थ के चित्रण में किसी को सुख मिलता होगा। मैं अपनी बात करती हूँ जब मेरी कहानी–उपन्यास का कोई पात्र आत्महत्या करता है तो सच मानिये मेरे रोंगटे खड़े हो जाते हैं और जब कोई चरित्र व्यभिचार करता है, खलनायक के रूप में अपनी प्रस्तुति देता है तब घृणा का एक सोता मेरे अन्दर भी फूटता है और यही सोता मैं अपने पाठकों के अन्दर फूटता हुआ देखना चाहती हूँ। लेकिन जब कोई प्रेम का अंकुर रचना में दिखायी देता है, अनेक नकारात्मक भावों के बाद कोई सकारात्मक विचार आकार लेता है, तब मन को जो संतोष मिलता है वह ही 'स्वान्तः सुखाय' है। और मुझे लगता है एक लेखक को पहले 'स्वात्तःसुखाय' की कसौटी पर खरा उतरना चाहिए फिर सामाजिक कसौटी स्वतः ही पार हो जायेगी।

एक बात और हम ऐसे समाज में रह रहे हैं जहाँ जीवन मूल्यों का महत्व है, हमारी भारतीय संस्कृति जीवन मूल्यों पर आधारित संस्कृति है। हम रहेंगे भारत में, हमारे पाठक स्वाभाविक है कि भारतीय ही होंगे लेकिन उन्हें पाठ्य सामग्री जो मिले वह आयतित मानसिकता से ओतप्रोत मिले तब साहित्य–रस कहाँ होगा। मूल्यों की बात करने वाले साहित्यकारों को पिछली सदी का साहित्यकार कहने वाले आलोचक अपने को अति आधुनिक मानते हैं लेकिन रहते इसी समाज में हैं जहाँ 90 प्रतिशत लोग जीवन मूल्यों के

साथ जीते हैं, जीवन मूल्यों के लिए कुछ भी छोड़ने को तत्पर दिखायी देते हैं और इस तत्परता में नये समाज के निर्माण में लगे लोगों को पिछड़ी सोच वाले भी दिखायी देते हैं, लेकिन होते नहीं है क्योंकि साहित्य का पहला कर्त्तव्य समाज को दिशाबोध देना है। मूल्य विहीन लेखन साहित्य नहीं हो सकता उसे कुछ और की संज्ञा भले ही दी जा सकती है। जीवन मूल्य से मेरा तात्पर्य रूढ़िवादिता से नहीं है। रूढ़ियाँ तोड़ी जानी चाहिए, तोड़ी भी जाती हैं तभी हमारा समाज विकास की गति को प्राप्त करता है लेकिन केवल तोड़ने के लिए ही रूढ़ियाँ बनायी जायें, बतायी जायें यह कदापि उचित नहीं है।

हम एक रास्ते पर जा रहे हैं बीच में एक ऐसा गड्ढा मिलता है जिसमें गंदा पानी भरा है, हमारे पास दो रास्ते हैं या तो उस गड्ढे से बचकर सुरक्षित राह चुनें या उस गड्ढे में पैर रखकर उसे पार करें। यदि हम सुरक्षित राह चुनते हैं तो निश्चित रूप से अपनी अभिव्यक्ति के माध्यम से उस गड्ढे से बचने के रास्ते बता सकेंगे लेकिन यदि हम अपना पैर उस गड्ढे में नये अनुभव को प्राप्त करने के उद्देश्य से डालते हैं तो निश्चित रूप से कुछ छींटे हमारे ऊपर भी पड़ेंगे और हो सकता है वह गंदे पानी वाला गड्ढा हमें पूरा का पूरा लील जाये और तत्जनित अनुभव के वर्णन में हम समाज को दिशा देने के स्थान पर हिंसा, घृणा और आपसी विद्वेष की भावना को बढ़ावा दे रहे हों, कभी जानबूझकर सनसनी फैलाने के लिए तो कभी अनजाने में। क्या ऐसा साहित्य मूल्यों की धज्जियाँ नहीं उड़ाता। साथ ही साथ समाज को क्या देता है इस पर विचार किया जाना आवश्यक है।

मुक्तिबोध के शब्दों में कहें तो 'हमें अभिव्यक्ति के खतरे उठाने होंगे।' इन खतरों को उठाते हुए कभी–कभी हमारी अभिव्यक्ति क्रूर हो जाती है, विद्रूप हो जाती है 'मूल्यहीनता का शिकार हो जाती है, तब अनुभूति की गहराई अभिव्यक्ति का स्पर्श भी नहीं कर पाती। मेरा मानना है वर्तमान साहित्य के समक्ष भाषा, शैली, शिल्प, कथ्य के साथ–साथ मूल्यहीनता से संघर्ष करने की सबसे बड़ी चुनौती है। कोई समाज मूल्यहीन होकर नहीं जी सकता, अधिक दिनों तक संघर्ष नहीं कर सकता, जीवन मूल्यों की ओर हमें लौटना ही होता है और उन्हें संरक्षित करने का दायित्व भी निभाना होता है। समाज साहित्यकार की ओर बड़ी आशा से देखता है क्योंकि उसे विश्वास होता है कि साहित्यकार के मन में मूल्यों के प्रति आस्था है और वह भटकती हुई मूल्य विहीन संस्कृति के संघर्ष को रेखांकित करेगा और कोई न कोई मार्ग अवश्य सुझायेगा तब रचनाकार की कलम का दायित्व और अधिक बढ़ जाता है। मूल्यों के संरक्षण की चुनौतियों के बीच अपनी अनुभूति और अभिव्यक्ति के बीच का समीकरण हल करना होता है। 'अनुभूति और अभिव्यक्ति' शीर्षक अपनी कविता से अपनी बात इस शुभकामना के साथ समाप्त करती हूँ कि जीवन मूल्यों के संरक्षण में पूर्ववर्ती रचनाकारों की भांति वर्तमान साहित्य के प्रणेता अपना महत्वपूर्ण दायित्व निभायें और सभी चुनौतियों को सहर्ष स्वीकार करते हुए पथ प्रदर्शक की गौरवशाली परम्परा को आगे बढ़ायें–

अनुभूति और अभिव्यक्ति के बीच
होता है एक झीना आवरण
कभी यह आवरण
होता है पारदर्शी
जिसके आर–पार
देता है सब कुछ दिखायी
ऐसे में
अनुभूति की विवशता
अभिव्यक्ति की सरलता बन जाती है।

अनुभूति और अभिव्यक्ति
के बीच का
यह झीना आवरण
कभी होता है अपारदर्शी
जिसके आर–पार
कुछ भी नहीं देता दिखायी
ऐसे में
अनुभूति की तरलता
अभिव्यक्ति की सफलता बन जाती है।

अनुभूति और अभिव्यक्ति
के बीच का
यह झीना आवरण
चाहे पारदर्शी
या हो अपारदर्शी
समाज की सच्चाई को
जितनी गहराई से स्पर्श करता है
हमारे मन को
उतनी ही गहराई से छूता है
तभी अभिव्यक्ति की विविधता
रचना की उत्कृष्टता बन जाती है।

यही रचना की उत्कृष्टता हमारी उपलब्धि होती है और मूल्यहीनता के इस तथाकथित समय में

हमारी सजगता भी क्योंकि साहित्य समाज का आकाशदीप भी होता है, अन्धकार मिटाने वाला, दीप जलाने वाला, दीपोत्सव बनाने वाला।

संदर्भ :–

1. शिवदान सिंह चौहान, आलोचना के मान, पृ. 47
2. आस्था और सौंदर्य, डॉ. रामविलास शर्मा, पृ. 17
3. व्यक्ति और सृष्टा, डॉ. शंभूनाथ सिंह, पृ. 92
4. हिंदी उपन्यास उपलब्धियाँ, डॉ. लक्ष्मी सागर, पृ. 26.
5. मानव मूल्य और साहित्य (भूमिका), धर्मवीर भारती, पृ. 10–11.
6. आस्था और सौंदर्य, डॉ. रामविलास शर्मा, पृ. 17
7. 3विद्यानिवास मिश्र, साप्ताहिक हिन्दुस्तान, (3 अक्टूबर, 1982) पृ. 18.
8. विद्यानिवास मिश्र, साप्ताहिक हिन्दुस्तान, (3 अक्टूबर, 1982) पृ. 19.
9. व्यक्ति और सृष्टा, डॉ. शंभूनाथ सिंह, पृ. 12
10. शिवदान सिंह चौहान, आलोचना के मान, पृ. 46
11. प्रार्थना रामनरेभा त्रिपाठी, आधुनिक कवि, हिंदी साहित्य सम्मेलन, संस्करण–2001 ई0, पृ0 35
12. सामाजिक राजनीतिक दर्शन के नये आयाम, हृदयनारायण मिश्र, शिखर प्रकाशन, इलाहाबाद, संस्करण–2004, पृ0 85
13. अंधायुग, धर्मवीर भारतीय, किताब महल, पटना, संस्करण–2016, पृ0 15–16

ISSN : 2394-3580 Swadeshi Research Foundation Vol. – 6, No. - 7 May 2019
A Monthly Journal of Multidisciplinary
International Peer Refereed, Review, Indexing & Impact factor-4.2 Research Journal

भारत में अपराधिक न्याय व्यवस्था : एक अध्ययन

डॉ. मिर्जा मोजिज बेग
शासकीय विधि महाविद्यालय, इंदौर

विगत शदी के आठवें दशक तक भारतीय आपराधिक न्याय व्यवस्था में अपराध–पीड़ित को पूर्णतः उपेक्षित रखा गया था। यहाँ तक कि दण्ड प्रक्रिया संहिता, 1973 में सन् 2008 के पूर्व 'अपराध–पीड़ित' की परिभाषा का भी उल्लेख नहीं था। तथापि 1980 के पश्चातवर्ती वर्षो में उत्पीड़न" शास्त्र को अपराध" शास्त्र की एक विशिष्ट शाखा का स्थान प्राप्त हो जाने के कारण आपराधिक न्याय प्रशासकों का ध्यान अपराध–पीड़ितों की समस्याओं तथा उनके विधिक अधिकारों की संरक्षा की आवश्यकता की ओर आकृष्ट हुआ।

'अपराध–पीड़ित' व्यक्ति वह होता है जिसके प्रति कोई अपराध घटित होने के परिणामस्वरूप उसे क्षति या हानि प्रत्यक्षतः भुगतना पड़ता है या शारीरिक, मानसिक या आर्थिक नुकसान होता है या यदि ऐसा व्यक्ति कोई संस्थागत ईकाई हो, तो उसके अधिकृत प्रतिनिधि या समूह को इसी तरह का कोई नुकसान भुगतना पड़ा हो और उसे सिविल या संविधानिक विधि के अधीन आपराधिक न्याय–व्यवस्था के अंतर्गत सहायता के लिए पात्र माना गया है।

दण्ड प्रक्रिया संहिता 1973 की धारा 2 में अपराध–पीड़ित की परिभाषा दी गई है जो इस प्रकार है –

''पीड़ित से तात्पर्य ऐसे व्यक्ति से है जो अभियुक्त के किसी कृत्य या कार्यलोप, जिसके लिए आरोपित है, के कारण क्षतिग्रस्त हुआ है या उसे हानि कारित हुई है, और इसमें उसका संरक्षक या विधिक उत्तराधिकारी सम्मिलित है।''

भारतीय दाण्डिक न्याय प्रणाली में प्रारंभ से ही अभियुक्त या बंदी बनाये गए व्यक्ति के अधिकारों का पर्याप्त वैधानिक संरक्षण दिया गया था लेकिन अपराध से पीड़ित व्यक्ति के अधिकारों या उपचार के बारे में कोई विधिक प्रावधान नहीं थें।

तथापि देश में लोकहित वादों के उद्‌भव के फलस्वरूप उच्चतम न्यायालयों का ध्यान इस कमी की ओर आकृष्ट हुआ सक्रिय सामाजिक जनसेवियों ने लोकहित याचिका के माध्यम से पीड़ित व्यक्ति को अपराधी या सरकार के प्रतिकार दिलाये जाने की माँग करना प्रारंभ कर दिया जिसे उचित मानते हुए उच्चतम न्यायालयों द्वारा न्यायिक सक्रियता का अवलम्बन करके अपराध पीड़ितों को अपराध के कारण हुई उपहति, क्षति या हानि के लिए उन्हें उचित मुआवजा दिये जाना न्यायोचित माना। इस प्रकार पीड़ितों के वैधानिक अधिकारों को न्यायिक संरक्षण प्रदान करने का श्रेय लोकहित वाद की तकनीक को दिया जाना चाहिए जो भारत में 1980 के दशक से प्रारंभ हुई।

यद्यपि औद्योगिक इकाईयों में घटने वाली त्रासदी, मोटरयान दुर्घटना से कारित मृत्यु या अपंगता, नियोजन के दौरान कर्मकार को दुर्घटना के कारण क्षति, लोकदायित्व बीमा योजना के अंतर्गत आदि के लिए प्रतिकारात्मक अनुतोष अनेक विशिष्ट अधिनियमों के अंतर्गत पूर्व से ही उपलब्ध थे, लेकिन अपराध से व्यथित या क्षतिग्रस्त हुए पीड़ित को आपराधिक विधि के अंतर्गत इस प्रकार का कोई वैधानिक उपचार या अनुतोष उपलब्ध नहीं था, जिसे अन्ततोगत्वा सन् 2008 में दण्ड प्रक्रिया संहिता, 1973 में एक नई धारा 357–ए जोड़कर विधिक मान्यता प्राप्त हुई। इस धारा के अंतर्गत अपराध–पीड़ितों के लिए प्रतिकर की योजना लागू की गई है, जो निम्नानुसार है –

धारा 357–ए अपराध–पीड़ितों के लिए प्रतिकर योजना –

(1) प्रत्येक राज्य सरकार, केन्द्रीय सरकार के साथ मिलकर ऐसे पीड़ित या उसके आश्रितों को जिन्हें अपराध के परिणामस्वरूप हानि या क्षति हुई है और जिन्हें पुनर्वास की आवश्यकता है, प्रतिकर के प्रयोजन के लिए निधियाँ उपलब्ध कराने हेतु एक योजना तैयार करेगी।

(2) जब कभी न्यायालय द्वारा प्रतिकर के लिए अनुशंसा की जाती है, तब जिला विधिक सेवा प्राधिकरण या

ISSN : 2394-3580 Swadeshi Research Foundation Vol. – 6, No. - 7 May 2019
A Monthly Journal of Multidisciplinary
International Peer Refereed, Review, Indexing & Impact factor-4.2 Research Journal

राज्य विधिक सेवा प्राधिकरण, यथास्थिति उपधारा (1) में निर्दिष्ट योजना के अधीन दिये जाने वाले प्रतिकर की मात्रा का विनिश्चय करेगा।

(3) यदि आचरण की समाप्ति पर विचारण न्यायालय का समाधान हो जाता है कि धारा 357 के अधीन अधिनिर्णीत प्रतिकर ऐसे पुनर्वास के लिए पर्याप्त नहीं है या जहाँ मामले दोषमुक्ति या उन्मोचन पर समाप्त हो जाते है, और पीड़ित को पुनर्वासित करना है, वहाँ वह प्रतिकर के लिए अनुशंसा कर सकेगा।

(4) जहाँ अपराधी का पता नहीं चल पाता है या उसकी पहचान नही पाती है वहाँ पीड़ित या उसके आश्रित प्रतिकर दिये जाने के लिए राज्य या जिला विधि सेवा प्राधिकरण, यथास्थिति को आवेदन कर सकेंगे।

(5) उपधारा (4) के अधीन ऐसी अनुशंसाएँ या आवेदन पत्र होने पर, राज्य या जिला विधिक सेवा प्राधिकरण, सम्यक जाँच करने के पश्चात दो माह के भीतर जाँच पूरी करके पर्याप्त प्रतिकर अधिनिर्णित करेगा।

(6) राज्य या जिला विधिक सेवा प्राधिकरण, यथास्थिति पीड़ित या यातना को कम करने के लिए पुलिस थाने के शारसाधन से अन्यून पंक्ति के पुलिस अधिकारी या संबंध क्षेत्र के मजिस्ट्रेट के प्रमाणपत्र पर निःशुल्क उपलब्ध कराई जाने वाली प्रथम सहायता सुविधा या चिकित्सीय प्रसुविधाओं या कोई अन्य अनुतोष जिसे समुचित अधिकरण ठीक समझे, के लिए तुरंत आदेश कर सकेगा।

आपराधिक न्याय व्यवस्था में अपराध–पीड़ितों की उपेक्षा के प्रति चिंता व्यक्त करते हुए उच्चतम न्यायालय के पूर्व न्यायाधीश और न्यायिक सक्रियता के लिए विख्यात न्यायमूर्ति बी.आर.कृष्णा अय्यर ने लिखा कि –

''भारत में दण्ड विधि पीड़ित व्यक्ति–मूलक नहीं है जिसके कारण अपराध पीड़ितों की अनगिनत व्यथाओं, वेदनाओं तथा पीड़ाओं की इस कारण पूर्णतः अनदेखी हो जाती है क्योंकि न्याय–व्यस्था में अपराधी के प्रति अपनिहित सहानुभूति दर्शाई गई है।

उच्चतम न्यायालय अपने वाद–निर्णयों के माध्यम के बार–बार दोहराया है कि, कोई अभिरक्षाधीन या निरोधित व्यक्ति या विचाराधीन बन्दी केवल इस कारण से अमानव नहीं बन जाता क्योंकि वह जेल में बन्द हैं, इसलिए बन्दीवास के दौरान भी वह उन सभी मूल अधिकारों का हकदार बना रहता है, जो संविधान के अनुच्छेद 21 एवं 22 के अंतर्गत उपलब्ध है। अतः उसे विधि द्वारा स्थापित प्रक्रिया द्वारा के अधीन प्राण एवं दैहिक स्वतंत्रता के अधिकार से वंचित नहीं रखा जा सकता है भले ही जेल में बंद रखा गया हो। परन्तु इसी प्रकार का सरोकार अपराध–पीड़ित के प्रति कहीं भी दर्शाया गया है जिसे अपराध की पीड़ा, व्यथा और क्षति भोगने के लिए असहाय छोड़ दिया जाता है, सिवाय इसके की कुछ मामलों में प्रतिकर के रूप में उसे कुछ धनराशि का भुगतान करा दिया जाता है।

वर्तमान सदी के पूर्व भारतीय न्याय व्यवस्था में अपराध पीड़ितों की व्यथा पर विशेष ध्यान न दिया जाने के बावजूद विगत दशकों में हुए उत्पीड़न" शास्त्र विकास के दण्ड–विधि प्रकाशकों को यह सोचने के लिए विवश कर दिया कि, अपराध–पीड़ित के अधिकारों एवं हितों के संरक्षण के लिए विधिक प्रयास किये जाने की आवश्यकता है। इस दिशा में दक्षिण ऐशियाई देशों में संगठन योगदान महत्वपूर्ण रहा है क्योंकि इसी संगठन के प्रयासों से इन देशों में अपराध पीड़ितों के संरक्षण एवं पूनर्वास की योजनाएँ लागू की गई तथा उन्हें आपराधिक न्याय व्यवस्था में समाविष्ट किया। इन योजनाओं से प्रेरणा लेते हुए अनेक देशों ने अपराधी पीड़ित के बीच मध्यस्थता तथा आपसी वार्तालाप द्वारा मामलों को निपटाने तथा प्रतिकर की राशि का निर्धारण कर अपराधी द्वारा पीड़ित को उसका संदाय किये जाने की विधिक प्रक्रिया को अपनाया है। राष्ट्र संघ द्वारा अपराध–पीड़ितों के अधिकार तथा पुनर्स्थापन संबंधी घोषणापत्र पर में भी अपराध और पीड़ित पक्षकार के मध्य आपसी वार्तालाप एवं समझौते द्वारा पीड़ितों की व्यथा के निवारण तथा प्रतिकर विनिश्चित किये जाने पर बल दिया गया था।

भारत में अपराध पीड़ितों के लिए प्रतिकरात्मक अनुतोष का विधायनी ढांचा दण्ड प्रक्रिया संहिता 1973, अपराधी पीरवीक्षा अधिनियम 1958 तथा मोटर यान अधिनियम 1968 में रेखांकित किया गया है। इनके अतिरिक्त अपराध–पीड़ित के लिए प्रतिकर की संविधानिक योजना उच्चतम न्यायालयों द्वारा समय–समय पर दिये गये वाद–निर्णयों में भी प्रतिबिम्बित होती है। उच्चतम न्यायालय ने अनुच्छेद 32, 136, एवं 142 के अंतर्गत याचिकाओं पर दिये गये अपने

निर्णयों में अपराधी या सरकार या दोनों को निदेशित किया है कि, वे अपराध–पीड़ित को क्षतिपूर्ति के रूप में एक निश्चित धनराशि का प्रतिकर के रूप में भुगतान करें। इसी प्रकार के प्रतिकर मूल अधिकारों या नीति–निदेशंक सिद्वांतों के निर्वचन संबंधी प्रकरणों में न्यायालय द्वारा आदेशित किये गये है।

दण्ड प्रक्रिया संहिता, 1973 की धारा 357 की उपधारा (1) एवं (3) के अधीन विचारण न्यायालयों को यह शक्ति प्राप्त है कि, वह अपराध से पीड़ित व्यक्ति या पक्षकार को प्रतिकर दिलवा सकते है जबकि इसी प्रकार की शक्ति अपीलीय तथा पुनर्विलोकन न्यायालय को उपधारा (4) के अधीन प्राप्त है। न्यायालय यदि उचित समझे तो अपराधी से जुर्माने के रूप में वसूल की जाने वाली पूरी या आंशिक रकम का प्रतिकर के रूप में पीड़ित को सन्दाय किये जाने का आदेश पारित कर सकता है।

धारा 357 दं.प्र.सं. के अंतर्गत आदेशित प्रतिकर मृत्यु, शारीरिक उपहति, क्षतिपूर्ति, संपत्ति को नुकसानी या मुकदमें के हर्जे–खर्चे के लिए दिलाया जा सकता है।

उपधारा (3) के अनुसार विचारण न्यायालय को यह शक्ति भी प्राप्त है कि, अपराधी को जुर्माने से दण्डित नहीं किये जाने पर भी उसे पीड़ित पक्षकार को प्रतिकर देने के लिए बाध्य कर सकेगा।

इसी प्रकार की प्रतिकर व्यवस्था ऐसे पीड़ितों के प्रति भी लागू होगी जो अवैध रूप से गिरफ्तार किये गये है या जिनका निरोध या अभिरक्षा अवैध है।

जहाँ अभियुक्त को परिवाद के आधार पर किसी असंज्ञेय अपराध के लिए सिद्वदोष किया गया हो, न्यायालय उसे आदेशित कर सकता है कि, वह परिवादी को प्रतिकर का भुगतान करे, या इसमें व्यतिक्रम की दशा में कारावास की सजा भुगते जो तीस दिनों से अधिक नहीं होगी।

अभियुक्त से दण्ड के रूप में वसूले जाने जुर्माने की राशि जिसकी पूरी या आंशिक राशि पीड़ित को देय है, यदि अभियुक्त द्वारा जमा नहीं की जाती तो इसे उसकी संपत्ति को बेचकर या कुर्क करके राजस्व के बकाया की वसूली की भांति वसूल किया जाएगा।

अपराध से पीड़ित पक्षकार को समुचित प्रकरणों में प्रतिकर के रूप में अनुतोष दिये जाने के प्रावधान अपराधी परिवीक्षा अधिनियम 1958 की धारा 5(1) में उपबंधित है। इस धारा के अनुसार जब न्यायालय किसी अभियुक्त को इस अधिनियम की धारा 3 या धारा 4 का लाभ देते हुए परिवीक्षा पर छोड़ जाने का आदेश देता है तो यदि वह उचित समझे तो यह भी आदेशित कर सकता है कि परिवीक्षा के लाभ पर छोड़ा गया अपराधी, पीड़ित पक्षकार को प्रतिकर की राशि का भुगतान करे। यह प्रतिकर पीड़ित को कारित क्षतिपूर्ति के रूप में देय होगी या कार्यवाही के हर्जे–खर्चे के रूप में दिखाई जा सकेगी।

अभियुक्त द्वारा कारित मोटर यान दुर्घटना के शिकार हुए पीड़ित पक्षकार या उसकी मृत्यु की दशा में उसके विधिक प्रतिनिधियों को अभियुक्त से मुआवजे के रूप में प्रतिकर के लिए दावा करने का अधिकार अधिनियम की धारा 5 में उपबंधित है। तथापि प्रतिकर का आदेश पारित करने की शक्ति केवल विचारण न्यायालय को ही प्रदत्त है, अतः किसी न्यायालय या अधिकरण इस हेतु आदेश पारित नहीं कर सकेगा।

अपराध के पीड़ित पक्षकार को प्रतिकर दिलाकर उसकी क्षतिपूर्ति कराने में न्यायपालिका की भूमिका भी महत्वपूर्ण रही है। विगत तीन दशकों से उच्चतम न्यायालयों ने अपराध पीड़ित को प्रतिकरात्मक न्याय दिलाने की ओर विशेष ध्यान दिया है ताकि जन सामान्य का न्यायालयों तथा न्यायपालिका के प्रति विश्वास बना रहे। इसमें लोकहित याचिकों पर दिये न्याय–निर्णयों का विशेष योगदान रहा है। उच्चतम न्यायालय द्वारा ऐसे अनेक महत्वपूर्ण दिशा–मूलक निर्णय दिये गए है जिन्होंने पीड़ितों के प्रतिकरात्मक अनुतोष को आपराधिक न्याय प्रणाली का एक अभिन्न अंग का दर्जा दिलाया है। इनसे यह स्पष्ट संकेत मिलता है कि न्यायपालिका अपराध–पीड़ितों के अधिकारों की संरक्षता के प्रति कृत संकल्पित है।

अपराध–पीड़ित को प्रतिकर दिलाये जाने के संबंध में सर्वप्रथम न्यायिक निर्णय संभवतः बिहार बन्दी अंधीकरण का प्रकरण है जिसमें पुलिस ने अभिरक्षाधीन बन्दियों से संस्वीकृति उगलवाने के लिए उनकी आँखों में सुइयाँ चुभोकर तथा एसिड डालकर उन्हें अंधा कर दिया। इसके विरूद्ध एक समाजसेवी अधिवक्ता श्रीमती हिंगोरानी ने जनहित याचिका के माध्यम से पुलिस की

इस निर्दयता की ओर उच्चतम न्यायालय का ध्यान आकृश्ट किया तथा पीड़ित बन्दियों के उचित प्रतिकर दिये जाने के माँग की क्योंकि राज्य पुलिस द्वारा उक्त बन्दियों के प्राण एवं दैहिक स्वतंत्रता के मूल अधिकार का हनन किया था जो इन पीड़ितों को संविधान के अनु. 21 के अधीन प्राप्त था। उच्चतम न्यायालय ने इस प्रकरण को खत्री बनाम बिहार राज्य के वाद के रूप में विनिश्चित करते हुए राज्य को आदेशित किया कि, पीड़ितों को तत्काल रिहा किया जाए तथा प्रत्येक के नेत्र परीक्षण तथा चिकित्सीय उपचार की समुचित व्यवस्था राज्य स्वयं अपने खर्चे पर करें और उन्हें क्षतिपूर्ति के रूप में प्रतिकर का भुगतान करें। न्यायालय ने अपने निर्णय में यह भी आदेशित किया कि इस अमानवीय अपराध के लिए दोषी पुलिस कर्मियों के विरूद्व राज्य सरकार कठोर कार्यवाही कर उन्हें दण्डित करें तथा ऐसे अपराधों की पुनरावृत्ति न हो।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1) यादव लेखराम मानव व्यवहार एवं मनौविज्ञान प्रथम संस्करण, 1999 पृष्ठ 246

2) डॉ. बघेल डी.एस. अपराध शास्त्र विवेक प्रकाशन दिल्ली दसवां संस्करण 2001 पृष्ठ 535

3) भारत का संविधान डॉ. जय नारायण पाण्डेय, संस्करण 39, 2006, सेन्ट्रल लॉ एजेंसी इलाहाबाद पृष्ठ 243

4) भारत का संविधान डॉ. डी.डी. बसु, संस्करण 8, 1998, दिल्ली 168

5) भारत का संविधान जयजयराम उपाध्याय, संस्करण 4, 2008, सेन्ट्रल लॉ एजेंसी इलाहाबाद 265

6) दण्ड प्रक्रिया संहिता सूर्य नारायण मिश्रा, संस्करण 3, 2011, सेन्ट्रल लॉ एजेंसी इलाहाबाद 296

ISSN : 2394-3580 Swadeshi Research Foundation Vol. – 6, No. - 7 May 2019
A Monthly Journal of Multidisciplinary
International Peer Refereed, Review, Indexing & Impact factor-4.2 Research Journal

भारतीय जीवन बीमा निगम की स्थापना का विश्लेषणात्मक अध्ययन

संगीता पंद्राम

(शोधार्थी)

स्वतंत्रता के समय भारत में अनेक बीमा कंपनियाँ कार्यरत थी लेकिन आर्थिक अनियमितताओं के कारण लोगों में इनके प्रति संशय था। इन्हीं अनियमितताओं को नियंत्रित करने के लिए केन्द्रीय सरकार ने एक अध्यादेश जारी करके तत्काल सभी भारतीय और विदेशी बीमा संस्थाओं का भारत से संबंधित जीवन बीमा का कारोबार अपने हाथों में लेकर जीवन बीमा का राष्ट्रीयकरण 19 जनवरी 1956 को किया गया।

सम्पूर्ण विश्व में भारत ही प्रथम राष्ट्र था, जिसमें बीमा व्यवसाय का राष्ट्रीयकरण किया गया था। राष्ट्रीयकरण के पीछे अनेक कारण थे राष्ट्रीयकरण की घोषणा करते हुए तत्कालीन वित्तमंत्री सी.डी. देशमुख ने निम्नलिखित विचार व्यक्त किये थे –

''समाजवादी राष्ट्र की स्थापना करने के मार्ग में जीवन बीमा का राष्ट्रीयकरण एक और महत्वपूर्ण कदम है। द्वितीय पंचवर्षीय योजना के लक्ष्य की प्राप्ति में यह कदम बहुत सहायक सिद्ध होगा। हमारे ग्रामीण एवं पिछड़े क्षेत्रों में रहने वाले लाखों नागरिकों के लिए जीवन बीमा का राष्ट्रीयकरण एक ऐसी नई आशा का संचार करेगा, जिसके आधार पर सुरक्षित आर्थिक जीवन का निर्माण किया जा सकता है। राष्ट्रीयकरण का विचार जनता की सच्ची सेवा की उच्च भावना से उत्पन्न हुआ है।''

बीमा व्यवसाय के राष्ट्रीयकरण के निर्णय के पश्चात् साधारण बीमा को चार कंपनियों में विभक्त किया गया और राष्ट्रीयकृत जीवन बीमा के व्यवसाय के संचालन हेतु एक पृथक निगम की स्थापना करना उचित समझा गया। इसी आवश्यकता की पूर्ति हेतु संसद द्वारा 18 जून 1956 को एक अधिनियम पारित हुआ, जिसे 'जीवन बीमा निगम अधिनियम 1956 कहा जाता है। यह अधिनियम 1 जुलाई 1956 से प्रभावी हुआ। इसी अधिनियम के अन्तर्गत 1 सितम्बर 1956 को भारतीय जीवन बीमा निगम की स्थापना हुई।

जीवन बीमा निगम की स्थापना 1 सितम्बर 1956 को निम्न उद्देश्यों के साथ की गई थी –

1). जीवन बीमा का विस्तार करना – विशेष रूप से ग्रामीण क्षेत्रों में।
2). बीमा से जुड़ी हुई बचतों को पर्याप्त रूप से आकर्षक बनाते हुए लोगों को अधिकाधिक बचत करने के लिए प्रेरित करना।
3). निवेशकों तथा सम्पूर्ण समुदाय की पूँजी को राष्ट्रीय हितों तथा आकर्षक वापसी के दायित्वों को ध्यान में रखते हुए सर्वोत्तम लाभकारी योजनाओं में लगाना।
4). इस बात का पूरा ध्यान रखते हुए कि, यह धन पॉलिसीधारकों का है, अत्यधिक मितव्ययिता के साथ व्यापार करना।
5). बीमित व्यक्तियों की वैयक्तिक एवं सामूहिक क्षमताओं के अनुसार उनके न्यासधारियों की तरह कार्य करना।
6). बदलते हुए सामाजिक एवं आर्थिक वातावरण में सम्पूर्ण समुदाय की विभिन्न आवश्यकताओं को जीवन बीमा के द्वारा पूर्ण करना।
7). कुशल सेवा प्रदान करने के लिए निगम के सभी कर्मचारियों को भागीदार बनाना।
8). निगम के उद्देश्यों की पूर्ति के लिए निगम के सभी अभिकर्ताओं तथा कर्मचारियों में सहयोग, गौरव एवं कार्य संतुष्टि की भावना का विकास करना।

भारतीय जीवन बीमा निगम का कार्य उसकी स्थापना के उद्देश्यों की पूर्ति करना है। इसका प्रमुख कार्य देश एवं विदेश में बीमा का प्रचार–प्रसार करना तथा व्यावसायिक सिद्धांतों के आधार पर बीमा का संचालन करना है।

भारतीय जीवन बीमा निगम अधिनियम, 1956 की धारा 6 के अनुसार जीवन बीमा निगम के प्रमुख कार्य निम्नानुसार हैं –

1. भारत एवं भारत के बाहर जीवन बीमा व्यवसाय करना।

ISSN : 2394-3580 Swadeshi Research Foundation Vol. – 6, No. - 7 May 2019
A Monthly Journal of Multidisciplinary
International Peer Refereed, Review, Indexing & Impact factor-4.2 Research Journal

2. पूँजी शोधन व्यवसाय, निश्चित जीवन वृत्तियों का व्यवसाय अथवा जीवन बीमा व्यवसाय से संबंधित पुनर्बीमा करना।

3. निगम के कोषों का विनियोग करना, विनियोगों की सुरक्षा करना, विनियोगों को समय पर वसूल करना, प्रतिभूति के रूप में प्राप्त सम्पत्ति का प्रबंध करना तथा आवश्यकता पड़ने पर सम्पत्ति को बेचकर धन वसूल करना।

4. निगम के व्यवसाय के लिये किसी सम्पत्ति को खरीदना, रखना तथा उसे बेचना।

5. यदि निगम के हित में हो तो भारत से बाहर किये गये जीवन बीमा व्यवसाय का किसी भी व्यक्ति या व्यक्तियों को हस्तान्तरित करना।

6. किसी चल या अचल सम्पत्ति की जमानत पर या अन्य किसी प्रकार से धन प्रदान करना या ऋण देना।

7. धन उधार लेना या किसी अन्य प्रकार से धन प्राप्त करना।

8. कोई भी ऐसा अन्य कार्य करना जो किसी ऐसी संस्था की सहायक संस्था द्वारा किया जा रहा था, जिसका व्यवसाय निगम को हस्तांतरित कर दिया गया है।

9. कोई भी अन्य ऐसा व्यवसाय करना जो निगम के व्यवसाय के साथ सुगमतापूर्वक किया जा सकता हो अथवा जिससे निगम को प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप से लाभ होता हो।

10. वे सभी कार्य करना जो निगम की शक्तियों के क्रियान्वयन से संबंधित एवं प्रासंगिक है।

अधिनियम में यह कहा गया है कि, निगम को ये सभी कार्य जहाँ तक संभव हो व्यावसायिक सिद्धांतों के आधार पर ही करना चाहिए।

एक संगठन विभिन्न कार्यो का समूह, किए जाने वाले विभिन्न कार्यकलापों की जानकारी प्राप्त कर विभिन्न विभागों व अनुभागों को बनाया जाता है, जिससे की निरीक्षण में आसानी हो और विभागीय व्यक्ति अपनी जिम्मेदारी को सरलता से पूरा कर सके। जीवन बीमा व्यवसाय के राष्ट्रीयकरण की घोषणा के बाद लगभग साढे सात महीनों तक इसका संचालन केन्द्रीय वित्त विभाग के हाथों में ही रहा है। किंतु जीवन बीमा व्यवसाय को समुचित रूप से संचालित करने के लिए 1 सितम्बर 1956 को एक निगम की स्थापना की गई, जिसका नाम भारतीय जीवन बीमा निगम रखा गया। यह निगम एक समामेलित सार्वजनिक निगम है। इसका मुख्यालय मुंबई में स्थित है। इसका सरकार से पृथक वैधानिक अस्तित्व है। यह वे सभी कार्य कर सकता है जिन्हें करने की शक्ति इसे अधिनियम के अंतर्गत प्रदान की गई है। इस निगम की सार्वमुद्रा है यह निगम अन्य समामेलित संस्थाओं की तरह ही सम्पत्ति खरीद सकता है, बेच सकता है, अपने नाम में रख सकता है, दूसरों पर वाद प्रस्तुत कर सकता है। दूसरे भी इस पर वाद प्रस्तुत कर सकते हैं।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. आर. एस. शर्मा., इंश्योरेंस प्रिंसिपल्स एण्ड प्रेक्टिस, चतुर्थ संस्करण

2. के. एस. एन. मूर्छी. मार्ड लॉ ऑफ इंश्योरेंस, प्रथम संस्करण 1978

3. सर विलियम बेरिज, इं" योरेंस फॉर ऑल एण्ड एवरीथिंग, 1924

4. सर्राफ डी. एन., लॉ ऑफ कन्ज्यूमर प्रोटेक्शन एन इण्डिया, 1990